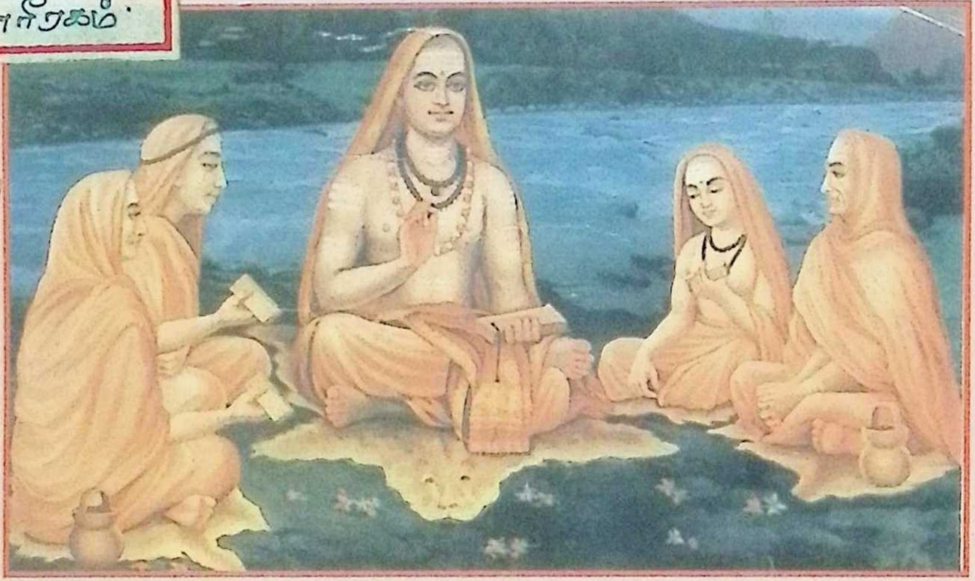
॥ श्री अभिनवचन्द्रशेखरो विजयतेतराम् ॥



श्री देवानुग्रहत्रिदशकमहोत्सवपावनप्रसंगोपरि प्रकाशितः
श्री कैलासविद्यालोकस्य त्रिषष्ठितमः (६३)सोपानः ।

श्री सर्वज्ञात्ममुनिविरचित(अन्वयाङ्क संस्करण) संक्षेपशारीरक मूलपाठः।

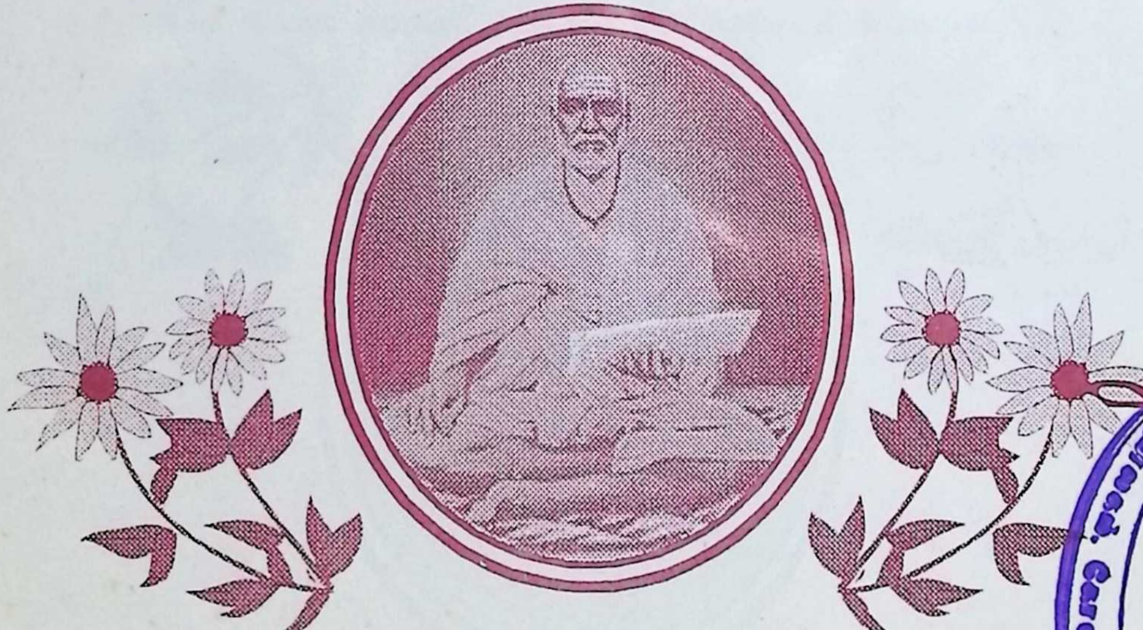
निर्देशक : श्री कैलासपीठाधीश्वर परमादर्श आचार्य महामण्डलेश्वर स्वामी विद्यानन्द गिरिजी महाराज

संपादक : ब्र. विष्णुप्रकाशजी (म. ह. दवे)

21-22

சம்க்ஷேப சாஸ்திரம் மூலபாடம்

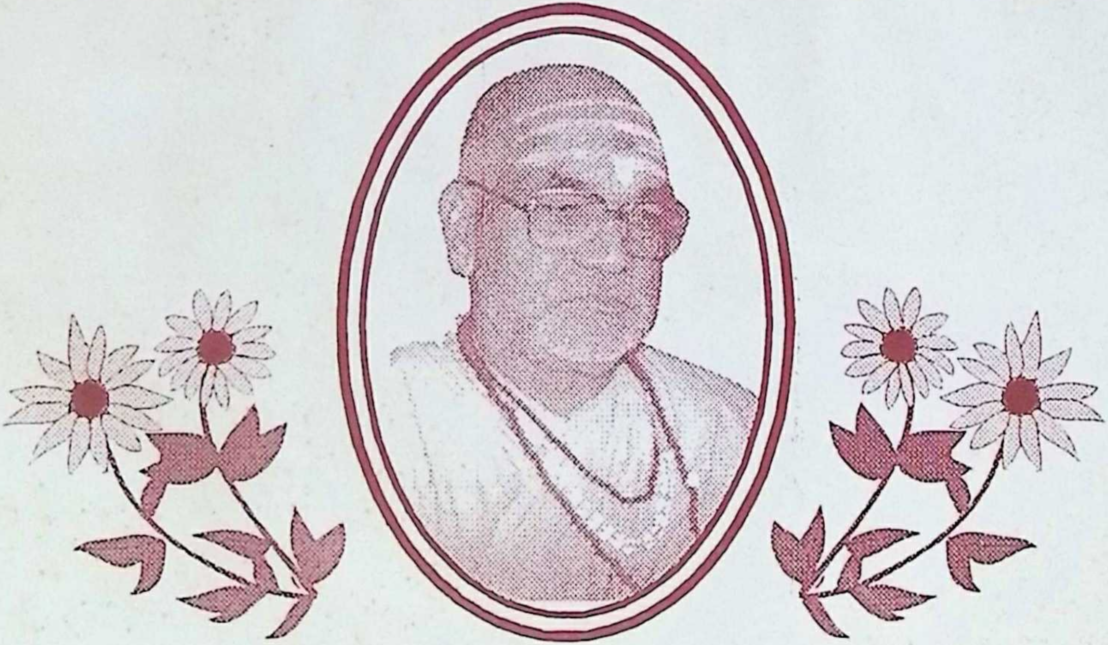
வெளியீடு
கைலாஸ் ஆச்ரமம்
[illegible]



श्री कैलासाश्रम के संस्थापक अनन्त श्री स्वा. धनराज गिरिजी महाराज महामण्डलेश्वर प्रथम पीठाधीश्वर



अनन्त श्री स्वामी गोविन्दानन्द गिरिजी महाराज महामण्डलेश्वर चतुर्थ पीठाधीश्वर



श्री कैलासपीठाधीश्वर परमादर्श आचार्य महामण्डलेश्वर स्वामी विद्यानन्द गिरिजी महाराज



अनन्त श्री स्वामी विज्ञानानन्द सरस्वतीजी महाराज

ॐ

दिशन्तु शं मे गुरुपादपांसवः

विगत तीस वर्षों से ब्रह्मविद्यापीठ श्री कैलास आश्रम में ग्रन्थों का प्रकाशनकार्य अनवरत रूप से चल रहा है। देवानुग्रह त्रिदशकमहोत्सव प्रसङ्ग पर श्री संक्षेपशारीरक को विभिन्न चार संस्करणों में प्रकाशित करनेका संकल्प मन में हुआ है। उनमें से प्रस्तुत प्रथम संस्करण " श्लोकान्वयाङ्क शीर्षकयुतम् संक्षेपशारीरकम् " मूलपाठको पाठकों के समक्ष रखने में हमें अपार प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है।इसमें श्लोकनिहितवाक्यों को समझाने के लिए अन्वयक्रम से अङ्क दिया गया है ,जीससे तात्पर्य का ज्ञान भी पाठक सहज में ही कर लेंगे, तथा अन्य विद्यार्थियों को करा सकेंगे। तात्पर्य बोध के लिए प्रत्येक श्लोक के शिरोभाग में शीर्षक दिया गया है ,जिससे तात्पर्य का ज्ञान भी पाठक सहजमें ही कर लेंगे।छन्दों का नाम देने से छन्दविद् विद्वान् श्लोक का उच्चारण वृत्तक्रम से कर सकेंगे तथा दूसरों को भी करा सकेंगे। अतः प्रतिश्लोकोपरिभाग में वृत्त का सङ्केत कर दिया गया है। ग्रन्थरचयिता परमश्रद्धा- स्पद श्री सर्वज्ञात्ममुनि का कोई प्रामाणिकचित्र उपलब्ध न हो सका, अतः इस अभिनव प्रकाशन में हम उसे न दे सके, जिस बात का खेद हमारे मन में है, जिसका परिमार्जन हमनें मुखर चार शिष्यों सहित भगवत्पाद श्री आदि शङ्कराचार्य का चित्र दे कर किया है।

इस प्रकाशन के मूल प्रेरक श्री कैलास आश्रम के चतुर्थ पीठाधीश्वर भाष्यपरिष्कर्ता अनन्त श्री स्वामी गोविन्दानन्द गिरिजी महाराज हैं, जिन्होंने मधुसूदनीटीका सहित संक्षेपशारीरक के उपर अनुपम टिप्पणियाँ लिखी है। वह ग्रन्थ सटिप्पणसंस्करण के रूप में प्रकाशित होगा। महाराजश्री की स्वहस्तलिखित सटिप्पण संक्षेपशारीरक पुस्तक हमें तब दृष्टिगोचर हुई, जब कुछ वर्ष पूर्व आचार्य विष्णुप्रकाशजी अपने विद्यागुरु स्वामी विज्ञानानन्द सरस्वतीजी को वडोदरा से ऋषिकेश लेकर आये। परमश्रद्धेय स्वामी गोविन्दानन्द गिरिजी महाराज ने स्वामी विज्ञानानन्द सरस्वतीजी को वह स्वहस्तलिखित पुस्तक दी थी, जिस आचार्यप्रसाद को उन्होंने देवतुल्य मानकर ससम्मान सुरक्षित रखा तथा उसके उपरान्त अपने आचार्यपीठ में आकर उसे समर्पित कर दिया, जिसे प्राप्तकर हम अपने हृदय में उससे उत्पन्न प्रसन्नता को रोक न सकें और उसके प्रकाशन का संकल्प मन में ठान लिया। पुस्तक में अंकित टिप्पणियाँ की प्रेसकापी करना तथा उसका यथास्थान संकेत करना , यह कार्य वास्तव में बडा ही दुष्कर था जिस कार्य को सहर्ष आचार्य विष्णुप्रकाशजी ने अपने हाथों में लिया। उक्त विभिन्न चार संस्करणों में प्रकाशित होने वाली संक्षेपशारीरक की पुस्तकों के निमित्त अर्थसंग्रह करना भी कोई सरल नहीं था। परंतु महर्घता के युग में यह कठिन कार्य तब सुकर हो गया , जब वडोदरा निवासी भक्तजन इस कार्य में सहयोग देने के लिए सामने आ गये। ये सभी धन्यवाद तथा आशीर्वाद के पात्र है।

इन सभी बातों के बावजूद भी संस्कृतभाषा से अनभिज्ञ अथवा संस्कृत का अल्पज्ञान रखनेवालों के लिए यह ग्रन्थ अनुपयुक्त ही था, जिस न्यूनता का परिमार्जन हमने सान्वयार्थ ललिताव्याख्या लिखकर किया है। जो यथा समय ललितासंस्करण तथा सटिप्पणसंस्करण में प्रकाशित होगी। हम इस कार्य में कितना सफल हो पाये हैं , इसमें तो पाठक ही प्रमाण हैं।

अन्ततः इन सभी कार्यों का सर्वाधिक श्रेय श्री कैलास आश्रम के अधिष्ठातृदेव तथा पूर्वाचार्यों को ही जाता है। हम अपनी इन नूतन कृतियों को उनके पावन चरणों में समर्पित कर परम हर्ष का अनुभव कर रहे हैं। इत्यों शम्।

अक्षय तृतीया
वि.सं-२०५६ ; शाङ्कराब्द-१२१२

भगवत्पादीयः
महामंडलेश्वर स्वामी विद्यानन्द गिरिजी।

प्रज्ञप्ति

श्रीमद् भगवत्पूज्यपाद शङ्कराचार्यजी ने अपने प्रकाण्ड विद्वान् शिष्यगण को कहा कि वेदान्त सिद्धान्तों का सरलता से क्रमशः अवगम हो ऐसा हृद्य ग्रन्थ की आवश्यकता है। भगवदिच्छा को शिरोमान्य रख के बहुत विद्वानों ने अति सुन्दर महान ग्रन्थों की रचना की। श्री सर्वज्ञातमुनि ने भी अति मञ्जुल पद्य में शाङ्करवेदान्त के गहन रहस्यों को बडी प्रासादिक शैली से प्रकट करनेवाला " संक्षेपशारीरकम् " नामक ग्रन्थ की रचना कर आचार्यश्री के चरणों में अति नम्रता पूर्वक समर्पित किया। उस को पढ़कर बडी प्रसन्नता और आश्चर्य सह आचार्यश्री बोल उठे की यह तो "बृहच्छारीरकम् " नाम के योग्य एक भव्य और हृदयंगम ग्रन्थ हुआ है। सूनकर श्री सर्वज्ञातमुनि ने सादर विनयसे उत्तर दिया कि " हे भगवन् आपने आप का लोकोत्तर महाग्रन्थ के लिए शारीरकभाष्यम् ऐसा नाम रखा है , तब आप का विनम्र शिप्य के ग्रन्थ का नाम जो दिया गया है वह उचित ही है "।

श्री भगवान् शङ्कराचार्यजी ने प्रसन्न हो कर आशीर्वाद दिया कि प्रस्तुत ग्रन्थ " बृहच्छारीरक " जितनी बृहत् प्रतिष्ठा पायेगा।यह संस्कृत पद्य में प्रसिद्ध प्राचीन किंवदन्ती भी हो सकती है। किन्तु यह ग्रन्थ का हार्द प्रकट करती है। ऐसा सुप्रसिद्ध अद्भुत वेदान्तप्रकरण ग्रन्थ का मूलपाठ प्रकाशित किया गया है। पाठकों की सुविधा के लिए

प्रत्येक श्लोक के वाक्य के उपर एक से आरंभ कर अन्वयाङ्क दिये गये हैं। इससे प्रायः श्लोकार्थ खुला हो जाता है।

देवानुग्रहत्रिदशकपावनमहोत्सव के पुण्य प्रसङ्ग पर अनन्त श्री विभूषित विद्वद्वर्य श्री कैलास पीठाधीश्वर परमादर्शाचार्य महामण्डलेश्वर श्रीमत्स्वामी विद्यानन्द गिरिजी महाराजश्री के परम अनुग्रह से प्रसिद्ध होता हुआ यह ग्रन्थ विद्वान् एवं विविदिषु उभय को उपयुक्त होगा। इति शम्।

संपादक

अक्षय तृतीया **ब्र. विष्णुप्रकाश**

शाङ्कराब्द-१२१२; वि. सं- २०५६ **(आचार्य कैलास आश्रम ऋषिकेष)**

प्रकाशकः

श्रीकैलास विद्याप्रकाशन; मुनि की रेती, ऋषिकेश(उ.प्र)

मुद्रकः

श्री कैलास भक्तमंडल : ३६: शारीरक, गुलमहोर पार्क, वडोदरा (गुजरात)

पथ एन्टरप्राईझ-16, संजयपार्क, कारेलीबाग,

वडोदरा(गुजरात) फोनः 0265-437723

प्रथमावृत्ति : २००० १९९९ ई०

मूल्यः सौ रुपये मात्र

पुस्तक प्राप्ति स्थान

श्री कैलास आश्रम, ऋषिकेश- २४९ २०१

श्री ब्रह्मानन्द आश्रम, ऋषिकेश- २४९ २०१

श्री कैलास आश्रम, उजेली उत्तरकाशी-२४९ १९३

श्री कैलास आश्रम, माडल टाउन, रोहतक-१२४ ००१

श्री कैलासधाम, नई झूसी, इलाहाबाद- २२१ ५०६

श्री कैलास विद्यातीर्थ (आदि शङ्कराचार्य स्मारक), ६, भाई वीर सिंह मार्ग , नई दिल्ली-११० ००१

श्री राधाकृष्ण मंदिर, ५३/१७, राजेन्द्र नगर, नई दिल्ली- ११००६०

श्री चैतन्य कुटिर, १८/७८, पंजाबी बाग, नई दिल्ली- ११० ०२६

श्री दशनाम सन्यास आश्रम, भूपतवाला , हरिद्वार -२४९ ४०१

श्री राम आश्रम, समाना मंडी(पटियाला), पंजाब- १४७ १०१

श्री कैलास विद्यातीर्थ, राजगीर (नालन्दा) बिहार- ८०३ ११६

श्री शंकर ब्रह्मकुटिर ८३-ए, द्वारीकापुरी, मुजफ्फरनगर - १२५००१

श्री नर्मदा सत्संग भवन, भिलाड़िया धाट - होशंगाबाद

श्री कैलास शांति सदन, सुभाष नगर, गुड़गाँव , हरियाणा.

श्री कैलास विद्यालोक चैतन्य सत्संग भवन, १३/३६१ गोविन्द नगर , कानपुर-६

श्री पी. एम. दवे, ३६: शारीरक , गुलमहोरपार्क , अकोटा , वडोदराः ३९०० २० (गुजरात).

om

SHLOKĀNVAYĀNKA - SHĪŚSHAKAYUTAM SAMŚSHEPASHĀRĪRAKAM-MULPĀTHA

PRESENTED BY

HIS HOLINESS SWAMI VIDYANAND GIRIJI MAHARAJ

VEDANTASARVADARSHANACHARYA

MAHAMANDALESHWARA & HEAD OF THE BRAHMVIDYAPITH KAILAS ASHRAM

RISHIKESH (HIMALAYAS) INDIA.

EDITED BY : **Br. VISHNUPRAKASH** (M.H. DAVE)Acharya Kailas Ashram Rishikesh.

ॐ

॥श्री संक्षेपशारीरकम् ॥

※ प्रथमोऽध्यायः ※

तत्पदार्थ निरूपणपूर्वक मङ्गलाचरण (पुष्पिताग्रा छन्द)

[1]अनृतजडविरोधि [2]रूप[3]मन्तत्रयमलबन्धनदुःखताविरुद्धम् ।
[4]अतिनिकट[5]मविक्रियं [6]मुरारेः [7]परमपदं [8]प्रणया[9]दभिष्टवीमि ॥१॥

त्वम्पदार्थ निरूपणपूर्वक मङ्गलाचरण (वसन्ततिलका छन्द)

[1]स्वाज्ञानकल्पितजगत्परमेश्वरत्वजीवत्वभेदकलुषीकृतभूमभावा ।
[2]स्वाभाविकस्वमहिमस्थिति[3]रस्तमोहा [5]प्रत्यक्[6]चितिर्विजयते [4]भुवनैकयोनिः ॥२॥

तत्त्वं पदार्थ के अभेदप्रतिपादनपूर्वक नमस्काररूप मङ्गलाचरण (उपजाति छन्द)

[1]प्रत्यक्प्रमाणक[2]मसत्यपराक्प्रभेदं [3]प्रक्षीणकारणविकारविभागमेकम् ।
[4]चैतन्यमात्रपरमार्थनिजस्वभावं [6]प्रत्यञ्च[7]मच्युतमहं [9]प्रणतोऽस्मि [8]नित्यम् ॥३॥

वाग्देवता के प्रति नमस्काररूप मङ्गलाचरण (उपजाति छन्द)

[5]औत्पत्तिकी [6]शक्ति[4]रशेषवस्तुप्रकाशने [3]कार्यवशेन [2]यस्याः ।
[7]विज्ञायते [1]विश्वविवर्तहेतो[11]र्नमामि [8]तां [10]वाच[9]मचिन्त्यशक्तिम् ॥४॥

विघ्नविनाशार्थ विघ्नेश्वर की स्तुतिरूप मङ्गलाचरण (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

[6]आरम्भाः [7]फलिनः [3]प्रसन्नहृदयो [1]य[2]श्चे[4]त्तिरश्चा[5]मपि
[1]नो [2]चे[3]द्विश्वसृजोऽ[5]प्ययलं [6]विफलता[7]मायान्त्यु[4]पायोद्यमाः ।
[4]विश्वैश्वर्य[1]मतो [5]निरङ्कुश[6]मभू[2]द्यस्यैव [3]विश्वप्रभोः
[7]सो[8]ऽयं [9]विश्वहिते [10]रतो [11]विजयते [12]विघ्नेश्वरो [13]विश्वकृत् ॥५॥

परात्पर गुरु वेदव्यासजी से अभीष्टार्थसिद्धि के लिए प्रार्थना (उपाजाति छन्द)

[3]वाग्[2]विस्तरा [1]यस्य [4]बृहत्तरंगा [7]वेलातटं [5]वस्तुनि [6]तत्त्वबोधः ।
[2]रत्नानि [1]तर्कप्रसरप्रकाराः [6]पुना[3]त्वसौ [4]व्यासपयोनिधि[5]र्नः ॥६॥

परमगुरु भाष्यकार के प्रति नमस्काररूप मङ्गलाचरण (उपजाति छन्द)

[4]वक्तार[5]मासाद्य [3]यमेव [1]नित्या [2]सरस्वती [7]स्वार्थसमन्विता[8]ऽऽसीत् ।
[6]निरस्तदुस्तर्ककलङ्कपङ्का [12]नमामि [9]तं [11]शङ्कर[10]मर्चिताङ्घ्रिम् ॥७॥

गुरुचरणरज की महिमा का वर्णन (वंशस्थ छन्द)

[2]यदीयसंपर्क[3]मवाप्य [1]केवलं [4]वयं [5]कृतार्था [7]निरवद्यकीर्तयः ।
[6]जगत्सु [8]ते [9]तारितशिष्यपङ्क्तयो [11]जयन्ति [10]देवेश्वरपादरेणवः ॥८॥

साधक अपनी क्षमताके अनुसार ही आचार्य-गुणों को धारण करता है (पुष्पिताग्रा छन्द)

[1]गुरुचरणसरोजसन्निधाना[2]दपि [3]वय[4]मस्य [5]गुणैकलेशभाजः ।
[6]अपि [2]महति [3]जलार्णवे [4]निमग्नाः [8]सलिल[9]मुपाददते [7]मितं [1]हि [5]मीनाः ॥९॥

ग्रन्थारंभ की प्रतिज्ञा (वसन्ततिलका छन्द)

[5]शक्तो [1]गुरो[2]श्चरणयो[3]र्निकटे [4]निवासा[6]न्नारायणस्मरणतश्च [7]निरन्तरायः ।
[9]शारीरकार्थविषयावगतिप्रधानं [11]संक्षेपतः [10]प्रकरणं [12]करवाणि [8]हृष्यन् ॥१०॥

अपने ग्रन्थकी समालोचना के लिए विद्वानों को आमन्त्रित करना (प्रमिताक्षरा छन्द)

पदवाक्यमाननिपुणा निपुणं विमृशन्त्विदं प्रकरणं मनसा ।
गुणदोषनिर्णयनिमित्ततया प्रथिता हि पण्डितजना जगति ॥११॥

विद्वानों की समीक्षा से हमें प्रसन्नता ही होगी (प्रहर्षिणी छन्द)

विद्वांसो यदि मम दोषमुद्गिरेयुः यद्वा ते गुणगणमेव कीर्तयेयुः ।
तुल्यं तद् बहु मनुते मनो मदीयं कष्टं तद् बत मनुते यदीह मन्दः ॥१२॥

मन्द के द्वारा की गयी समीक्षा उपहासास्पद ही होती है (वंशस्थ छन्द)

महामहिम्नामपि यश्चिकीर्षति स्वभावसंशुद्धतरं तिरो यशः ।
स नूनमाच्छादयितुं प्रवर्तते विवस्वतो हस्ततलेन मण्डलम् ॥१३॥

प्रतिबन्धक यथार्थ बोध का घातक होता है (प्रमिताक्षरा छन्द)

पुरुषापराधमलिना धिषणा निरवद्यचक्षुरुदयाऽपि यथा ।
न फलाय भच्र्छुविषया भवति श्रुतिसम्भवाऽपि तु तथाऽऽत्मनि धीः ॥१४॥

आत्मज्ञान फलवद् होता है (प्रमिताक्षरा छन्द)

[2]पुरूषापराधविगमे [3]तु [1]पुनः [4]प्रतिबन्धकव्युदसना[5]त्सफला ।
[2]मणिमन्त्रयो[3]रपगमे [5]तु [1]यथा [4]सति [6]पावका[8]द्भवति [7]धूमलता ॥१५॥

प्रतिबन्धक की निवृत्ति ही विचार का फल है (प्रमिताक्षरा छन्द)

[6]पुरुषापराधविनिवृत्तिफलः [1]सकलो [2]विचार [7]इति [8]वेदविदः ।
[4]अनपेक्षता[5]मनुपरुध्य [3]गिरः [12]फलव[13]द्भवे[11]त्प्रकरणं [10]त[9]दतः ॥१६॥

आत्मसाक्षात्कार केवल वेदान्तवाक्य से ही होता है (प्रमिताक्षरा छन्द)

[2]पुरुषापराधशतसंकुलता [4]विनिवर्तते [3]प्रकरणेन [1]गिरः ।
[4]स्वयमेव [2]वेदशिरसो [3]वचना[1]दथ [6]बुद्धि[7]रुद्भवति [5]मुक्तिफला ॥१७॥

ब्रह्मज्ञान की उत्पत्ति में वेदान्त स्वतःप्रमाण है (वसन्ततिलका छन्द)

[4]स्वाध्यायव[6]न्न [5]करणं [7]घटते [1]विचारो [8]ना[10]प्यङ्ग[9]मस्य [2]परमात्मधियः [3]प्रसूतौ ।
[5]सापेक्षताऽऽ[6]पतति [4]वेदगिरस्त[1]थात्वे [2]ब्रह्मात्मनः [3]प्रमितिजन्मनि [7]त[8]न्न [9]युक्तम् ॥१८

वेदवाक्य में सापेक्षताप्राप्ति का आशय बतलाते हैं (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

व्युत्पन्नस्य हि बुद्धिजन्म सहसा वाक्यश्रुतौ दृश्यते
वाक्यार्थे न ततोऽस्ति बुद्धिजनने मीमांसनव्यापृतिः ।
तेनार्थात्करणादिभावभजने　　मीमांसनस्याश्रिते
वेदार्थप्रमितौ तु वेदवचसः सापेक्षताऽऽयास्यति ॥१९॥

अज्ञान की आवरण एवं विक्षेप शक्ति का वर्णन (वसन्ततिलका छन्द)

आच्छाद्य विक्षिपति संस्फुरदात्मरूपं जीवेश्वरत्वजगदाकृतिभिर्मृषैव ।
अज्ञानमावरणविभ्रमशक्तियोगादात्मत्वमात्रविषयाश्रयताबलेन ॥२०॥

आत्मा में सामान्य-विशेषभाव अज्ञानारोपित है (वसन्ततिलका छन्द)

प्रत्यक्त्वमात्रविषयाश्रयताबलेन प्रत्यक्स्वरूपमपिधाय पराग्विवर्तैः ।
प्रत्यञ्चमद्वयमशेषविशेषहीनं विक्षिप्य तिष्ठति तदग्रहणं मृषैव ॥२१॥

प्रत्यक्षादि प्रमाणों से आत्मा में आनन्दरूपता की प्रतिज्ञा (वसन्ततिलका छन्द)

प्रत्यक्षलिङ्गवचनानि हि दर्शयन्ति निर्दुःखनित्यसुखविग्रहतां प्रतीचः ।

निर्दुःखनित्यसुखविग्रहभूम्नि नास्मिन् सम्भाव्यते दृशि पुरोदितमल्परूपम् ॥२२॥

आत्माकी सुखरूपता में प्रथम प्रत्यक्ष प्रमाण देते हैं (वसन्ततिलका छन्द)

प्राज्ञे सुखं समनुभूय समुत्थितः सन् सर्वप्रकारविषयप्रतिपत्तिशून्ये ।
सुप्तोऽहमत्र सुखमित्यनुसन्दधानः सर्वोऽपि जन्तुरवगच्छति तस्य सौख्यम् ॥

आत्मा की सुखरूपता में लिङ्गप्रमाण (वसन्ततिलका छन्द)

सर्वं यदर्थमिह वस्तु यदस्ति किञ्चित् पारार्थ्यमुज्झति च यन्निजसत्तयैव ।
तद्वर्णयन्ति हि सुखं सुखलक्षणज्ञास्तत्प्रत्यगात्मनि समं सुखताऽस्य तस्मात् ॥

आत्मा की सुखरूपता में व्यतिरेकी लिङ्ग (वसन्ततिलका छन्द)

प्रेमाऽनुपाधिरसुखात्मनि नोपलब्धः स प्रत्यगात्मनि कृमेरपि नित्यसिद्धः ।
प्रेयःश्रुतेरपि ततः सुखताऽनुमानं नैयायिकोऽपि न दृगात्मनि निह्नुवीत ॥२५॥

आत्मा की सुखरूपता में श्रुतिप्रमाण (वसन्ततिलका छन्द)

आनन्दविग्रहमपास्तसमस्तदुःखं वस्तुस्वभावपरिवर्जितसर्वभेदम् ।

आत्मानमध्ययनविध्यनुसारिणस्तं प्रत्यक्षतः श्रुतिशिरःसु समामनन्ति ॥२६॥

कारणसहित अध्यास का निरूपण (वसन्ततिलका छन्द)

अध्यस्तमल्पवपुरस्य न वास्तवं तत् प्रत्यक्पराग्द्वयमिदं हि परस्परस्मिन् ।
अध्यस्ततां प्रति समर्थमबोधमात्रमन्योऽन्यरूपमिथुनीकरणे निमित्तम् ॥२७॥

आत्मा में जातिसादृश्य का निराकरण (वसन्ततिलका छन्द)

सादृश्यधीप्रभृति न त्रितयं निमित्तमध्यासभूमिषु जगत्यनुगच्छतीदम् ।
ब्राह्मण्यजातिपरिकल्पनमात्मनीष्टं जात्या न साम्यमुपलब्धमिहास्ति किंचित् ॥

सादृश्य का निरूपण (वसन्ततिलका छन्द)

भूयस्त्ववत्तनुगुणावयवक्रियाणां सामान्यपूगवपुरुक्तमिहाभियुक्तैः ।
सादृश्यवस्तु न चिदात्मनि किंचिदत्र जात्यादिभिः सह निरीक्षितमस्ति तादृक् ॥२९॥

विषयगत दोष की भाँति करणदोष भी व्यभिचरित है (मालिनी छन्द)

विषयकरणदोषान्न भ्रमः संविदि स्यादपि तु भवति मोहात् केवलादेवमेव ।

भगवति परमात्मन्यद्वितीये विचित्रा द्वयमतिरियमस्तु भ्रान्तिरज्ञानहेतुः ॥३०॥

शून्यवाद आशङ्का का निरास (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

संसिद्धा सविलासमोहविषये वस्तुन्यधिष्ठानगी-
र्नाऽऽधारेऽध्यसनस्य वस्तुनि ततोऽस्थाने मोहान्संभ्रमः ।
केषांचिन्महतामनूनतमसां निर्बन्धमात्राश्रयादन्यो-
ऽन्याध्यसने निरास्पदमिदं शून्यं जगत्स्यादिति ॥३१॥

अधिष्ठान एवं आधारभेद न मानने पर आपत्तिप्रदर्शन (भुजङ्गप्रयातं छन्द)

अधिष्ठानमाधारमात्रं यदि स्यात् प्रसज्येत सत्यं तदा चोद्यमेतत् ।
न चैतत् सकार्यस्य मोहस्य वस्तुन्यधिष्ठानगीर्गोचरे लोकसिद्धा ॥३२॥

अधिष्ठान एवं आधार में भेद मानने पर भी अहङ्कार में चेतन का अध्यास मानना ही पडेगा फिर तो शून्यवाद प्रसक्ति पूर्ववत् रहेगी ही; इसका समाधान अग्रिम श्लोक से देतें हैं (वसन्ततिलका)

किंचानृतद्वयमिहाध्यसितव्यमिष्टं स्याच्चेत्तदा भवति चोद्यमिदं त्वदीयम् ।

सत्यानृतात्मकमिदं मिथुनं मिथश्चेदध्यस्यते किमिति शून्यकथाप्रसङ्गः ॥३३॥

अन्योऽन्याध्यास को प्रमाणित करने के लिए प्रसिद्ध "इदम् रजतम्" यह अध्यास स्थल दिखलाते है (प्रमिताक्षरा छन्द)

इदमर्थवस्त्वपि भवेद्रजते परिकल्पितं रजतवस्त्विदमि ।
रजतभ्रमेऽस्य च परिस्फुरणान्न यदि स्फुरेन्न खलु शुक्तिरिव ॥३४॥

इस प्रकार अन्योन्याध्यास में अनुमान प्रमाण बतलाने के बाद अब प्रत्यक्षप्रमाण भी दिखलाते हैं (प्रमिताक्षरा छन्द)

रजतप्रतीतिरिदमि प्रथते ननु यद्वदेवमिदमित्यपि धीः ।
रजते तथा सति कथं न भवेदितरेतराध्यसननिर्णयधीः ॥३५॥

अन्योन्याध्याससिद्धि के लिए अनुमान में अनुकूल व्याप्ति को दिखलाते हैं(वसन्ततिलका)

अध्यस्तमेव हि परिस्फुरति भ्रमेषु नान्यत् कथंचन परिस्फुरति भ्रमेषु ।
रज्जुत्वशुक्तिशकलत्वमरुक्षितित्वचन्द्रैकताप्रभृतिकानुपलम्भनेन ॥३६॥

रजतादि भ्रम की भाँति अहङ्काराध्यास में दो रूप प्रतीति का उपपादन (प्रमिताक्षरा छन्द)

[3]इतरेतराध्यसनमे[4]व [1]ततश्चितिचेत्ययो[2]रपि [6]भवे[5]दुचितम् ।
[1]रजतभ्रमादिषु [2]तथा[3]ऽवगमा[4]न्न [5]हि [2]कल्पना [1]गुरुतरा [3]घटते ॥३७॥

इस प्रकार उपपादित अन्योन्याध्यास का उपसंहार (प्रमिताक्षरा छन्द)

[2]अनुभूतियुक्त्यनुमितित्रितया[4]दितरेतराध्यसनसि[1]द्धिरतः ।
[3]चितिचेत्यवस्तुयुगल[5]स्य न [6]चेत् [1]त्रितयस्य [3]बा[2]धनमि[4]हापतति ॥३८॥

आत्मा में अधिष्ठानता के आक्षेप का समाधान (द्रुतविलम्बित छन्द)

[3]सदृशसांशपराग्विषयेषु [1]चेद् [6]भवति [4]दोषवशा[2]ज्जगति [5]भ्रमः ।
[8]भवतु [1]तत् [2]सकलं [6]वदितुं [5]वयं [4]तदुपचारवशाद् [3]दृशि [7]शक्नुमः ॥३९॥

आत्मा में विषयत्वादि मानने पर सिद्धान्तविरोध का परिहार (द्रुतविलम्बित छन्द)

[1]अपि [2]च [3]भाष्यकृदे[4]व [11]तदब्रवीद् [5]विषयताद्युपचारसमाश्रयात् ।
[9]स्ववचसै[10]व [6]न [7]तावदि[8]ति [15]ब्रुवन् [12]सकल[13]मात्मनि [14]विभ्रमसिद्धये ॥४०॥

अधिष्ठान का अध्यसमान के साथ एकज्ञानविषयत्व न रहने पर भी दोष नहीं है (प्रमिताक्षरा)

अपरोक्षरूपविषयभ्रमधीरपरोक्षमास्पदमवेक्ष्य भवेत् ।
मनसःस्वतो नयनतो यदि वा स्वपनभ्रमादिषु तथा प्रथितेः ॥४१॥

स्वप्नकाल में अनुभव से भी स्वतः अधिष्ठान का अपरोक्ष होता है (वंशस्थ छन्द)

स्वतोऽपरोक्षा चितिरत्र विभ्रमस्तथापि रूपाकृतिरेव जायते ।
मनोनिमित्तं स्वपने मुहुर्मुहुर्विनाऽपि चक्षुर्विषयं स्वमास्पदम् ॥४२॥

आरोप्य एवं अधिष्ठान में एकेन्द्रियग्राह्यत्व का व्यभिचार प्रदर्शन (वंशस्थ छन्द)

मनोऽवगम्येऽप्यपरोक्षताबलात् तथाऽम्बरे रूपमुपोल्लिखन् भ्रमः ।
सितादिभेदैर्बहुधा समीक्ष्यते यथाऽक्षिगम्ये रजतादिविभ्रमः ॥४३॥

अधिष्ठान में सांशत्त्व का होना भी अनिवार्य नही है (वसन्ततिलका छन्द)

ज्ञातेऽपि तावति ततोऽनतिरिक्तरूपेऽप्यज्ञानतः स्फुरणमस्फुरणं च दृष्टम् ।
दूरस्थयोर्ननु वनस्पतिवस्तुनोस्तद्भेदो न दृष्टिविषयोऽवगते च ते नः ॥४४॥

शुक्त्यादि में ज्ञात अंश से अज्ञात अंश का भेद अन्यथासिद्ध है (वसन्ततिलका छन्द)

[1]यत्रापि [7]दैवगति[8]तोऽ[6]स्त्यतिरिक्तभावो [3]रूपात्[2]प्रतीतिविषया[4]दितरत्र [5]रूपे ।
[1]तत्रा[5]प्यबोधघट[6]नां [8]प्रति [7]नाङ्गभाव[4]स्तस्या[3]तिरिक्तवपु[2]षोऽपुनरुक्तरूपात् ॥४५॥

भेद में अन्यथासिद्धत्व का पुनः समर्थन (उपजाति छन्द)

[3]शुक्तीदमंशात् [5]पृथग[1]प्रतीता [2]त्रिकोणता [7]स्यान्[6]ननु [4]वस्तुवृत्त्या ।
[1]तथाऽपि [2]तत्स्थं [5]न [3]पृथक्त्व[6]मिष्टं [4]तदप्रबुद्धत्वनिमित्तभूतम् ॥४६॥

पूर्वोक्त पक्ष का समर्थन (उपेन्द्रवज्रा छन्द)

[1]यतः [6]प्रपश्यन्[7]नपि [2]भेदिनः [4]स्वं [3]वनस्पते [5]रूपम[9]भि[8]न्नमस्मात् ।
[7]न [5]भेद[4]मस्य [8]प्रतिपद्यते[6]ऽक्ष्णा [3]वनस्पतेः [1]पार्श्वगतात्[2]परस्मात् ॥४७॥

अभेद दृष्टान्त द्वारा एक में ज्ञातत्व और अज्ञातत्व का उपपादन (वसन्ततिलका छन्द)

[11]सप्रत्यभिज्ञनयनोत्थधियो [5]घटादेः [6]स्वाभाविकात्[7]स्ववपु[8]षोऽनतिरिक्तरूपः ।
[9]स्थेमाऽ[10]प्रबोधविषयो [12]विषयत्व[13]मेती[14]त्यङ्गीकृतं [15]ननु [1]मिते[4]ऽपि [2]घटादिके[3]ऽर्थे ॥४८

दृष्टान्तसिद्ध अर्थ का समन्वय सिद्धान्त में करते हुए प्रसङ्ग का उपसंहार करते हैं (वसन्ततिलका)

एवं स्फुरत्यपि दृगात्मनि तत्स्वरूपेणास्फूर्तिभाजि परिकल्पिततोपपन्ना ।
स्वाज्ञानतो जगदिदं परमेश्वरोऽसौ जीवोऽहमित्यपि विभागवतोऽल्पकस्य ॥४९॥

अहङ्कारादि में मिथ्यात्व उपपादन का प्रयोजन (शालिनी छन्द)

अल्पं रूपं बन्धनं प्रत्यगात्मा बद्धोऽनेन स्वच्छचैतन्यमूर्तिः ।
स्वात्माज्ञानं कारणं बन्धनेऽस्य स्वात्मज्ञानात्तन्निवृत्तिश्च मुक्तिः ॥५०॥

बन्धन एवं उसके कारण अज्ञान में मिथ्यात्व का उपपादन (वसन्ततिलका छन्द)

अज्ञानमप्यविदुषोऽस्य न तु स्वतोऽस्ति चैतन्यनिर्विकृतिताद्वयताविरोधात् ।
अज्ञातताऽप्यनवबोधनिबन्धनैव नात्माश्रयत्वमपि चोदयितव्यमत्र ॥५१॥

अज्ञान से अज्ञान की कल्पना मानने पर आने वाले आत्माश्रयदोष का परिहार (वसन्ततिलका)

द्वारं तमोऽन्वयमपेक्ष्य दृशा हि दृश्यं सङ्गच्छते सकलमत्र न नो विवादः ।
मोहोऽपि दृश्यवपुरत्र च संवदध्वे तस्मात्तदन्वयनिमित्तमपीह मोहः ॥५२॥

प्राभाकरादि मत से आत्माश्रयत्व दोष का वारण (वसन्ततिलका छन्द)

[1]संविद्[3]धुरं [4]वहति [2]तद्विषयोपयुक्तां [5]स्वात्मन्य[6]पि [7]स्वरसतः [8]स्वकरूपसिद्धेः ।
[3]कार्यप्रपञ्चपरिकल्पनम[2]आत्ममोहात् [4]मोहप्रकल्पनमपीति [1]तथो[5]पपन्नम् ॥५३॥

सर्वसम्मति से आत्माश्रयत्व का वारण (वसन्ततिलका छन्द)

[1]आत्मा [5]प्रसाधयति [3]वेद्यपदार्थजातं [4]स्वात्मानमप्य[2]वगतिक्षमशक्तियोगात् ।
[3]स्वाज्ञानमे[1]व[2]मिदमा[4]त्मपरप्रक्लृप्तौ [5]शक्तं [6]भवेदिति[7] [8]न [9]किंचन [10]दौःस्थ्यम[11]स्ति ॥५४॥

संवित् एवं आत्मा को न मानने वाले के पक्ष में भी आत्माश्रयत्व का वारण देखा गया है (उपजाति)

[5]भेदं [6]च [7]भेद्यं [8]च [9]भिनत्ति [2]भेदो [1]यथैव [3]भेदान्तरम[4]न्तरेण ।
[5]मोहं [6]च [7]कार्यं [8]च [9]बिभर्त्ति [2]मोहस्[1]तथैव [3]मोहान्तरम[4]न्तरेण ॥५५॥

सूत्रकार ने भी बन्धनिवृत्ति का कारण ज्ञान को बतलाते हुए उक्त बातों का ही सङ्केत किया है (शालिनी छन्द)

[3]ब्रह्मज्ञानं [4]सूत्रयन् [5]सूत्रकारो [1]बन्धोत्पत्ते[2]र्हेतुविध्वंसनाय ।

एतत्सर्वं सूचयामास तस्मादेतत्सर्वं भाषते भाष्यकारः ॥५६॥

सूत्रकार तथा भाष्यकार द्वारा वर्णित अध्यास की चर्चा इस ग्रन्थारम्भ में शास्त्रसम्मत बतला रही है (स्रग्धरा छन्द)

तस्मादध्यस्तमेतत्सकलमपि दृशौ भूमरूपातिरिक्तं
रूपं स्वाज्ञानमात्रादिति भवति परब्रह्मधीबाध्यमेतत् ।
ईशित्रादिप्रभेदप्रतिहतिफलकज्ञानदौःस्थ्यापनुत्त्यै
श्रीमच्छारीरकार्थप्रकटनपटुताशालि शास्त्रं विदध्मः ॥५७॥

पूर्वमीमांसा से ब्रह्मविचार की अगतार्थता का निरूपण (वसन्ततिलका छन्द)

मीमांसितव्यमनयैव सदद्वितीयं मीमांस्यमेव च सदात्मतयाऽनयैतत् ।
ज्ञातं प्रयोजनमनेन पथेदमस्यास्तन्नान्तरीयकतया च तमोनिवृत्तिः ॥५८॥

पूर्वमीमांसा से गतार्थ होने के कारण ब्रह्म विचारणीय नहीं है, इस शङ्का समाधान (द्रुतविलम्बित)

न च गतार्थमिदं प्रतिभाति नो न हि विधेः पदमात्मसमीक्षणम् ।

न खलु यागददातिजुहोतिवत् पुरुषतन्त्रमिहात्मनिदर्शनम् ॥५९॥

अज्ञात ब्रह्म के ज्ञान को विधि विषय मानने पर दोष प्रदर्शन(द्रुतविलम्बित छन्द)

अपि च रूपितगोचरता विधेर्न परमात्मधियोऽस्ति च रूपणम् ।
अविदिते परमात्मनि तद्धियो न खलु रूपितता घटनान्विता ॥६०॥

ज्ञात ब्रह्म में विधिविषयत्व का निराकरण (द्रुतविलम्बित छन्द)

विदितता परमात्मन इष्यते यदि वृथा विधिरस्य धियो भवेत् ।
निखिलभेदनिदाननिवृत्तितो भवति तद्विषयादि च दुर्लभम् ॥६१॥

द्वितीयवर्णक का उपसंहार (द्रुतविलम्बित छन्द)

इति न धर्मविशेषसमर्पणं श्रुतिशिरोवचनैः क्रियते ततः ।
भवति धर्मविचारगतार्थताऽनवसरः परमात्मविचारणे ॥६२॥

वेदान्तवाक्यगत लिङादि-प्रयोग की व्यवस्था (स्रग्धरा छन्द)

अर्हाद्यर्थे च कृत्यस्मरणमभिमतं पाणिनेः प्रार्थनादौ

[1]लिङ्लोडादेश[2]श्च [3]वृत्तिः [7]प्रचुर[8]मभिमता [4]पाणिने[5]र्जैमिने[6]श्च ।
[1]तस्मा[5]द्वेदान्तवाक्ये [6]पठित[7]मपि [8]लिङाद्य[9]न्यथा [10]योजनीयं
[4]विध्यर्थासंभवेन [2]स्फुट[3]मुदितनयादे[11]तद[12]न्यागतार्थम् ॥६३॥

अधिकारी निरूपण (स्रग्धरा छन्द)

[1]एकाहाहीनसत्रद्वयविधिविहितानेककर्मानुभाव-
ध्वस्तस्वान्तोपरोधाः [3]कथमपि [2]पुरुषा[4]श्चिद् दिदृक्षां [5]लभन्ते ।
[1]यज्ञेनेत्यादिवाक्यं [3]शतपथविहितं [4]कर्मवृन्दं [5]गृहीत्वा
[2]स्वोत्पत्त्याम्नानसिद्धं [6]पुरुषविविदिषामात्रसाध्ये [7]युनक्ति ॥६४॥

ब्रह्मविचार के लिए जिज्ञासु का कर्तव्योद्बोधन (द्रुतविलम्बित छन्द)

[10]उपससाद [5]चतुष्टयसाधनो [4]निशितबुद्धि[3]रशुद्धिपरिक्षयात् ।
[6]विविदिषु[1]र्विहितै[2]र्विविधाध्वरै[7]र्विदितवेद्यतमं [9]विधिवद् [8]गुरुम् ॥६५॥

मुमुक्षु का स्वरूप वर्णन (औपच्छन्दसिकच्छन्द)

इह जगति हि सर्व एव जन्तुर्निरतिशयं सुखमुत्तमं ममास्तु ।
उपरमतु तथोपघातरूपं विषयजदुःखमिति स्पृहां करोति ॥६६॥

मोक्षाभिलाषी सभी हैं (औपच्छन्दसिकच्छन्द)

निरतिशयसुखं च दुःखजातव्युपरमणं च वदन्ति मोक्षतत्त्वम् ।
उभयमपि जनोऽभिवाञ्छतीति स्फुटतरमस्य सदाऽस्ति मोक्षवाञ्छा ॥६७॥

मोक्षसुख में प्रमाणका निरूपण (औपच्छन्दसिकच्छन्द)

उभयमपि परात्मनः स्वरूपं विमलचिदेकरसं स्वयंप्रकाशम् ।
इति भवति विना प्रमाणमस्मिन्नुदितनयादभिवाञ्छनोपपत्तिः ॥६८॥

मुमुक्षु का दौर्लभ्योपपादन(रथोद्धता छन्द)

कर्मकाण्डकृतबुद्धिशुद्धितस्तर्किते च खलु मोक्षवस्तुनि ।
अर्थिताऽस्य घटते प्रयोजकज्ञाननुन्नमनसो महात्मनः ॥६९॥

गुरुपसत्ति का उपपादन (रथोद्धता छन्द)

धर्मनिर्णयनिमित्तमिष्यते वेदवित्परिषदेव मानवे ।
तद्वदत्र गुरुणाऽस्य सङ्गतिस्तेन चास्य घटतेऽर्थिता गुरौ ॥७०॥

उत्तरमीमांसा में अधिकारी निरूपण का औचित्यप्रदर्शन (वसन्ततिलका छन्द)

यः कर्मकाण्डविषयेऽभिहितोऽधिकारी सोऽयं प्रवृत्तिषु निवृत्तिषु तुल्यरूपः ।
अत्राभिधित्सितविशेषणपूगयुक्तोऽसाधारणस्त्वभिमतः पुरुषो निवृत्तौ ॥७१॥

कर्माधिकारी की अपेक्षा वेदान्तश्रवणाधिकारी में वैलक्षण्यप्रदर्शन (वसन्ततिलका छन्द)

शास्त्रं प्रवृत्तिषु निवृत्तिषु तुल्यरूपं साधारणस्य पुरुषस्य पुराऽभ्यधायि ।
अस्योच्यते सकलकर्मनिवृत्तिभाजः सर्वं निवृत्तिविषयं श्रवणादिशास्त्रम् ॥७२॥

धर्ममीमांसा एवं ब्रह्ममीमांसा में विषयभेद के साथ साथ अधिकारी भेद भी आवश्यक है (स्रग्धरा)

शास्त्रद्वैविध्यदृष्टेर्द्विविधमधिकृतेर्भेदमप्याश्रयन्ते
तद्द्वैविध्योपलब्धेः पुरुषमधिकृतं शास्त्रयोर्भिन्नमाहुः ।
शास्त्रार्थद्वित्वहेतोः पुरुषमधिकृतं तद्गतं चाधिकारं

[8]नोचेद् [7]भिन्नं [9]प्रतीयुर्द्वि[2]विधमि[1]ह [4]वृथा [3]शास्त्र[5]मापद्यते हि ॥७३॥

ब्रह्म में निवृत्तिमात्र अर्थ का उपपादन (मालिनी छन्द)

[2]यमनियमविधानै[3]र्वाङ् मनःकायचेष्टा-
व्युपरमण[1]मशेषैः [4]कथ्यते [2]न [1]प्रवृत्तिः ।
[1]यदि [6]भवति [3]कदाचित्[4]काचि[2]दस्य [5]प्रवृत्तिः
[7]श्रुतिविहितनिवृत्तेः [6]कर्मणां [8]कत्थनं [9]स्यात् ॥७४॥

"श्रोतव्य"इत्यादिविधिच्छायाशास्त्र का तात्पर्यावबोधन (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

[4]औदासीन्यविशेषमेव हि [3]परब्रह्मात्मधीजन्मने
[5]शास्तीदं [2]श्रवणादिशास्त्र[1]ममुना [2]त्वा[4]क्षिप्यते [3]व्यापृतिः ।
[1]तां [2]तां [3]व्यापृतिमन्तरेण [8]घटते [4]सा [5]सा [7]न [6]शास्त्रार्थधी-
[1]रित्य[2]र्थाल्ल[3]शुनादिभक्षणगतौदासीन्यबोधादि[4]व ॥७५॥

श्रवणादि-शास्त्र में औदासीन्य बोधकत्व है (शालिनी छन्द)

औदासीन्ये बोधिते शास्त्रवृन्दैरर्थादस्मात्प्रच्युतस्यास्त्यनर्थः ।
इत्यालोच्य प्रच्युतेः प्रापकस्य प्राबल्येऽर्थे प्रातिलोम्यं विधत्ते ॥७६॥

प्रवृत्तिविधायक वाक्य में औदासीन्यबोधकत्व का उपपादन (शालिनी छन्द)

औदासीन्यं बोधयच्छास्त्रमेतन्नित्यं पथ्यं बोधयत्यस्य पुंसः ।
पथ्यादस्मात्प्रच्युतस्यास्त्यपथ्यं बुद्ध्वाऽपथ्यप्रातिलोम्ये यतेत ॥७७॥

श्रवणादि शास्त्र को निवृत्तिपरक न मानने पर पूर्वमीमांसा के साथ विरोधप्रदर्शन (वसन्ततिलका)

वृत्ता प्रवर्त्तकनिवर्त्तकशास्त्रसिद्ध्यै षष्ठे प्रवृत्तिविनिवृत्त्यधिकारिचिन्ता ।
अत्रैकमेव तु निवृत्त्यधिकारमार्गमाश्रित्य सूत्रकृदथात इति प्रवृत्तः ॥७८॥

शास्त्रविहित कर्म का ब्रह्ममीमांसा द्वारा निषेध मानने पर विरोधप्रदर्शन का समाधान (शालिनी छन्द)

औदासीन्यप्रच्युतेः प्रापकौ च रागद्वेषौ नापरो हेतुरस्ति ।
रागद्वेषप्रातिलोम्ये प्रवृत्तिरौदासीन्यप्रापणाच्छास्त्रतोऽर्थात् ॥७९॥

अदृष्टार्थक शौचादिबोधक शास्त्रवाक्य में भी उक्तरीति का प्रतिपादन (वैतालीय छन्द)

अशुचेः प्रतिषेधशास्त्रतो न भवत्येव हि वेदचिन्तनम् ।
श्रवाणादिनिवृत्तिशास्त्रतः स्वयमर्थादथ शौचमापतेत् ॥८०॥

यतियों के लिए चतुर्गुण शौच एवं चतुर्वण में भिक्षाटन का प्रतिपादन (वैतालीय छन्द)

अचतुर्गुणशौचवारणात् स्वयमेवास्य चतुर्गुणं भवेत् ।
अचतुर्ष्वशनस्य वारणात् स्वयमेवास्य चतुर्षु भोजनम् ॥८१॥

इस न्याय की योजना अन्यत्र भी करनी चाहिये (वैतालीय छन्द)

इति योजय सर्वमीदृशं कथितन्यायवशेन सादरम् ।
विधिहीननिवृत्तिशास्त्रतः कथितेऽस्मिन्नधिकारवर्त्मनि ॥८२॥

मतान्तर का प्रतिपादन (वैतालीय छन्द)

इति केचन वर्णयन्ति तद्विपरीतं प्रवदन्ति केचन ।
प्रविभज्य तदप्युदीर्यते निपुणाचार्यपरम्परागतम् ॥८३॥

प्रतिज्ञात अर्थ का विभाजन (वसन्ततिलका छन्द)

उत्सर्गतः सकलकर्मनिवृत्तिनिष्ठा संन्यासशास्त्रशतकोटिभिरर्पिताऽस्य ।
अस्ति प्रतिप्रसवशास्त्रमुखात्प्रतीता चेष्टाऽऽत्मबुद्धिपरिपाकफलाऽपि काचित् ॥

मोक्षशास्त्र में भी प्रवृत्ति एवं निवृत्ति की सम्भावना का प्रतिपादन (उपेन्द्रवज्रा छन्द)

यमस्वरूपा सकला निवृत्तिस्तथा प्रवृत्तिर्नियमस्वरूपा ।
निवर्त्तकादत्र यमप्रसिद्धिः प्रवर्त्तकात्स्यान्नियमप्रसिद्धिः ॥८५॥

शरीर एवं सभी इन्द्रियों संयमरूप निवृत्ति बाह्य है और आभ्यन्तर वस्तु को विषय करने वाली नित्य आत्मकूटस्थस्वरूपा निवृत्ति आभ्यन्तर है, इस प्रकार निवृत्ति के भी दो भेद हैं(वंशस्थ छन्द)

निवृत्तिरस्ति द्विविधा बहिःस्थिता शरीरसर्वेन्द्रियसंयमात्मिका ।
तथाऽपराऽभ्यन्तरवस्तुसंश्रया सदात्मकूटस्थचिदेकविग्रहा ॥८६॥

उक्त निवृत्तियों में विधेय-अविधेय का प्रतिपादन (उपेन्द्रवज्रा छन्द)

तयोस्तु बाह्या विधिशास्त्रलभ्या प्रयत्ननिर्वर्त्त्यतया प्रतीतेः ।
विधानशास्त्रं विरहय्य लभ्या चितिस्वरूपा त्वितरा निवृत्तिः ॥८७॥

दोनों निवृत्तियों के स्वरूप का वर्णन (उपजाति छन्द)

मायामयी बाह्यनिवृत्तिरिष्टा चितिस्वरूपा परमार्थसत्या ।
तयोर्निवृत्त्योश्च निवृत्तिशास्त्रं विधायकं बाह्यनिवृत्त्यपेक्षम् ।।८८।।

निवृत्तिशास्त्र में विधायकत्व मानने पर उत्थित शङ्का का समाधान (वंशस्थ छन्द)

प्रवृत्तिशास्त्रेण समेऽपि संमते निवृत्तिशास्त्रस्य विधेयबोधने ।
निवृत्त्यनुष्ठाननिबन्धनत्वतो निवर्तकं शास्त्रमिदं प्रचक्षते ।।८९।।

मीमांसाशास्त्र की सादृश्यापत्ति का समाधान (वसन्ततिलका छन्द)

शास्त्रद्वयेन परिदर्शितसाधनेन साध्यस्पृहापरवशः पुरुषो मुमुक्षुः ।
शुश्रूषते गुरुमथेत्युदितः स चात्र वेदान्तवाक्यविषयश्रवणाधिकारी ।।९०।।

अधिकारी निरूपण के बाद उसकी जिज्ञासा का क्रम बतलाते है (द्रुतविलम्बित छन्द)

स परिपृच्छति कोऽहमसौ च कः सहजमस्य च तस्य च किं पृथक् ।
उत तयोरभिदेश्वरजीवयोरिति च संशयसंकुलमानसः ।।९१।।

शिष्य की योग्यता की परीक्षा (वसन्ततिलका छन्द)

तीर्थेन तं विविदिषन्तमनन्यभक्तं संसारसागरभयातुरचित्तवृत्तिम् ।
एकं मुमुक्षुमधिकारिणमात्मतत्वज्ञाने समीक्ष्य गुरुराह दयाविधेयः ॥९२॥

अधिकारी के प्रति आचार्य उपदेश का प्रकार (वसन्ततिलका छन्द)

वक्ष्यामि वत्स तव वाञ्छितमत्यवस्थमत्यन्तमेव च हितं शृणु तन्मनस्कः ।
त्वं प्रत्यगव्यवहितं तव सुप्रसिद्धं ब्रह्माद्वितीयमुदितं च तदस्त्यजस्त्रम् ॥९३॥

आचार्य का शिष्य के प्रति तत्त्वज्ञान के लिए आश्वासन (वसन्ततिलका छन्द)

यद्यत्र पश्यसि विरोधमुदीरय त्वं सद्यस्ततः परिहराणि तमप्रयत्नात् ।
वाक्यं निरस्तसकलप्रतिबन्धकं सत् त्वां बोधयिष्यति करार्पितबिल्वतुल्यम् ॥९४॥

शिष्य का वाक्यार्थ में विरोध प्रदर्शन (वसन्ततिलका छन्द)

अत्राह सद्वयमहं मम रूपमीक्षे तच्चाद्वयं विगणयामि परोक्षमेव ।
पारोक्ष्यसद्वयविभागयुजोर्विरोधाद् वाक्यार्थबोधमतिदुर्लभमेव मन्ये ॥९५॥

अखण्डवाक्यार्थ में अनुपपत्ति का प्रदर्शन (वसन्ततिलका छन्द)

[2]यद्[3]वस्तु [4]सद्वयतया[5]ऽवगतं [1]स्वशब्दात् [1]तस्या[2]ऽद्वयत्व[3]मवगन्तु[4]मशक्य[5]मेव ।
[1]यद्[2]वस्तु [3]च [4]व्यवहितं [5]प्रतिपादितं [6]तत् [8]प्रत्त्यक्तया [11]न [7]तु [10]जनः [9]प्रतिपत्तु[12]मीशः ।।९६।।

शिष्य का अपने द्वारा उत्थापित शङ्का का समर्थन (वसन्ततिलका छन्द)

[2]आकाङ्क्षितं [6]भवति [3]पूरणशक्तियुक्तं [1]यत्[4]सन्निधौ [5]पतित[7]मस्य [8]हि [9]सङ्गतिः [10]स्यात् ।
[3]ना[4]काङ्क्षयैव [5]न [6]तु [7]सन्निधिनैव [8]वा [11]स्यात् [10]सम्बन्धिता हि [2]विरहय्य [1]पदार्थशक्तिम् ।।९७।

महावाक्य में योग्यता के अभाव के कारण शाब्दबोधता नहीं है (वसन्ततिलका छन्द)

[8]योग्यत्व[1]मत्र [9]न च [2]तत्त्वमसीति [3]वाक्ये [6]संबन्धितां [7]प्रति [5]पदार्थयुगस्य [10]भाति ।
[4]पारोक्ष्यसद्वयविभागविरोधहेतो[3]र्गौरश्व [4]इत्यभिहिते तु [1]यथै[2]व [5]वाक्ये ।।९८।।

तत्-त्वम्पद के वाच्यार्थ की भाँति लक्ष्यार्थ का अभेद भी सम्भव नहीं है (वसन्ततिलका छन्द)

[3]सो[4]ऽयं [5]गिरोरि[6]व [10]न [7]लक्षणयाऽपि [8]वृत्ति[9]र्मा[1]नान्तराधिगतिहीनतया[2]ऽत्मनि [11]स्यात् ।
[6]मानान्तराधिगतगोचर [7]एव [8]दृष्टः [5]शब्दप्रयोग [1]इह [3]लाक्षणिकस्[4]तु [2]लोके ।।९९।।

दोनों ही प्रकार से वाक्यार्थबोधनिरसनप्रसङ्गका उपसंहार (वसन्ततिलका छन्द)

तस्मादखण्डविषया न वचःप्रवृत्तिः संसर्गबोधनमपास्तमयोग्यभावात् ।
एवं न वाक्यगतशब्दसमन्वयोऽपि दूरे प्रमान्तरविरोधनिराससिद्धिः ॥१००॥

सिद्धार्थ ब्रह्म में वेदान्तवाक्यों की अप्रमाणता (वसन्ततिलका छन्द)

किंच प्रमान्तरमपेक्ष्य गिरः प्रवृत्तिः सिद्धेषु वस्तुषु जगत्युपलब्धपूर्वा ।
ब्रह्मात्मवस्तुनि तथा वचसः प्रवृत्तिर्युक्तात्मनस्तु फलवत्परिनिष्ठितत्वात् ॥१०२।

पूर्वश्लोकोक्त दृष्टान्त का दार्ष्टान्त में समन्वय प्रदर्शन (मन्दाक्रान्ता छन्द)

नद्यास्तीरे फलमिति गिरः सिद्धवस्तुप्रवृत्ते-
र्दृष्टा स्वार्थप्रमितिजनने स्वान्यमानव्यपेक्षा ।
तद्वद् ब्रह्मण्यपि तु वचसो वैदिकस्याभ्युपेया
तस्मादस्मिन्न खलु घटते मानभावः श्रुतिनाम् ॥१०२॥

सोऽयं देवदत्तः इस वाक्य में भी अखण्डार्थबोधकता का अभाव (वसन्ततिलका छन्द)

नाखण्डवस्तुविषया वचसः प्रवृत्तिर्लोकेऽपि दृष्टिपथमापतिता कदाचित् ।
नानापदार्थघटनाविषयत्वहेतोर्दूरेत्यता श्रुतिशिरोवचनेषु तस्याः ॥१०३॥

अखण्डार्थबोधकता की कल्पना असम्भव है(वसन्ततिलका छन्द)

आदाय मुख्यगुणलाक्षणिकप्रवृत्तीरर्थं समर्पयति शब्द इति प्रसिद्धम् ।
आस्वेष नान्यतमयाऽपि वदत्यखण्डं शब्दान्तरात्तविषयादधिकार्थवृत्तेः ॥१०४॥

पर्यायशब्दसमुदाय में वाक्यत्व का अभाव (वसन्ततिलका छन्द)

आधिक्यमुत्सृजति शब्दगणो निजेऽर्थे शब्दान्तरात्तविषयादिति मन्यमानाः ।
वाक्यत्वमेव पदजातगतं विहन्युर्न ह्यस्ति हस्तकरशब्दगतं तदेषाम् ॥१०५॥

अभिमतार्थ की दृष्टि से भी महावाक्य में अखण्डार्थबोधकता का निराकरण (वसन्ततिलका छन्द)

किंच स्वयंप्रभमलुप्तचिदेकरूपं सर्वप्रमाणविषयाद् बहिरभ्युपेत्य ।
आत्मानमात्मनि च शास्त्रमुदाहरन्तः सिद्धान्तमभ्युपगतं परिपीडयन्ति ॥१०६॥

चिदात्मा में वेदान्तवाक्यजनित संवित् की अपेक्षा नहीं है (वसन्ततिलका छन्द)

सर्वत्र वस्तुषु जडेष्वजडप्रकाशं कुर्वत्प्रमाणमिति संप्रतिपन्नमेतत् ।
ब्रह्मात्मवस्त्वजडबोधवपुः कुतोऽस्मिन् वेदान्तवाक्यजनिताऽजडसंविदन्या ।१०७

तत्त्वमस्यादि वेदान्तपदसमुदाय में वाक्यत्वाभाव का निरूपण (वसन्ततिलका छन्द)

किं च क्रियापदमपेक्ष्य पदानि वाक्यभावेन सम्यगिह सङ्गतिमाप्नुवन्ति ।
नात्र क्रियापदमपेक्षितमामनन्ति वाक्यं कुतो भवति वेदशिरस्तदानीम् ॥१०८॥

पदार्थसमूह में भी अखण्डार्थबोधकता नहीं है (वसन्ततिलका छन्द)

नापूर्वमर्थमुपलम्भयितुं पदानां सामर्थ्यमस्ति परिहृत्य तु वाक्यभावम् ।
स्वार्थस्मृतिं हि जनयन्ति पदानि लोके विज्ञातसंगतितया ननु कार्यमन्यत् ।१०९

केवल वर्ण भी वाक्यार्थ के बोधक नहीं है (वसन्ततिलका छन्द)

हित्वा न वाक्यपदते प्रतिपत्तिहेतुर्वेदो भवेदिति कथंचन वक्तुमीशः ।
कश्चित् कदाचिदपि तत्र कुतः श्रुतीनां प्रामाण्यमात्मनि भवेदिति वर्णयन्ति ॥११०।

ब्रह्म को मानान्तरसिद्ध और असिद्ध मानने पर भी दोषापत्ति(वसन्ततिलका छन्द)

[1]किंच [4]प्रमान्तर[2]मिहा[5]भ्युपयन् [3]प्रतीचि
[6]वेदान्तवाक्य[7]मनुवादक[8]मभ्युपेयात् ।
[2]मानान्तरं [1]यदि च [3]ने[4]च्छति [6]शब्दशक्ते-
[5]स्तत्र [7]ग्रहः [8]कथ[9]मिति [10]प्रतिपादनीयम् ॥१११॥

प्रवृत्ति-निवृत्ति के अविषयरूप ब्रह्म में वेदान्त का प्रामाण्य नहीं है (वसन्ततिलका छन्द)

[1]किंच [2]प्रवृत्तिविनिवृत्तिविहीनवस्तु
तत्त्वप्रतीतिजनना[6]न्न च [4]किंचि[7]दस्ति ।
पुं[3]सः [5]प्रयोजन[1]म[2]तोऽपि [6]न [4]तत्र [5]मानं
[3]वेदान्तवाक्य[7]मिति [9]युक्तिम[8]दुच्यमानम् ॥११२॥

ब्रह्म में अज्ञानविषयता का निरूपण दुष्कर है (वसन्ततिलका छन्द)

[2]अज्ञातमर्थ[3]मवबोधयतः [4]प्रमायां
[5]हेतुत्व[6]मभ्युपगतं [7]ननु [1]वेदविद्भिः ।

अज्ञातता च परमात्मनि दुर्निरूपा विज्ञानमात्रवपुषीति न मानकृत्यम् ॥११३

ब्रह्म में अज्ञानविषयता मानने पर वदतोव्याघात दोष आता है (वसन्ततिलका छन्द)

बोधस्वभावकमबुद्धमनुष्णमुष्णं शीतस्वभावकमशीतमितीदृशानि ।
कः श्रद्दधीत पुरुषो वचनानि तस्माद् ब्रह्माऽप्रबुद्धमिति वाक्यमयुक्तमाहुः ॥११४।

अज्ञान को उपाधि भी नहीं मान सकते (वंशस्थ छन्द)

उपाध्यभावे न भवेदुपाधिमत् तटस्थमज्ञानमुपाधिरिष्यते ।
प्रमाणबुद्धेर्न तदात्मवस्तुनि स्वयंप्रकाशे न ततोऽत्र मानधीः ॥११५॥

ब्रह्म में प्रमातादि भेद मानने पर अद्वैतव्याघात(वसन्ततिलका छन्द)

अद्वैतमात्मपदमाहुरनन्यमानं द्वैतं प्रमाणमिह च प्रतिपादयन्ति ।
वाक्ये निजे पदविरोधमनीक्षमाणाः पाण्डित्यमप्रतिहतं प्रतिलभ्य धीराः ॥११६॥

प्रमाणादि संपूर्ण जगत् को ब्रह्म से अभिन्न मानने पर भी दोष है(वसन्ततिलका छन्द)

मातृप्रमाणमितिमेयविभागभिन्नं ब्रह्मैव चेद् भवति तत्र च वर्णयामः ।

कूटस्थतापहतिरेकरसत्वहानिः शाक्यैश्च सन्धिरिति दूषणमन्यदत्र ॥११७॥

प्रमाणादि को केवल अज्ञानकल्पित मानने पर दोषापत्ति(वसन्ततिलका छन्द)

अज्ञानकल्पितमनिर्वचनीयमिष्टं मात्रादिमानफलपर्यवसानमेतत् ।
इत्युच्यते यदि तदा परमात्मनोऽपि मेयत्वतो भवति कल्पितताप्रसंगः ॥११८॥

ब्रह्म में प्रमेयत्व न मानने पर भी दोषापत्ति(वसन्ततिलका छन्द)

ब्रह्म प्रमेयमथ नेष्टमिह प्रमाणं वेदान्तवाक्यमिति पक्षपराहतिर्वः ।
न ह्यप्रमेयमवबोधयदस्ति मानं नादाह्यदाहक इति प्रथितः कृशानुः ॥११९॥

अनिर्वचनीयता का खण्डन(वसन्ततिलका छन्द)

किं चाप्रसिद्धमिदमत्र जगत्त्रयेऽपि स्वाज्ञानकल्पितमनिर्वचनीयमेकम् ।
निःशेषतीर्थदृगुदीरिततन्त्रमार्गे सिद्धे यतः सदसती सकलेऽपि तन्त्रे ॥१२०॥

द्वैत प्रपञ्च को अज्ञानकल्पित मानने पर दोषापत्ति (वसन्ततिलका छन्द)

अज्ञानमप्यसदभावतया प्रसिद्धेर्द्वैतप्रसूतिकृदतो न तदभ्युपेयम् ।

नासत्कदा चिदपि सज्जनने समर्थं वन्ध्यासुता न खलु पुत्रशतं प्रसूते ॥१२१॥

शब्द में परोक्षबोधकत्व की उपपत्ति(वसन्ततिलका छन्द)

वाक्यप्रसूतमतिरिन्द्रियजन्यधीवन्नार्थापरोक्ष्यजननी भवितुं समर्था ।
तेनास्तु वाक्यजनितात्मपरोक्षबुद्धिर्भ्रान्तिः सदाऽजडतयाऽनुभवेऽपरोक्षे ॥१२२॥

ब्रह्मवस्तु के स्वभाव को देखते हुए भी वेदान्तवाक्यजन्य ज्ञान अपरोक्ष नहीं माना जा सकता (वसन्ततिलका छन्द)

नित्यापरोक्षमपि वस्तु परोक्षरूपं वेदान्तवाक्यमवबोधयति स्वभावात् ।
प्रामाण्यमत्र कथमस्य वदोपपन्नं न ह्यन्यदन्यदिति बोधयतः प्रमात्वम् ।१२३॥

वेदान्तवाक्यजन्य ज्ञान में अपरोक्षत्व का निराकरण(वसन्ततिलका छन्द)

वस्त्वस्तु नित्यमपरोक्षमिदं तु वाक्यं तद्वस्तु वक्तुमपरोक्षमशक्तमेव ।
न ह्यस्ति शब्दजनिताऽत्र जगत्त्रयेऽपि बुद्धिः करोति खलु या विषयापरोक्ष्यम् ।

स्वयंप्रकाश ब्रह्म में प्रमाणप्रयोजकत्वाभाव की शङ्का(वसन्ततिलका छन्द)

अत्राह यद्यपि किमप्युपनेयमत्र चैतन्यवस्तुनि न संभवति प्रमाणैः ।
अस्त्येव तत्र भवभीतिनिदानभूतमज्ञानमात्रमपनेयमनन्यमाने ॥१२५॥

उक्त शङ्का का निराकरण(वसन्ततिलका छन्द)

नैतत्प्रमाणमपनेतृ सतो न तावन्नैतन्नियोज्यमसतोऽप्युपघातसिद्ध्यै ।
नोप्यन्यदस्ति सदसद्यदनेन हेयं तस्मात् प्रमाणमपनेतृ न कस्य चिद्धः ॥१२६॥

ज्ञान केवल ज्ञापक होता है , कारक नहीं (वसन्ततिलका छन्द)

मानं न कारकमिति प्रथितं पृथिव्यां स्याच्चेत्क्रियावदिदमुज्झति मानभावम् ।
जन्यं न मानफलमित्यपि युष्मदीयाः संविद्रते न खलु जातु चिदक्षरेऽस्मिन् ॥१२७॥

अज्ञान की निवृत्ति अधिष्ठान चैतन्यरूप होने के कारण प्रमाण का फल नहीं है (वसन्ततिलका छन्द)

नाद्यापि वेद्म्यहमनिर्वचनीयभाषां सर्वप्रवादहृदयान्यपि गाहमानः ।
तात्पर्यतो न च तथाविधमस्ति किंचिल्लोकप्रसिद्धमपि यद्विषयेयमिष्टा ॥१२८॥

पूर्वोक्त तीन प्रसङ्गो का उपसंहार (वसन्ततिलका छन्द)

तस्मात् प्रमाणफलमत्र निरूप्यमाणं ब्रह्मात्मवस्तुनि न संभवतीह किंचित् ।
कृत्यं विना न च निरूपयितुं प्रमाणं वेदान्तवाक्यमिह शक्यमनर्थकत्वात् ॥१२९

वेदान्तवाक्य में सिद्धरूप ब्रह्मपरत्वाभाव का कथन (वसन्ततिलका छन्द)

कार्यान्वयान्वयिनि वस्तुनि शब्दशक्तिं श्रोतुः प्रवर्त्तकधियं परिकल्प्य बालः ।
चेष्टावशात् पुनरपि प्रविभज्य भागं भागस्य वाचकमिति स्वयमेव वेत्ति ॥१३०।

अन्वित अर्थ में शक्ति मानना लाघव है (स्रग्धरा छन्द)

त्यक्तः कार्यान्वितार्थं वदितुमलमयं शब्द इत्येष पक्षो
नोक्तो योग्येतरार्थान्वितमिति तु पुनः पूर्वमप्येष पक्षः ।
किंतु स्यादस्य शक्तिर्निजसहजवशादन्विताथाभिधाने
योग्यत्वादेस्तु पश्चात्स्वयमुपनिपतत्यस्य कार्यैदमर्थ्यम् ॥१३१॥

कार्यलक्षणका निरूपण (उपजाति छन्द)

प्रवृत्त्यभावस्य विरोधि कार्यं कालत्रयानन्वितमाहुरेके ।

[2]स्वगोचरस्येप्सितसाधनत्वं [3]विज्ञापयेत् [4]प्रेरक[5]माहु[1]रन्ये ॥१३२॥

कार्य के स्वरूपलक्षण का निरूपण (उपजाति छन्द)

[1]या [5]नान्य[3]मु[4]द्दिश्य [2]कृतिः [6]प्रवृत्ता [1]तयै[2]व [3]यद्[4]व्याप्यतया [5]प्रतीतम् ।
[1]त[2]देव [3]कार्यं [7]कथयन्ति [4]केचिद् [6]विचक्षणाः [5]कार्यनिरूपणायाम् ॥१३३॥

कार्यलक्षणकी राग में अतिव्याप्तिका वारण(शालिनी छन्द)

[2]भूत्वा [1]रागः [4]कारणं [3]पुम्प्रवृत्ते[1]र्नैवं [2]कार्यं [3]कार्यरूपं [4]विहाय ।
[6]रूपे[5]णान्येने[9]ष्यते[7]ऽस्या [8]निमित्तं [4]भिन्दन्त्ये[1]वं [3]रागकार्ये [2]बहुज्ञाः ॥१३४॥

प्रतिज्ञात कार्यान्वित पदार्थ में गवादि पदों की शक्ति का निरूपण (स्रग्धरा छन्द)

[6]आवापोद्वापहेतो : [8]पद[7]मिदममुक[9]स्याभिधाने [11]समर्थ
[10]स्वोत्पत्त्यैवेति शक्तिप्रतिनियममिमं [2]पार्श्ववर्ती [3]तटस्थः ।
जाना[5]त्यालोच्य [4]भूयो [1]नयनिपुणमति[12]र्भागशः [13]कार्ययुक्ते
[14]वस्तु[1]न्येतस्य [2]हेतो[4]रुपनिष[3]दखिला [5]कार्यशेषे [6]प्रमाणम् ॥१३५॥

नियोग अर्थ में शक्तिग्रह की प्रक्रिया का उपपादन (उपजाति छन्द)

[2]आज्ञादिभेदे[3]ष्वनुवर्तमाने [5]प्रवृत्त्यभावस्य [6]विरोधिमात्रे ।
[7]लिङ्गादिशब्दस्य [1]स [9]वेत्ति [8]शक्तिं [4]प्रवर्तकाख्याविषयत्वयोग्ये ॥१३६॥

सोपाधिक-निरुपाधिक भेद से नियोगद्वय का उपपादन (वसन्ततिलका छन्द)

[1]अन्ये [9]वदन्ति [4]निरुपाधि [3]नियोगरूपं [2]वेदे [7]भवत्य[5]पुरुषप्रभवे [6]स्वतन्त्रम् ।
[1]लोके [2]पुनः [3]पुरुषधीरचितेषु कार्यं [7]सोपाधिकं [5]तदि[8]ति [6]कारणतो [4]वचःसु ॥१३७॥

नियोग की उपाधि का वर्णन और निरुपाधिक नियोग में शक्तिग्रह का उपपादान (स्रग्धरा छन्द)

[3]आज्ञायाच्ञाद्युपाधिप्रणिपतितवपुः [4]साधनेहानुबद्धं
[5]विज्ञातोपायभावं [6]विषय[7]मनुसरत् [1]पौरुषेयीषु [2]वाक्षु ।
[2]वेदे [3]कर्तृस्थरागाद्युपधिविरहितं [1]कर्तृशून्ये [1]ततो[3]ऽस्मि-
[2]न्सर्वत्रैकस्वभावस्थितवपुषि [6]भवे[5]ल्लब्धशक्ति[4]र्लिङ्गादिः ॥१३८॥

आचार्य प्रभाकर के मतानुसार नियोग के स्वरूप का उपपादन (स्रग्धरा छन्द)

अन्ये भिन्नस्वभावं विविधमभिदधत्यानुरूप्येण कार्यं
लोके धात्वर्थरूपं श्रुतिवचसि पुनस्तन्नियोगाख्यमेव ।
संमुग्धे तत्र शक्तिं शिशुरयमवगम्यादितो न्यायचक्षुः
पश्चाद्वेदैकवेद्यं वदति लिङिति च प्रेक्षते निश्चयेन ॥१३९॥

लौकिक कार्य को मुख्य और वैदिक कार्य को गौण मानने के आग्रह का निराकरण (स्रग्धरा छन्द)

धात्वर्थाख्यानशक्तो यदि भवति गुणाद्वर्तितुं वैदिकेऽयं
सम्बन्धाज्ञानहेतोरनलमथ पुनर्वैदिके शक्तिमान्स्यात् ।
तत्सम्बन्धात्क्रियामप्यभिवदितुमलं लक्षणावृत्तितोऽयं
लिङ्शब्दस्तेन कार्ये श्रुतिवचनगते शक्त इत्यध्यवस्येत् ॥१४०॥

लिङादि-वियुक्त स्थल में शक्तिग्रहप्रकारोपपादन (स्रग्धरा छन्द)

एवं शब्दान्तराणां नयनिपुणमतिः शक्तिवित्स क्रमेण
प्रक्षेपोद्धारदर्शी भवति कतिपयैर्वासरैस्तत्र तत्र ।

तस्मात्कार्यान्वितार्थे सकलमपि पदं शक्तिमद् बुध्यमानो
भूताद्यर्थप्रतीतिं प्रति विमुखमनाश्शास्त्रतस्स्यान्मनुष्यः ॥१४१॥

सिद्धार्थबोधक वाक्य में शक्ति नहीं है (स्रग्धरा छन्द)

वाक्याद् भूतार्थनिष्ठाद् भवति न तु नृणां शब्दशक्तिप्रतीति-
र्लिङ्गं श्रोतृस्थबुद्धेर्न हि किमपि भवेदत्र बालोपलभ्यम् ।
न ह्येतत्पुत्रजन्माद्यवगतिनियतं नित्यवन्निश्चितं नो
यद्वक्त्रादिप्रसादक्षितितललुठनादीक्ष्यते श्रोतृदेहे ॥१४२॥

सिद्धार्थ में शक्ति ग्रह सम्भव न होने के कारण वेदान्तवाक्य का स्वार्थ में प्रामाण्य नहीं है (स्रग्धरा)

तस्मादाध्वं निराशाः श्रुतिशिरसि न तस्यास्ति निष्पन्नरूपे
प्रामाण्यं कार्यशून्ये कथमपि च परब्रह्मणि स्वप्रधाने ।
भूतं भव्यप्रधानं भवति हि न पुनः स्वप्रधानं कदाचि-
च्छास्त्रस्थाः शब्दशक्तिस्थितिनिपुणधियो विस्तरादेवमाहुः ॥१४३॥

पूर्वपक्षका उपसंहार (वसन्ततिलका छन्द)

तस्मादसंगतमिदं प्रतिभाति यन्मे वाक्यप्रमाणकमुदीरितमद्वयत्वम् ।
इत्येवमेष मम बुद्धिपथं विरोधः प्राप्तः प्रभो परिहरैनमनुग्रहाय ॥१४४॥

गुरुवाक्य में शिष्य द्वारा उत्थापित विरोध का परिहार (वसन्ततिलका छन्द)

सत्यं यदाह गुरुमान् यदि वाक्यगम्यं संसर्गरूपमिह वेदशिरःस्वभीष्टम् ।
अस्त्येव तत्र पदयोरुभयोर्विरोधः पारोक्ष्यसद्वयविरोधकृतस्तदानीम् ॥१४५॥

पूर्वमीमांसा में पदार्थों के संसर्ग को अथवा संसृष्ट पदार्थ को वाक्यार्थ कहा है , वह वेदान्त को अभीष्ट नहीं है (वसन्ततिलका छन्द)

यत् कर्मकाण्डनिपुणैरुदितं पुरस्ताद् वाक्यार्थलक्षणमदः पुनरत्र नेष्टम् ।
भेदादिवर्जितमखण्डमुशन्ति यस्माच्छ्रीबादरायणमतानुगता महान्तः ॥१४६॥

पूर्वोत्तरमीमांसा में वाक्यार्थलक्षण का भेदनिरूपण (वसन्ततिलका छन्द)

भेदादिरूपमवबोधयितुं समर्थं यद्वाक्यमस्ति तदखण्डविलक्षणार्थम् ।

तल्लौकिकं भवतु वैदिकमेव वाऽस्तु नास्माकमत्र विषये विमतिः कदाचित् ॥

वेदान्तवाक्य तो अखण्डार्थबोधक ही है (वसन्ततिलका छन्द)

यद्वाक्यजातमथ वेदशिरोनिविष्टं यद्वापि लौकिकमखण्डमपास्य नान्यत् ।
शक्नोति वस्तु वदितुं तदशेषमेव ब्रूयादखण्डमिति तु प्रतिपादयामः ॥१४८॥

लौकिकवाक्य में अखण्डार्थबोधकता का प्रतिपादन(वसन्ततिलका छन्द)

सोऽयं पुमानिति हि मुख्यपदार्थयुक्तवाक्यार्थबुद्धिजननस्य न वाक्यमेतत् ।
ईशीत वाच्यशबलस्थपदद्वयेन संसृष्टबुद्धिजनने पदयोर्विरोधात् ॥१४९॥

उक्त लौकिकवाक्य में अखण्डार्थबोधकता का समर्थन (वसन्ततिलका छन्द)

एतद्धि सोऽयमिति वाक्यमखण्डनिष्ठं वक्तव्यमत्र गतिरस्ति न काचिदन्या ।
तद्देशकालमनुकृष्य स इत्यनेन नायं पदार्थमुपढौकयते हि नैतत् ॥१५०॥

वेदान्तवाक्यों में अखण्डार्थबोधकता सिद्ध ही है(वसन्ततिलका छन्द)

एवं सतीदमपि तत्त्वमसीति वाक्यमाश्रित्य लाक्षणिकवृत्तिमखण्डनिष्ठम् ।

सोऽयं पुमानिति यथा वचनं तथाऽस्तु नो चेत्समं हि तदलाबुनिमज्जनोक्त्या ॥

प्रमाणान्तर से अनधिगत ब्रह्म में लक्षणापत्ति का समाधान(वसन्ततिलका छन्द)

मानान्तराधिगतगोचरगामिनी स्याच्छब्दस्य लाक्षणिकवृत्तिरिति प्रलापः ।
सिद्धत्वमात्रमिह लाक्षणिकप्रवृत्तेर्निर्वाहकारणमनङ्गमतोऽन्यदस्याः ॥१५२॥

लक्षणा के लिए मानान्तराधिगतत्व में व्यभिचार प्रदर्शन(वसन्ततिलका छन्द)

मानान्तराधिगतता हि न लक्षणायां किंचित्करी भवति पिङ्गलतावदग्नेः ।
धूमस्य जन्मनि हि पिङ्गलता न हेतु र्यद्यप्यवस्थितवती हुतभुक्शरीरे ॥१५३॥

अखण्डार्थत्वसिद्धि के लिए लक्षणा के भेद-प्रभेद का उपपादन(वसन्ततिलका छन्द)

शब्दस्य लाक्षणिकवृत्तिरपि त्रिधैषा काचिज्जहाति न जहाति च वाच्यमन्या ।
भागं जहाति न जहाति च भागमन्या सोऽयं त्रिधा भवति लाक्षणिकप्रकारः ॥

जहत् और अजहल्लक्षणा के लौकिक उदाहरण(वसन्ततिलका छन्द)

गङ्गापदं हि निजमर्थमपास्य तीरे यद्वर्त्तते भवति सा जहती प्रसिद्धा ।

शोणः स्थितो बहिरितीह तु लक्षणायामादाय शोणिमगुणं तुरगे प्रवृत्तिः॥१५५॥

भागत्यागलक्षणा का लौकिक उदाहरण(वसन्ततिलका छन्द)

सोऽयं पुमानितिवचस्युभयप्रकारा देशादिभागपरिवर्जनतः प्रसिद्धा।
पुंसश्च केवलमुपात्ततया पदाभ्यामेवं त्रिधा भवति लाक्षणिकी प्रवृत्तिः॥१५६॥

उक्त तीनों लक्षणाओं के वैदिक उदाहरण(वसन्ततिलका छन्द)

वेदेऽपि लाक्षणिकवृत्तिरियं त्रिधैष्टा यज्ञायुधीति वचने तु जहत्प्रवृत्तिः।
वैश्वानरादिवचनेष्वजहत्पवृत्तिस्तत्त्वंगिरोरुभयरूपतया प्रवृत्तिः॥१५७॥

त्याज्य और ग्राह्य भाग को दिखलानेके लिए वाच्यार्थ का प्रदर्शन(शालिनी छन्द)

ब्रह्माऽज्ञाने ह्यद्वितीयत्वमेकं ब्रह्मण्यन्यच्चाद्वितीयत्वमस्ति।
तत्संपर्कात्तत्र चाद्वैतताऽन्या व्युत्पन्नोऽयं ब्रह्मशब्दस्तु तत्र॥१५८॥

आत्मपद का वाच्यार्थ(शालिनी)

प्रत्यग्भावस्तावदेकोऽस्ति बुद्धौ प्रत्यग्भावः कश्चिदन्यः प्रतीचि।

प्रत्यग्भावस्तत्कृतस्तत्र चान्यो व्युत्पन्नोऽयं तत्र चात्मेति शब्दः ॥१५९॥

वाच्यार्थ में हेय एवं उपादेय का उपपादन(वसन्ततिलका छन्द)

तच्छब्दवाच्यगतमद्वयभागमेकं प्रत्यक्त्वमात्रमविरोधमपेक्षमाणः ।
त्वंशब्दवाच्यशबलस्थमुपाददानो वाक्यादखण्डमथ तत्त्वमसीति विद्यात् ॥१६०॥

पूर्वोक्त अर्थ को स्वीकार करने पर पुनरुक्तिदोष(शालिनी छन्द)

आदेयांशो नाणुमात्रोऽपि भेदो यद्यप्येवं भिन्नमादाय शब्दौ ।
वर्तेते त्वय्यद्वयात्मप्रकाशे बाह्यं हेतुं जामिता नास्ति तस्मात् ॥१६१॥

तत्-त्वम् पद में समानाधिकरण्य का उपपादन(शालिनी छन्द)

अद्वैतेऽर्थे प्रत्यगर्थोऽस्ति तद्वत् प्रत्यक्तत्त्वे चाद्वयस्यापि भावः ।
यद्यप्येवं नातिरेकावकाशः पूर्णे तत्त्वे तत्त्वमर्थोपपत्तेः ॥१६२॥

एकपदलक्षणा में दोषापत्ति(मालिनी छन्द)

न च विनिगमनायां कारणं किंचिदस्ति

स्फुटमुभयपदस्था लक्षणा शस्यतेऽतः ।
न हि विनिगमनायां हेत्वभावे कदाचित्
क्वचिदियमुपलब्धा सोऽयमित्यादिवाक्ये ॥१६३॥

पद का प्रथम एवं चरम भाव भी इस विवाद का निर्णायक नहीं है(मालिनी छन्द)

प्रथमचरमभावो निर्णये कारणं चेदयमपि नियमो न ह्यन्यथाऽप्यस्य दृष्टेः ।
प्रथमपठितमासीत्तत्पदं सामवेदे चरमपठितमेतद् दृष्टमध्वर्युवेदे ॥१६४॥

लौकिक वाक्य में भी प्रथम-चरमभाव निर्णायक नहीं है(वसन्ततिलका छन्द)

सोऽयं पुमानयमसाविति पौरुषेये वाक्ये तथा व्यतिहृतेऽत्र विशेषहेतुः ।
पूर्वापरत्वमिति शक्यमिदं न वक्तुं मुख्यत्वलाक्षणिकते प्रति शब्दवृत्त्योः ॥१६५॥

मुख्यार्थ की अन्वयानुपपत्ति से भी उभयपदलक्षणा ही समीचीन है (मालिनी छन्द)

न च भवति विरोधस्योत्थितस्यापनीतिः पदयुगलनिविष्टां लक्षणामन्तरेण ।
न हि भवति कदाचित् सद्वयस्याद्वयत्वं न च भवति परोक्षः प्रत्यगर्थोऽपि तद्वत् ।

विशेषण में भेद रहने पर तद्विशिष्ट में भेद का होना अनिवार्य है(सुन्दरी छन्द)

अविरुद्धविशेषणद्वयप्रभवत्वेऽपि विशिष्टयोर्द्वयोः ।
घटते न यदैकता तदा नितरां तद्विपरीतरूपयोः ॥१६७॥

दो विशिष्ट में विशेष्य के अभेद से अभेद मानने पर दोषापत्ति (सुन्दरी छन्द)

अथ केनचिदात्मनैकता वचनेन प्रतिपाद्यते तयोः ।
तदसुन्दरमस्तमेति हि स्फुटमेवं त्रिविधापि लक्षणा ॥१६८॥

केवल जहल्लक्षणा से भी अखण्डार्थ का बोध सम्भव है(स्रग्धरा छन्द)

साभासाज्ञानवाची यदि भवति पुनर्ब्रह्मशब्दस्तथाऽहं-
शब्दोऽहंकारवाची भवति तु जहती लक्षणा तत्र पक्षे ।
नौरेषा रौति लोहं दहति विषधरो रज्जुरग्रे तवासा-
वित्यत्रेवात्मवस्तुन्यपि भवतु जहल्लक्षणा को विरोधः ॥१६९॥

गौणी वृत्तिद्वारा भी अखण्डार्थ का बोध हो सकता है(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

प्रत्यक्त्वादिगुणान्वयेन यदि वा गौण्यस्तु वृत्तिस्तयो-
र्ब्रह्माहंपदयोः परेतरदृशोर्मुख्ये विरोधो यतः।
मुख्यार्थाऽनुपपत्तिहेतुकतया गौण्यस्ति वृत्तिर्यतो
लोके माणवको विभावसुरसौ सिंहः पुमानित्यपि ॥१७०॥

गौणी तथा लक्षणावृत्ति का अवान्तर भेद(प्रमिताक्षरा छन्द)

परशब्दवृत्तिरपरत्र भवेदिति यद्यपीदमुभयोः सदृशम्।
अनयोस्तथापि तु विभागकरं स्फुटमस्ति लक्षणमवान्तरकम् ॥१७१॥

गौणी एवं लक्षणा के अवान्तर लक्षण की उपपत्ति (सुन्दरी छन्द)

गुणतो गुणवृत्तिरिष्यते ह्यपरा लाक्षणिकी तु सङ्गतेः।
इति भेदकमस्ति लक्षणागुणवृत्त्योरिति वेदवादिनः ॥१७२॥

पूर्वोक्त त्रिविध प्रकार से अवगत अखण्डार्थ को अनुभवारूढ करना (इन्द्रवज्रा छन्द)

नित्यः शुद्धो बुद्धमुक्तस्वभावः सत्यः सूक्ष्मः सन् विभुश्चाद्वितीयः।

आनन्दाब्धिर्यः परः सोऽहमस्मि प्रत्यग्धातुर्नात्र संशीतिरस्ति ॥१७३॥

नित्यत्वादि धर्म को ब्रह्मस्वरूप मानने में मतभेद-प्रदर्शन(वसन्ततिलका छन्द)

सच्चित्सुखाद्वयवपुः कथयन्ति केचित्
सच्चित्सुखात्मकमिति प्रथयन्ति केचित् ।
ब्रह्मेतराणि किल नास्य वपूंषि तेषां
बुद्धौ स्फुरन्त्यपररूपनिवृत्तिभावात् ॥१७४॥

पूर्वोक्त मतों में आये आक्षेप का समाधान(वसन्ततिलका छन्द)

ब्रह्मेति शेषिपदमत्र हि लक्ष्यमेकं शेषाणि लक्षणसमर्पणमस्य कुर्युः ।
लक्ष्यार्पणेन सह लक्षणवाचि सर्वं संगच्छतेऽरुणपदं क्रयवाचिनैव ॥१७५॥

सत्यादि पदोंका साक्षात् ब्रह्म के साथ सम्बन्ध होने पर भी अखण्डैकरसता का भान होना सुनिश्चित है(वसन्ततिलका छन्द)

पृष्ठात्परस्परयुजा प्रतिपत्तिरेषामेवंविधत्वमुपपादयितुं समर्था ।

लक्ष्यस्य तस्य महतः क्रयवस्तुवत् स्यात् सर्वस्य कारकपदस्य परस्परेण ॥

पूर्वोक्त भाग-त्यागलक्षणान्याय का अनुसरण सत्यादि पदों के द्वारा ब्रह्मबोध में भी करना चाहिये (वसन्ततिलका छन्द)

तत्त्वंपदार्थविषयो नय एव योज्यः सत्यादिवस्तुषु न तत्र विशेषकल्पः ।
सत्यादिशब्दविषयाः शबलास्तदर्थभागेषु लाक्षणिकवृत्तिरपीह तुल्या ॥१७७॥

अब सत्यादि पदों में विशिष्टार्थ वाच्यता का प्रदर्शन करते हैं (शालिनी छन्द)

आकाशादौ सत्यता तावदेका प्रत्यङ्मात्रे सत्यता काचिदन्या ।
तत्संपर्कात्सत्यता तत्र चान्या व्युत्पन्नोऽयं सत्यशब्दस्तु तत्र ॥१७८॥

ज्ञानपदवाच्यार्थ का निरूपण(शालिनी छन्द)

बुद्धेर्वृत्तौ ज्ञानता तावदेका प्रत्यग्बोधे ज्ञानता काचिदन्या ।
तत्संपर्काज्ज्ञानता तत्र चान्या व्युत्पन्नोऽयं ज्ञानशब्दस्तु तत्र ॥१७९॥

आनन्दपदवाच्यार्थ का वर्णन(शालिनी छन्द)

बुद्धेर्वृत्तौ तावदानन्दतैका प्रत्यङ्मात्रे काचिदानन्दताऽन्या ।
तत्संपर्कात्तत्र चानन्दताऽन्या व्युत्पन्नोऽयं तत्र चानन्दशब्दः ॥१८०॥

नित्यपदवाच्यार्थ का वर्णन(शालिनी छन्द)

आकाशादौ नित्यता तावदेका प्रत्यङ्मात्रे नित्यता काचिदन्या ।
तत्संपर्कान्नित्यता तत्र चान्या व्युत्पन्नोऽयं नित्यशब्दस्तु तत्र ॥१८१॥

शुद्धपदवाच्यार्थका वर्णन(शालिनी छन्द)

आकाशादौ शुद्धता तावदेका प्रत्यङ्मात्रे शुद्धता काचिदन्या ।
तत्संपर्काच्छुद्धता तत्र चान्या व्युत्पन्नोऽयं शुद्धशब्दस्तु तत्र ॥१८२॥

मुक्तपदवाच्यार्थ का निरूपण(शालिनी छन्द)

गोवत्सादौ मुक्तता तावदेका प्रत्यङ्मात्रे मुक्तता काचिदन्या ।
तत्संपर्कान्मुक्तता तत्र चान्या व्युत्पन्नोऽयं मुक्तशब्दस्तु तत्र ॥१८३॥

सत्-शब्द-वाच्यार्थ का वर्णन(शालिनी छन्द)

आकाशादावस्तिता तावदेका प्रत्यक्तत्वे चास्तिता काचिदन्या ।
तत्संपर्कादस्तिता तत्र चान्या व्युत्पन्नोऽयं तत्र चास्तीति शब्दः ॥१८४॥

चैतन्य भाग की अपेक्षा आकाशादि में लक्षणा का आग्रह असङ्गत है(शालिनी छन्द)

यो यः शब्दो यत्कृतेऽर्थे निरूढस्तत्रैवार्थे लक्षणा वृत्तिरस्य ।
वक्तव्या स्यात् पण्डितैरेवमेतत् प्रत्यक् पूर्णं ब्रह्म वेदान्तवेद्यम् ॥१८५॥

सत्यादि पदों के लक्ष्यार्थ में परस्पर भेदाभेद का विमर्श(शालिनी छन्द)

सत्येऽप्यस्ति ज्ञानता ज्ञानतायां सत्यत्वं च स्पष्टमस्त्येव तद्वत् ।
सत्यप्येवं नातिरेकावकाशः पूर्णे तत्त्वे ज्ञानसत्योपपत्तेः ॥१८६॥

आनन्द एवं ज्ञान शब्दों के लक्ष्यार्थ में अभिन्नत्व का निरूपण(शालिनी छन्द)

आनन्दत्वे ज्ञानता ज्ञानतायामानन्दत्वं विद्यते निर्विशङ्कम् ।
सत्यप्येवं नातिरेकावकाशः पूर्णे तत्त्वे ज्ञानसौख्योपपत्तेः ॥१८७॥

सत्य एवं आनन्द शब्दों में उक्त न्याय का अतिदेश(शालिनी छन्द)

आनन्दत्वे सत्यता सत्यतायामानन्दत्वं निर्विवादं प्रसिद्धम् ।
सत्यप्येवं नातिरेकावकाशः पूर्णे तत्त्वे सत्यसौख्योपपत्तेः ॥१८८॥

पूर्वोक्त धर्म से भिन्न धर्म में भी उक्त न्याय की सङ्गति लगा लेनी चाहिये(शालिनी छन्द)

शेषेऽप्यूह्यं न्यायसाम्यादशेषमन्योऽन्यस्मिन्नस्तिता पूर्णता च ।
अन्योऽन्यस्याजामिता शब्दशक्तेरेवं सुस्थं सर्वमुक्तोपपत्तेः ॥१८९॥

उक्त अर्थ में अभियुक्तों का वचन प्रमाण है (शालिनी छन्द)

बोधात्मत्वे निर्निमित्ते प्रतीचो बोधात्मत्वे तन्निमित्ते च बुद्धेः ।
बोधात्मत्वे बुद्धिधर्मौ च बुद्धेरुक्ते साक्षाद्वेदसिद्धान्तविद्भिः ॥१९०॥

तत्-त्वम्-पदों की भाँति सत्य आदि पदों में भी जहल्लक्षणा और गौणीवृत्ति सम्भव है(सुन्दरी)

जहतीह च लक्षणा मता गुणवृत्तिश्च तथाऽभ्युपेयते ।
न विशेषविनिर्णयक्षमं किमपीहास्ति विशेषकारणम् ॥१९१॥

ऐश्वर्यादि पदों में उक्त न्याय का अपवाद-प्रदर्शन(वसन्ततिलका छन्द)

ऐश्वर्यमप्यनुभवादिवदात्मरूपं तस्माद्बोधगतमस्य च तानि कस्मात् ।
नेष्टानि पूर्ववदिति ब्रुवतो मुखस्य सद्यः पिधानमनुसृत्य वचांसि कुर्मः ॥१९२॥

ज्ञानादि की अपेक्षा ऐश्वर्य में भेदप्रदर्शन(वसन्ततिलका छन्द)

ऐश्वर्यवर्णनमतिस्फुटमेव कृत्वा नेतीत्यवादि बहुशः श्रुतिभिः प्रयत्नात् ।
सत्यादिवस्तुनि पुनर्न तथास्ति पूर्वमुक्त्वा निषेधनमितीह विशेषयुक्तिः ॥१९३

ब्रह्म में औपनिषदत्व का समर्थन(वसन्ततिलका छन्द)

शब्दस्य लाक्षणिकमुख्यविभागभिन्ना वृत्तिर्हि लौकिकवचस्युपलब्धपूर्वा ।
यस्माद्तो न घटते यदि मुख्यवृत्तिराश्रीयतामिह गिरश्चरमाऽपि वृत्तिः ॥१९४॥

अखण्डार्थत्वनिरूपण का उपसंहार(वसन्ततिलका छन्द)

तस्माद्खण्डमवबोधयितुं समर्थो वेदान्तभूमिगतशब्दसमन्वयोऽतः ।
संसर्गलक्षणमपास्य विरोधहेतोर्वाक्यार्थमद्वयमखण्डमिहाश्रयस्व ॥१९५॥

यहाँ पर अखण्डार्थबोध के लिए अपेक्षित त्रिधा सम्बन्धों का क्रमनिरूपण(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

सामानाधिकरण्यमत्र भवति प्राथम्यभागन्वयः
पश्चादेष विशेषणेतरतया पश्चाद्विरोधोद्भवः ।
उत्पन्ने च विरोध एकरसके वस्तुन्यखण्डात्मके
वृत्तिर्लक्षणया भवत्ययमिह ज्ञेयः क्रमः सूरिभिः ॥१९६॥

पूर्वोक्त त्रिधा सम्बन्ध का स्थलनिर्देश(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

सामानाधिकरण्यमत्र पदयोर्ज्ञेयस्तदीयार्थयोः
संबन्धस्तु विशेषणेतरतया ताभ्यां सहास्यात्मनः ।
संबन्धोऽप्यथ लक्ष्यलक्षणतया विज्ञेय एवं बुधै-
रैतान्यैर्थपदानि बुद्धिपदवीमारोहणीयानि तु ॥१९७॥

विशिष्टार्थ में शक्ति का समर्थन(वसन्ततिलका छन्द)

निःसंधिबन्धनमिदं चिदचित्स्वरूपं संकीर्णमन्तरपरिस्फुरणेन शून्यम् ।
आचित्तशुद्धिफलतः स्फुरितोपपत्तेः शब्दार्थसंगतिमिहैव तु गृह्यतेऽज्ञैः ॥१९८॥

विवेकज्ञान से पूर्व भी शक्तिग्रह की सम्भावना का निरूपण(वसन्ततिलका छन्द)

शब्दार्थसंगतिविदामथ सत्वशुद्धेरुत्पन्नतर्कदृढलोहशलाकया तु ।
दृश्यं दृशं च निपुणं द्वयमन्तरेण निक्षिप्तया दृग्दृशोः क्रियते विभागः ॥१९९॥

पूर्वोक्त निर्णयका स्पष्टीकरण(वसन्ततिलका छन्द)

शुद्ध्युत्थतर्कजनितं चिदचिद्विभागं प्राप्य स्थिताः पुनरिमां गिरमुद्गिरन्ति ।
सत्यादिशब्दगण एष तु तत्र तत्र व्युत्पत्तिमान् शबलवस्तुनि नो दृशीति ॥२००॥

अनेक में शक्ति-कल्पना की निर्दुष्टता(उपजाति छन्द)

एकत्र शक्तिग्रहणोपपत्तावनेकक्लृप्तिः क्रियते किमर्थम् ।
इत्येतदेवं सति नास्ति चोद्यं पुराऽस्य पुंसः परमाविवेकात् ॥२०१॥

लक्ष्यार्थ में शिष्य का पुनराक्षेप(वसन्ततिलका छन्द)

अत्राह वाच्यशबलान्वितवस्तुनीयं तद्धर्मना भवति लाक्षणिकी प्रवृत्तिः ।
किं वा तदन्वितविलक्षणवस्तुनि स्याच्छब्दस्य नोभयमपि प्रतिभाति युक्तम् ॥

उभय पक्ष में दोष का उद्घाटन(उपजाति)

संबन्धिरूपं यदि वस्तु लक्ष्यमखण्डवाक्यार्थमतिः कुतस्त्या ।
अनन्वितं वस्तु पदार्थलक्ष्यं न लक्ष्यते कुत्रचिदत्र लोके ॥२०३॥

लक्ष्यार्थ विषय में शिष्य की शङ्का का आचार्य द्वारा समाधान (वसन्ततिलका छन्द)

पूर्वक्षणे भवति वाच्यपदार्थभागभागित्वसंगतिरिहात्मनि निर्विभागे ।
मोहोपदर्शितवपुर्घटते ततोऽस्मिन् शब्दस्य लाक्षणिकवृत्तिरदोषदुष्टा ॥२०४॥

कल्पित-सम्बन्ध पक्ष में शङ्का का समाधान(वसन्ततिलका छन्द)

संबन्धिता भवति लाक्षणिकप्रवृत्तेः सर्वत्र कारणमितीदमभीष्टमेव ।
संबन्धिताकरणमेव तु लाक्षणिक्या बुद्धेरनिष्टमिह तद्व्यभिचारदृष्टेः ॥२०५॥

व्यभिचार स्थल अन्य भी है(वसन्ततिलका छन्द)

यत्रैष काक इदमेव तु देवदत्तवेश्मेति लाक्षणिकवृत्तिरिहाभ्युपेता ।
काकास्पदत्वमवधीर्य तथापि वेश्ममात्राकृतिर्भवति लाक्षणिकी तु बुद्धिः ॥२०६॥

जहदजहल्लक्षणा स्थल में भी पूर्वोक्त व्यभिचार का प्रदर्शन(रथोद्धता छन्द)

सोऽयमित्यपि पदार्थरूपकं लक्षणं यदुपलक्षणं हि तत् ।
अंशिता यदि पदार्थलक्ष्ययोर्गृह्यते ननु पुनर्विरोधिता ॥२०७॥

उभयपद-लक्षणाप्रसङ्ग का उपसंहार एवं प्रकारान्तर की प्रतिज्ञा(शालिनी छन्द)

एवं तावल्लक्षणावृत्तिहेतोरानीतैषाऽखण्डवाक्यार्थबुद्धिः ।
मुक्त्वाऽपीमां लक्षणावृत्तिमेषा वक्तुं शक्येत्युच्यतेऽनन्तरेण ॥२०८॥

लक्षणावृत्ति के बिना भी अखण्डार्थबोधक प्रक्रिया का प्रदर्शन(शार्दूलविक्रिडीत छन्द)

भिन्नाभिन्नरवौ घटादिवचसा साकं समुच्चारिता-
वन्यूनानधिके घटादिविषये तावत्प्रवृत्तौ तव ।
नो चेद्विश्वसृजोऽपि दुष्परिहरा भेदादिमालाऽऽगता
भेदादेरपि तत्र वाच्यमपरं भेदादिकं स्यादिति ॥२०९॥

पुनरुक्ति दोष का वारण(उपेन्द्रवज्रा छन्द)

[3]परस्पराभाव[5]मुपाददानो [4]निमित्त[6]मर्थेषु हि[2] भिन्न[1]शब्दः ।
[7]प्रवर्त्तते[1]ऽन्ये [3]तु [2]घटादिशब्दा [4]निजं[5]निजं [6]वाच्य[7]मुपाददानाः ॥२१०॥

अभिन्न शब्द प्रयोग का निमित्त-उपादान(उपेन्द्रवज्रा छन्द)

[2]परस्पराभावविहीनभावा[1]दभिन्नशब्दस्य [3]घटे [4]प्रवृत्तिः ।
[3]घटस्वरूपैकनिबन्धनात्[2]तु [1]घटादिशब्दस्य [4]घटे [5]प्रवृत्तिः ॥२११॥

अखण्डार्थत्व का बोध एक पद-लक्षणा से भी सम्भव है(उपेन्द्रवज्रा छन्द)

[1]अबोधनाश[2]श्चितिरि[3]त्य[4]मुष्मिन् [6]पदद्वये [7]त्वे[5]करसात्मनिष्ठे ।
[10]अगौण[8]मेकं [9]पद[2]मन्य[1]दत्र [4]द्वितीयवृत्ती[3]तरसंगमाय ॥२१२॥

उक्त वाक्य में मुख्यार्थक तथा लाक्षणिक पद का विवेक(वसन्ततिलका छन्द)

[3]अज्ञाननाशपद[1]मत्र हि[2] [4]मुख्य[5]मिष्टं [6]विद्यानिबन्धननिवृत्तिसमर्पकत्वात् ।
ते[1]ना[2]न्वयाय [3]चितिवाचि [4]पदं [5]स्ववाच्ये [6]सौवं [9]समुज्झति [7]मतेः [8]परिणामरूपम् ॥२१३॥

अज्ञाननाश पद से उक्त व्याख्या में उत्पन्न आक्षेप का समाधान(द्रुतविलम्बित छन्द)

विधिपदानि हि भागसमर्पणादपरभागनिराकरणादपि ।
अविषयात्ममतिं जनयन्ति नो न तु मृषार्थनिवृत्तिगिरस्तथा ॥२१४॥

लक्षणा के बिना अखण्डार्थ-बोध के लिए अन्य उदाहरण(शालिनी छन्द)

भेदो भिन्नश्चातिरेकोऽतिरिक्तो भेदोऽभिन्नः संविदः स्वप्रकाशाः ।
इत्येतस्मिन्विद्यते नार्थभेदो वेदान्तानामप्यखण्डस्तथार्थः ॥२१५॥

युक्तिसिद्ध अखण्डार्थ में महर्षि पाणिनि की सम्मति(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

एवं तावदखण्डवस्तुविषयः शब्दान्वयो दर्शितो
लोके दृष्टनयेन पाणिनिवचोऽप्यस्यैव संसूचकम् ।
येनायं स्मरति प्रकृत्यभिहिते वृक्षादिके केवले
तन्मात्रे प्रथमेतिसूत्रवचसैवाद्यां विभक्तिं मुनिः ॥२१६॥

अखण्डार्थता में बादरायण की सम्मति (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

सामानाधिकरण्यमन्वयगिरा हेतुं वदत्यादरात्

तस्यैवाथ विशेषणं समिति च व्यावृत्तये गृह्यते ।
गौणान्मुख्यमयं भिनत्ति भगवान्व्यावर्त्तकेनामुना
नीलेनोत्पलवस्तुवत्स्फुटतरं द्वैविध्यसद्भावतः ॥२१७॥

सामानाधिकरण्य के भेद का निरूपण(इन्द्रवज्रा छन्द)

तद्धि द्विधैकाधिकरण्यमुक्तं गौणं च मुख्यं च विविच्य सद्भिः ।
संसर्गरूपार्थनिवेशि गौणं मुख्यं त्वखण्डार्थनिविष्टमाहुः ॥२१८॥

उक्त द्विविध सामानाधिकरण्य का स्वरूपप्रदर्शन(उपजाति छन्द)

आदाय नानाविधकारणानि गिरामथैकत्र तु या प्रवृत्तिः ।
तामाहुरैकाधिकरण्यनाम्ना विपश्चितो वेदशिरःसु विप्राः ॥२१९॥

उक्त दोनों सामानाधिकरण्यों का उदाहरण (वसन्ततिलका छन्द)

नीलं सुगन्धि महदुत्पलमम्बुशायीत्येवंप्रकारमिह गौणमुशन्ति सन्तः ।
सोऽयं पुमानुदशरावगतो विवस्वानाकाशगो रविरसाविति मुख्यमाहुः ॥२२०॥

एकार्थ वृत्तित्वरूप लक्षण समान होने पर भी दोनों में अवान्तर भेद है(वसन्ततिलका छन्द)

एकत्र वृत्तिरिति लक्षणमत्र मुख्यं संसर्गवस्तुनि पुनर्न हि तद् घटेत ।
नानारसे हि विषये वचसां प्रवृत्तिर्नीलं सुगन्धि महदुत्पलमित्यमीषाम् ॥२२१॥

वैयधिकरण्य लक्षण का निरूपण(वसन्ततिलका छन्द)

नानाविधैर्बहुभिरेव निमित्तभेदैर्भिन्नेषु वस्तुषु गिरामथ या प्रवृत्तिः ।
सर्वत्र वैयधिकरण्यमिति प्रसिद्धा सा शब्दवृत्तिकुशलव्यवहारभूमौ ॥२२२॥

पर्याय का लक्षण(वसन्ततिलका छन्द)

अभिन्नहेतुर्विषये समाने विभिन्नवाचामथ या प्रवृत्तिः ।
पर्यायनाम्ना ऽभिवदन्ति धीराः प्रवृत्तिमेतां वचसां बहूनाम् ॥२२३॥

व्यधिकरण तथा पर्याय का सोदाहरण निरूपण(वसन्ततिलका छन्द)

कुडयं गृहस्य सरसोऽम्बुजमस्य वस्त्रमित्यत्र वैयधिकरण्यमिति प्रसिद्धम् ।
एवं मुखं वदनमाननमित्यमीषां पर्यायताऽपि विदितैव पुरोक्तहेतोः ॥२२४॥

तत्त्वमसि इत्यादि महावाक्यों में मुख्य सामानाधिकरण्य मानना आवश्यक है (वसन्ततिलका)

पर्यायता न खलु तत्त्वमसीति वाक्ये नापीह संभवति भेदकभेद्यभावः ।
तत्त्वंपदार्थगतमेकरसैकभागं तत्त्वंपदे समुपलक्षयतो विरोधात् ॥२२५॥

अवान्तरवाक्यों में भी अखण्डार्थबोधकता है (भुजङ्ग छन्द)

प्रकृष्टप्रकाशध्वनी व्यक्तिमेकां यथा लक्षणावर्त्मनोपक्षिपेताम् ।
शशाङ्कादिशब्दार्थसंकीर्तने सच्चिदानन्दशब्दाः परं ब्रह्म तद्वत् ॥२२६॥

प्रकृष्टप्रकाशचन्द्रः तथा नीलमुत्पलम् आदि लौकिक वाक्यों में भेद प्रदर्शन(वसन्ततिलका छन्द)

न नीलोत्पलाद्या गिरो व्यक्तिनिष्ठाः स्ववाच्यार्थसंसर्गमात्राभिधानात् ।
विरोधे हि वाच्यच्युतिर्नाविरोधे गिरां लक्षणाऽत्रापि चेदस्तु साम्यम् ॥२२७॥

अभ्युपगमवाद के आधार पर नीलमुत्पलम् में अखण्डार्थता का प्रदर्शन(भुजङ्ग छन्द)

न नीलत्वजात्याश्रयव्यक्तितः स्याद् विभिन्नोत्पलत्वाश्रयव्यक्तिरेषा ।
तथैवोत्पलत्वाश्रयव्यक्तितः स्यान्न नीलत्वजात्याश्रयव्यक्तिरन्या ॥२२८॥

नीलोत्पलवाक्यमें लक्षणा तथा अखन्डार्थत्व का अभाव(भुजङ्ग छन्द)

न नीलोत्पलादिप्रदेशेषु किंचिद् गिरां लक्षणाकारणं तेन तत्र ।
न नीलोत्पलत्वादिकव्यक्तिनिष्ठा गिरस्ता भवेयुः प्रमाणादृते नः ॥२२९॥

लक्षणा से भी अखण्डार्थता यहाँ सम्भव नहीं है (द्रुतविलम्बित छन्द)

इदमुपेत्य किमप्युदितं मया न तु तयोरभिदा परमार्थतः ।
गुणगुणित्वकृतोऽतिशयस्तयोर्भवति लक्षणयाऽपि गृहीतयोः ॥२३०॥

प्रकृष्टप्रकाशश्चन्द्रः इस वाक्य में अखन्डार्थता का उपपादन(भुजङ्ग छन्द)

प्रकृष्टप्रकाशत्वजाती हि लोके प्रकृष्टप्रकाशाभिधानाभिधेये ।
तयोरन्वये कीर्त्त्यमाने तु ताभ्यां शशाङ्काभिधानाभिधेयं न लभ्यम् ॥२३१॥

उक्त वाक्य द्वारा शशाङ्कपदवाच्य अर्थ का लाभ न होने पर हानि का प्रदर्शन(भुजङ्ग छन्द)

शशाङ्काभिधानाभिधेये हि पृष्टे तदेवोत्तरेणापि निर्णयमत्र ।
प्रकृष्टप्रकाशत्वजात्यन्वयोऽयं तदाक्षिप्ततद्व्यञ्जकव्यक्तिनिष्ठः ॥२३२॥

पूर्वोक्त अर्थका स्पष्टीकरण(भुजङ्ग छन्द)

शशाङ्काभिधानाभिधेयो न चेष्टः शशाङ्कस्य तेजोविशेषत्वहेतोः।
ततश्चोपपन्ना जहल्लक्षणातः पुरोक्ता पदाभ्यामखण्डार्थसिद्धिः ॥२३३॥

प्रकर्ष एवं प्रकाशरूप धर्मों का भेदप्रतिपादन यहीं पर इष्ट नहीं है(भुजङ्ग छन्द)

प्रकर्षः प्रकाशातिरिक्तो न चात्र प्रकाशः प्रकर्षातिरिक्तो न चात्र।
बहिश्चन्द्रमस्ति स्वरूपातिरेकस्तयोश्चन्द्रमस्यैकतैवातिमात्रम् ॥२३४॥

उक्तविषय में अनुभव प्रमाण का प्रदर्शन(भुजङ्ग छन्द)

न चन्द्रप्रकाशप्रकर्षं प्रकाशात्तदीयात्पृथक्कश्चिदुत्पश्यतीह।
तथाऽस्य प्रकर्षप्रकाशं प्रकर्षात् ततो नानयोरस्ति भेदे प्रमाणम् ॥२३५॥

पूर्वोक्त दृष्टान्त से महावाक्य में अखण्डार्थत्व की उपपत्ति(भुजङ्ग छन्द)

यथा सच्चिदानन्दशब्दास्तदर्थं तथा तत्त्वभावात्मनो ब्रह्मभावम्।
विरोधान्मिथो लक्षणावर्त्मनेमौ किमर्थं न संभूय वक्तुं समर्थौ ॥२३६॥

तत्-त्वम् पदार्थ में लक्षकत्व का उपपादन(शालिनी छन्द)

प्रत्यक्तत्त्वं लक्षयेत्त्वंपदार्थस्तच्छब्दार्थो लक्षयेद्द्वितीयम् ।
एवं पूर्णं प्रत्यगात्मानमेतौ शब्दौ ब्रूतो लक्षणावर्त्मनैव ॥२३७॥

तत्त्वज्ञान का प्रत्यक्षफलप्रदर्शन(शालिनी छन्द)

पारोक्ष्यं च ब्रह्मणि प्रत्यगर्थे दुःखित्वं च ध्वान्तसम्भूतमाहुः ।
सम्यग्ज्ञानध्वस्तमोहस्य पुंसः प्रध्वंसेते हेत्वभावेऽफलत्वात् ॥२३८॥

वेदान्त शक्तिवृत्ति से ब्रह्म का बोध नहीं करा सकते (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

षष्ठीजातिगुणक्रियादिरहिते सर्वस्य विज्ञातरि
प्रत्यक्षे परिवर्जिताखिलजगद्द्वैतप्रपञ्चे दृशौ ।
सन्त्यक्तव्यवधानके परमके विष्णोः पदे शाश्वते
त्वय्यज्ञानविजृम्भिता न हि गिरो मुख्यप्रवृत्तिक्षमाः ॥२३९॥

शुद्ध ब्रह्म सभी प्रमाणों का अविषय है (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

आस्तामत्र वचःप्रवृत्तिविरहः प्रत्यक्त्वहेतोर्दृशि
व्यापाराय मनोऽपि न प्रभवति भ्राम्यत्पराग्भूमिषु ।
एवं चेदखिलप्रमाणपदवीः षोढा विभिन्ना भवा-
नुल्लङ्घ्य व्यवतिष्ठते त्वयि गिरः स्यान्मुख्यवृत्तिः कथम् ॥२४०॥

आत्मा में कर्मत्व के अभाव का उपपादन (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

आत्मानं न तु कर्मतामुपनयञ्छब्दो वदेल्लक्षणा-
मार्गेणापि यतः पराग्विषयवन्नास्येष्यते कर्मता ।
प्रत्यक्ता हि विरुध्यते यदि भवेदस्यात्मनः कर्मता
यद्यत्कर्म न तस्य तस्य भवति प्रत्यक्स्वभावो यतः ॥२४१॥

अनुमान प्रमाण से भी आत्मा में अकर्मत्व का निरूपण (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

वागादे खलु बाह्यवस्तु विषयो नात्मा यतो नात्मनि
व्यापारं करणस्य कस्यचिदपि प्रेक्षामहे न्यायतः ।

यत्किंचित्करणं जगत्त्रयगतं तत्प्रत्यगात्मेक्षितं
बाह्ये वस्तुनि वर्त्ततेऽनुभवनं तत्र प्रमाणं मतम् ॥२४२॥

प्रत्यगात्मा में शब्दाविषयत्व प्रसङ्ग का उपसंहार (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

प्रत्यग्रूपमतो न शब्दविषयो बुद्धेरवेद्यं यतो
बुद्धिर्यत्र हि विद्यते स विषयः शब्दस्य नात्मन्यसौ ।
तेनात्मानमसौ न गोचरयितुं शब्दः क्षमो मुख्यया
वृत्त्या वेतरयापि तेन न तया तस्यात्मनः कर्मता ॥२४३॥

आत्मा में औपनिषदत्वप्रतिज्ञा का विरोधप्रदर्शन(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

नन्वज्ञेयमिदं भवेद्यदि मम प्रत्यक्स्वरूपं ततः
प्रामाण्यं कथमस्य वेदशिरसस्तत्र प्रतिज्ञायते ।
यन्मेयं न भवेत्कदाचिदपि तद्वेदान्तवेद्यं भवे-

दित्येतद्वचनं पराहतपदं वक्तुं न युक्तं बुधैः ॥२४४॥

गुरुद्वारा औपनिषदत्व प्रतिज्ञा का समर्थन(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

नैतद्वस्तुनि कल्पितस्य जगतो वाक्यप्रसूतप्रमा-
बुद्धिर्मूलधर्गिष्यते तव निजस्वाकारमात्रग्रहात् ।
कर्मत्वं न करोति वाक्यजनिता बुद्धिः स्वरूपे तव
स्वाकारग्रहणेन केवलमियं संसारमूलं दहेत् ॥२४५॥

कर्ममीमांसक मत में संवित् स्वप्रकाशत्व का उपपादन(स्रग्धरा छन्द)

संविद्व्युत्पादकं यद्वचनमभिमतं कर्ममीमांसकानां
तत्कर्मत्वं न तावत्क्षिपति घटपटाद्यर्थसंवित्स्वरूपे ।
किंत्वज्ञानापनुत्या फलवदभिमतं तत्र शिष्यस्य तद्वत्
सर्वं वेदान्तवाक्यं फलवदिदमपि प्रत्यगात्मस्वरूपे ॥२४६॥

उक्त सिद्धान्त के प्रतिपादक लौकिक दृष्टान्त का प्रदर्शन(भुजङ्ग छन्द)

अकार्यस्वरूपस्य कार्यत्वमिष्टं यथा कारकैर्मूर्तमुत्सारयद्भिः ।
तथैवाप्रमेयस्य मेयत्वमस्य प्रमाणैस्तमस्तज्जमुत्सारयद्भिः ॥२४७॥

मूलज्ञान के नाशक ब्रह्माकार वृत्ति की उत्पत्ति के लिए साधनों का निरूपण (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

वाक्योत्थापितबुद्धिवृत्तिरमला यज्ञादिभिर्निश्चला
वेदान्तश्रवणादिभिः स्फटिकवत्स्वच्छा सती तावकम् ।
रूपं दर्पणवद्बिभर्ति परमं विष्णोः पदं संनिधे-
रेतस्मादिह कारणादथ भवेत्संसारबीजक्षयः ॥२४८॥

प्रतिज्ञा एवं समन्वयरूप हेतु में उत्पन्न विरोधपरिहार का उपसंहार(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

एवं वेदशिरः प्रमाणमुदितं प्रत्यक्स्वरूपे तव
कर्मत्वं विरहय्य तत्र न हि नो बाधः प्रतिज्ञागिरः ।
कर्मत्वं न करोति बोधयति च स्पष्टं वचो वैदिकं
रूपं तावकमेवमस्य भवति प्रामाण्यमत्रात्मनि ॥२४९॥

विधिवाक्य की भाँति निषेधवाक्य में भी प्रामाण्य का उपपादन(वसन्ततिलका छन्द)

पृष्ठेन पूर्णवपुषा क्रियते प्रतीतिर्नेतीतिवाक्यजनिता जगतो निषेद्ध्री ।
प्राधान्यमस्तु विधिना सममेव तस्मात् तस्याथ वा भवतु तद्वचनं प्रधानम् ॥२४९॥

पूर्वोक्त पक्षद्वय में हेतुप्रदर्शन(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

अद्वैतीकरणं निषेधवचनादुत्पन्नबुद्धेरपि
तुल्यं तत्त्वमसीतिवाक्यजनितप्रत्यक्प्रतीत्या सह ।
आर्थं शाब्दमथापि वा भवतु तत्किं तेन यद्वा विधि-
र्नाकर्तुं शबलार्थगोचरतया निर्भेदमर्थं क्षमः ॥२५१॥

भागत्यागलक्षणा के द्वारा विधिवाक्यों में अखण्डार्थ बुद्धि की जनकता जो पहले कही जा चुकी है, इस पर भी तुल्यार्थवादी कथन(वसन्ततिलका छन्द)

सम्बन्धजातविरहान्न च लक्षणाऽस्मिन् सम्भाव्यते परिहृताखिलदृश्यराशौ ।
ब्रह्मात्मवस्तुनि ततः प्रतिषेधवाक्यशेषत्वमेतु विधिरित्यपि केचिदन्ये ॥२५२॥

उक्त मत का निराकरण(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

[2]वाक्यं [3]मुक्तिफलां [4]धियं [6]जनयति [5]स्पष्टं [1]विधिव्यापृतं
[1]साक्षा[2]देव [3]तव [4]स्वरूपकथना[4][1]न्नैवं [3]निषेधात्मकम् ।
[2]अध्यारोपितरूपभेदविलयव्यापारनिष्ठं [2]तव
[3]स्वाकारग्रहणक्षमां [7]न [8]हि [4]धियं [5]कर्तुं [6]समर्थं [1]यतः ॥२५३॥

निषेधवाक्यों में अद्वयाकार जनकता सम्भव नहीं है(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

[1]अस्थूलादिवचः[2]समुत्थितमति[8]र्नि[7]राकार[9]मादास्यते
[3]साक्षाद[4]द्वयवस्तुन[7]स्तव [6]विभो[5]रज्ञानविच्छेदिनः ।
[1]अज्ञातस्य हि [2]वस्तुनो [10]न [11]हि [5]धिया [3]स्वाकारसंवेदनं
[4]मुक्त्वा [6]तद्विषयस्य [7]विभ्रमकृतो [8]ध्वान्तस्य [9]विध्वंसनम् ॥२५४॥

अधिष्ठान-तत्त्वज्ञान के बिना निषेधवाक्य से अज्ञान की निवृत्ति होना असम्भव है, इसमें अनुकूल दृष्टान्त देते हैं (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

रज्ज्वज्ञानविजृम्भितस्य फणिनो रज्जुप्रकाशाक्षमं
विज्ञानं विरहय्य न प्रशमनं दृष्टं निषेधे कृते ।
तद्वत्प्रत्यगविद्यया विरचितं संसारदुःखं न तत्
संवित्तिं विरहय्य शाम्यति धिया नेतीति शब्दोत्थया ॥२५५॥

निषेधवाक्य का सार्थक्य उपपादन(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

अस्थूलादिवचो निषेधकतया भेदस्य संशोधनाद्
वाक्यार्थान्वयसिद्धये तु घटते वाच्यार्थलक्ष्यार्थयोः ।
एवं तत्त्वमसीतिवाक्यगतयोस्तत्त्वंपदोक्तार्थयोः
संशुद्ध्यैव तु नेतिनेति वचनं मोक्षाय साक्षान्न तु ॥२५६॥

मतान्तर से भी निषेधवाक्यों का सार्थक्योपपादन (वसन्ततिलका छन्द)

अन्ये पुनर्विधिवचोजनितात्मबुद्धिसामर्थ्यसिद्धमनुवक्ति निषेधवाक्यम् ।
द्वैतोपमर्दमिति शासति शिष्यवर्गं तच्च प्रशस्तमनवद्यमभीष्टमेव ॥२५७॥

उक्तार्थ में लौकिक दृष्टान्त (वसन्ततिका छन्द)

दृष्टश्च रज्जुविधिनावगतार्थवस्तुसामर्थ्यसिद्धभुजगप्रशमानुवादः ।
रज्जुस्त्ववाग्रत इयं न भुजङ्गमोऽयमित्यत्र तद्वदिह योजयितव्यमेतत् ॥२५८॥

तत्वमसि इत्यादि विधिवाक्यों का प्राधान्योपपादन(वसन्ततिलका छन्द)

अस्यैव तत्त्वविनिवेदनशक्तिभाजः संसारमूलविनिवृत्तिफलप्रसूतौ ।
सामर्थ्यमस्ति पटुभिः परिबृंहितत्वाद्वेदान्तभूमिगतपञ्चविधार्थवादैः ॥२५९॥

पञ्चधा अर्थवाद वाक्य का उपपादन(वसन्ततिलका छन्द)

सृष्टिस्थितिप्रलयसंयमनप्रवेशव्यापारजातकथनच्छलतः प्रवृत्तैः ।
सानुग्रहादवगतिः खलु तत्त्वमादेर्वाक्यात्परस्य घटते न ततोऽपरस्मात् ॥२६०॥

विधिवाक्यों का प्राधान्य सूत्रकार को भी अभिमत है(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

सूत्रं तत्तु समन्वयादिति विधिव्यापारनिष्ठं वचो
मोक्षायेति निवेदनाय कृतवान् वेदान्तवेदी मुनिः ।

न्यायेनाकलयन्नशेषवचनव्यापारमूरीकृत-
स्वातन्त्र्यः सकलेऽपि वेदशिरसि स्वैरं चरन्नीश्वरः ॥२६१॥

सूत्रकार व्यासजी ने सूत्रों द्वारा निषेधवाक्यों को विधि का शेष बतलाया है (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

वाक्यार्थान्वयितत्पदार्थकथने नेतीति वाक्यं पुनः
साक्षात्सूचयति स्म सूत्रकृदतस्तत्तत्परं निश्चितम् ।
एवं हस्ततलार्पितामलकवत् तात्पर्यसंवेदने
सत्यन्यादृगुदीरयन्ति यदि तत्क्षन्तुं कथं शक्नुमः ॥२६२॥

तत्पदार्थशोधन में निषेधवाक्यों का उपकारत्व वर्णन(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

सत्यं ज्ञानमनन्तमित्यभिहिते संभावनाऽऽनीयते
नास्थूलादिवचःसमुद्भवधिया द्वैतोपमर्दं विना ।
तेनावान्तरवाक्यलक्ष्यविषयां बुद्धिं दृढीकुर्वता
सर्वद्वैतनिषेधकेन वचसा वाक्यार्थधीर्जन्यते ॥२६३॥

निषेधवाक्यों द्वारा तत् त्वम् पदार्थों का शोधन हो जाने पर विधिवाक्यों से निःसन्दिग्ध अभेदतत्त्व का साक्षात्कार साधक को करना चाहिये (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

[1]अस्थूलादिवचोनिरस्तनिखिलद्वैतप्रपञ्चं [2]परं
[3]जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तिवर्जितमि[4]दं [5]प्रत्यक्स्वरूपं [6]तथा ।
[8]एकीकृत्य [9]परस्परेण [10]पदयो[11]रर्थद्वयं [7]तत्त्वतः
[12]प्रत्यक्[13]चा[14]द्वय[15]मद्वयं [16]च [17]त[18]दिति [20]प्रेक्षस्व [19]निःसंशयम् ॥२६४॥

तत् पदार्थ व्यवहित और त्वम् पदार्थ अव्यवहित है, इन दोनों के अभिन्नत्व की सम्भावना बतलाते हैं (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

[7]अद्वैतं [6]परिशोधितं [1]भगवतो [2]विष्णोः [4]परं [3]य[5]त्पदं
[9]तच्च्छब्देन [11]समर्पितं [10]परिगृहीतादेय[8]मात्मप्रभम् ।
[1]यच्[2]चोपाधिविवर्जितं [3]तव [4]निजं [5]साक्षात्[6]स्वरूपं [7]तयो-
[9]रेकत्वं [8]परिवर्जितव्यवधिकं [10]प्रत्यक्ष[11]मीक्षस्व [12]भोः ॥२६५॥

परिशोधित तत्त्वम् पदार्थ की एकता का उपसंहार(पुष्पिताग्रा छन्द)

अनृतजडविभक्तदुःखतुच्छासहनवपुः परमं पदं मुरारेः ।
परिहृतसकलप्रपञ्चमात्मा तव तदवेहि तमो निरस्य वाक्यात् ।।२६६।।

आचार्य का उपदेश सुनने के बाद भी श्रद्धादि साधनों के अभाव में यथार्थ बोध नहीं होता (उपजाति छन्द)

श्रद्धत्स्व सोम्येति हि शास्ति शास्त्रं श्रद्धाधनत्वश्रुतिरस्ति चान्या ।
श्रद्धा तु यस्येत्यपरं च वाक्यमधीयते संशयकुत्सनाय ।।२६७।।

श्रद्धा से ही अज्ञान और संशय की निवृत्ति संभव है(वसन्ततिलका छन्द)

अज्ञो विनश्यति पुमानतिमूढभावादश्रद्धयोपहतबुद्धिरतोऽपि कष्टः ।
कष्टाच्च कष्टतर एव तु संशयात्मा दुःखी सदेति भगवानपि वासुदेवः ।।२६८।।

अखण्ड वाक्यार्थ श्रवण के पश्चात् कृतकृत्यता आ जाती है (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

रूपं तावकमुज्झितद्वयमभूदद्वैतमेवाञ्जसा

तच्चाद्वैतमपास्य मोहजनितं पारोक्ष्यमात्मा ह्यभूत् ।
एवं वेदशिरः पदान्वयवशादैकत्वमेकान्ततः
सिद्धं प्रत्यगनन्तयोरिति तव श्रेयः समाप्तिं गतम् ॥२६९॥

वैशेषिकों के मत से अखण्डार्थता का समर्थन (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

सम्बन्धः समवाय इत्यपि पदे वैशेषिकोच्चारिते
नाखण्डव्यतिरिक्तवस्तु वदितुं शक्तोऽनवस्थाभयात् ।
पञ्चानां समवायितेति वचनव्याघातभीतैरपि
सम्बन्धान्तरमस्य नाभिमनुते वैशेषिकः कातरः ॥२७०॥

प्राभाकरमत से भी अखण्डार्थता का समर्थन(वसन्ततिलका छन्द)

शब्दो गकार इति लौकिकमस्ति वाक्यं विस्पष्टमस्ति च पदद्वयमत्र वाक्ये ।
प्राभाकारे च समये न गकारमात्रादन्यत्पदद्वयनिगद्यमभीष्टमस्मिन् ॥२७१॥

आकृत्यधिकरणन्याय के साथ भी अखण्डार्थता का विरोध नहीं है (वसन्ततिलका छन्द)

शब्दत्वजातिवचनो न हि शब्दशब्दः श्रोत्रोपलम्भनतया तु निबन्धनेन ।
वर्णान्ब्रवीति न हि जातिरिहाभ्युपेता साक्षाद्गकारमयमाह गकारशब्दः ॥२७२॥

प्राभाकर के मत में अखण्डार्थता निर्विवाद है (वसन्ततिलका छन्द)

तस्मादखण्डविषये वचने विवादं प्राभाकराः परिहरन्तु न चेदशक्यम् ।
निर्वोढुमेतदिह वाक्यमितोऽन्यथा चेदस्यार्थकल्पनमभीप्सितमिष्टहानिः ॥२७३॥

पाणिनि के मतानुसार पूर्वोक्त अखण्डार्थ का संस्मरण कराते हैं (इन्दुवदना छन्द)

प्रातिपदिकान्यनतिरिक्तविषयाणि प्राह भगवान्प्रथमशब्दितविभक्त्या ।
पाणिनिरतः सकलतर्कसमयज्ञो वष्टि वचसोरनतिरिक्तविषयत्वम् ॥२७४॥

पिछले १०३ श्लोक द्वारा उत्थापित आक्षेप का समाधान (वंशस्थ छन्द)

इयं घटव्यक्तिरितीदृशेषु च प्रसिद्धमेवैकरसार्थगोचरं ।
पदद्वयं लोकवचःसु तेन च प्रशास्यते नात्र विवादसंग्रहः ॥२७५॥

पिछले १०१श्लोक द्वारा उत्थापित आक्षेप का समाधान(उपेन्द्रवज्रा छन्द)

न च प्रमाणान्तरयोग्यतायां प्रयोजकं स्यात्परिनिष्ठितत्वम् ।
यतः प्रमाणान्तरयोग्यतायां प्रयोजकं रूपरसादिमत्त्वम् ॥२७६॥

ब्रह्म में रूपादिमत्त्वाभाव का उपपादन(उपेन्द्रवज्रा छन्द)

ततोऽस्तु रूपादिविहीनरूपे प्रमान्तरागोचरचित्स्वरूपे ।
वचः प्रमाणान्तरनिःस्पृहं सत् प्रमाणमत्रात्मनि निर्विवादम् ॥२७७॥

पूर्वोक्त उपाधि में व्यभिचार के कारण अन्य उपाधि का प्रदर्शन(वसन्ततिलका छन्द)

लोकप्रसिद्धपदगोचरतानिमित्तमन्यप्रमाणविषयत्वमिह प्रसिद्धम् ।
लोकप्रसिद्धपदगोचरता न चास्मिन् ब्रह्मात्मनीति च तदत्र निवारणीयम् ॥२७८॥

कार्यबोधक वैदिक वाक्यों में लोकप्रसिद्ध पदवाच्यतारूप अर्थ के कारण ही सापेक्षात्मक अप्रामाण्य अवश्य प्रसक्त होगा (वसन्ततिलका छन्द)

लोकप्रयुक्तपदगोचरताऽस्ति कार्ये तेनाऽस्तु कार्यपरवाक्यमशेषतस्ते ।
मानान्तरेषु परतन्त्रतयाऽप्रमाणं स्वार्थे न दूषणमिदं श्रुतिमस्तकेषु ॥२७९॥

१०८ वें श्लोक द्वारा उत्थापित आक्षेप का निराकरण (उपेन्द्रवज्रा छन्द)

न च क्रियाकारितसंहतीनि पदानि लोके नियमेन वक्तुं ।
समीहते पक्वमतिः पदानां क्रियां विनाऽप्यन्वयदर्शनेन ॥२८०॥

पूर्वोक्त अर्थ में उदाहरण प्रदर्शन(उपजाति छन्द)

महीभुजोऽयं पुरुषो मनस्वी वनस्पतेस्तत्फलमित्यपीह ।
क्रियां विनाऽप्यन्वयवन्ति लोके पदानि दृष्टानि बहूनि वक्तुः ॥२८१॥

वेदान्तवाक्यों में क्रियापद भी देखा जाता है(वंशस्थ छन्द)

क्रियापदं वेदशिरःस्वपीष्यते विवक्षितार्थानुगुणं तु तन्मतम् ।
विवक्षितार्थप्रतिपत्तिघाति तु क्रियापदं स्वीकृतमप्यनर्थकम् ॥२८२॥

वेदान्त में अनुरूप क्रियापद का प्रदर्शन (वसन्ततिलका छन्द)

अस्त्यस्म्यसीति च पदं प्रचुरं क्रियाया वेदान्तवाक्यगतमादरतः पठन्ति ।
तन्मात्रतः सकलवेदशिरःपदानां संघातसिद्धिरिति वेदशिरोनिषण्णाः ॥२८३॥

प्राभाकरीय आक्षेप का अनुवाद (वसन्ततिलका छन्द)

यत्तु प्रमाणमनुभूतिरिति प्रमाणसामान्यलक्षणमनूद्य पुनर्वदन्ति ।
सत्ता प्रमाणघटनां प्रति योग्यताऽतो नास्त्यर्थनिष्ठवचनेष्वनपेक्षतेति ॥२८४॥

प्राभाकरों के उक्त आक्षेप का निराकरण (वसन्ततिलका छन्द)

तद् दुर्घटं न खलु संविदियं स्वयोग्या
न ह्यात्मनि स्थितिमुपैष्यति योग्यताऽस्याः ।
वस्त्वन्तरोपनिहितस्वपदत्वहेतो-
र्न ह्यात्मरूपदहने दहनस्य शक्तिः ॥२८५॥

प्राभाकरों के संवित्स्वप्रकाशत्व का दुष्परिणाम (वसन्ततिलका छन्द)

संवित्प्रमाणघटनां प्रति योग्यतां चेन्नेयं बिभर्त्ति न सती भवितुं समर्था ।
तद्योग्यतैव यदि मातृघटादिसत्ता तस्याप्यसत्त्वमिति शून्यमुपाजिहीथाः ॥२८६।

संविद्योग्यत्वरूप सत्ता का आग्रह प्राभाकरों को छोडना ही पडेगा (वसन्ततिलका छन्द)

वस्तुस्वभाव इति सत्त्वमतो गृहाण तच्च द्विधेति वितथाऽवितथत्वभेदात् ।
सत्त्वं द्विरूपमितरेतरसंकरेण सच्छब्दवाच्यमिति च व्यवहारकाले ॥२८७॥

भागत्यागलक्षणा से अभीष्ट-सिद्धि का प्रदर्शन(वसन्ततिलका छन्द)

उत्सृज्य तत्र वितथांशमथेतरस्मिन् संवित्स्वरूपपरमार्थसति स्वरूपे ।
बुद्धिं कुरु प्रणिदधत्प्रणयेन भूम्नि ब्रह्माहमस्मि परमार्थसदित्यजस्रम् ॥२८८॥

विगत १११श्लोक द्वारा कथित आक्षेप का परिहार(वसन्ततिलका छन्द)

ब्रह्म स्वयंप्रभमतः शबलेषु तस्य मानान्तारानधिगतेष्वपि शब्दशक्तिः ।
रूपेषु वृद्धजनसंव्यवहारहेतोः शक्या ग्रहीतुमुदितेन पथाऽनभिज्ञैः ॥२८९॥

त्रिगुण मायाविशिष्ट चैतन्य में ब्रह्मादि पदों की शक्तिग्रहण का उपाय(उपजाति छन्द)

लोकप्रसिद्धार्थपदान्तराणां समीपसङ्कीर्तनतोऽपि शक्तिः ।
ब्रह्मादिशब्दस्य सुखावसेया यथा हि यूपादिगिरस्तथैव ॥२९०॥

शक्तिग्रह के बिना भी वेदान्तवाक्य ब्रह्म में प्रमाण हो सकता है (उपेन्द्रवज्रा छन्द)

[5]वि[6]नाऽपि [4]शक्तिग्रहणं [3]पदानां [1]परात्मनो[2]र्वाचकभावभाजाम् ।
[11]भवे[9]त्परब्रह्मणि [8]वेदवाक्यात् [10]प्रतीति[7]रन्यप्रतिषेधनेन ॥२९१॥

शक्तिग्रह के बिना प्रतिषेधवाक्यस्थ पद ब्रह्म में कैसे प्रवृत्त होते हैं ?(वंशस्थ छन्द)

[2]न[1]ञः प्रपञ्चप्रतिपादकस्य च [6]प्रतीत्य [5]शक्तिं [4]व्यवहारतः [7]स्थितः ।
[3]पदस्य [12]शक्नोति [10]परं [11]समीक्षितुं [8]श्रुतेः [9]प्रपञ्चप्रतिषेधमार्गतः ॥२९२॥

११२ श्लोक द्वारा उत्थापित आक्षेप का समाधान (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

[1]ब्रह्मास्मीति [2]वचोनिविष्टपदयो[4]र्मानं [5]भवे[3]दन्वयः
[3]साक्षा[4]दद्वयवस्तु [1]तस्य [2]च [6]भवे[5]न्मेयं [1]तत[2]स्तद्गतेः ।
[1]य[2]द्यत्र [3]प्रमितिं [4]करोति [8]भवति [7]प्रामाण्य[6]मत्रा[5]स्य च
[5]स्पष्टं [7]दृष्टमि[4]दं हि [6]युक्तिघटितं [3]रूपे [1]यथा [2]चक्षुषः ॥२९३॥

अनधिगत-अबाधितगन्तृत्वरूप जो प्रमाण का सामान्य लक्षण है उसे यहाँ पर घटाते हैं (वसन्ततिलका छन्द)

मानान्तरानधिगतं परिनिष्ठितं यद् वेदः समर्पयति चेतसि तत्परः सन् ।
तत्तथ्यमेव भवतीति समाश्रयस्व श्रेयस्करो विधिगिरोऽवगतो यथैव ॥२९४॥

वेदान्तवाक्यों में पूर्वपक्षी द्वारा उत्थापित अप्रामाण्य शङ्का का परिहार (वसन्ततिलका छन्द)

निष्पन्नमेव यदि वा पुरुषप्रयत्ननिष्पाद्यमस्तु तदनङ्गमिह प्रमेये ।
एवं विधिर्भवतु शब्दसमन्वयो वा प्रामाण्यकारणमिदं न वदन्ति सन्तः ॥२९५॥

अननुगम दोष का वारण (वसन्ततिलका छन्द)

नीलैकगोचरतया नियतं न चक्षुर्नाप्यस्य पीतविषये नियमोऽस्ति शक्तेः ।
तद्वन्न वेदवचसामपि शक्तियोगः कार्यादिवस्तुषु कथंचन पक्षपाती ॥२९६॥

पूर्वोक्त मत की पुष्टि में जैमिनिन्याय का उत्थापन (वसन्ततिलका छन्द)

यद्बादरायणमतं परिगृह्य पूर्वं श्रेयस्करेऽनधिगते खलु चोदनायाः ।
प्रामाण्यमुक्तमिदमस्य समन्वयस्य वस्तुस्वरूपकथनेऽप्यविशिष्टमस्ति ॥२९७॥

शबरस्वामी एवं कुमारिल के मत से भी पूर्वोक्त सिद्धान्त का समर्थन(वसन्ततिलका छन्द)

मानान्तरानधिगतं त्ववगम्यमानं मेयं भवेदिति हि मेयविदो वदन्ति ।
मानान्तरानधिगते विषयेऽवबोधं कुर्वत्प्रमाणमिति मानविदां प्रसिद्धिः ॥२९८॥

विधिवाक्य एवं वेदान्तवाक्य का स्वार्थ में तात्पर्य एक सा है (वसन्ततिलका छन्द)

एवं सतीह यदि वेदशिरो न मानं श्रेयस्करे विधिगिरोऽपि न मानता स्यात् ।
श्रेयस्करे विधिगिरो यदि मानता स्याद् वस्तुस्वरूपकथनेऽपि समन्वयस्य ॥

मीमांसको द्वारा शङ्का का उत्थापन(वसन्ततिलका छन्द)

वस्तुस्वरूपकथने ननु नास्ति पुंसः किंचित्फलं विधिवचःसु पुनः प्रवृत्तिः ।
सम्भाव्यते फलमतः किल वस्तुनिष्ठं वाक्यं विधिस्तुतिपरं त्विति जैमिनीयाः ।

उक्त शङ्का का परिहार (वसन्ततिलका छन्द)

स्यादेतदेवमनवद्यपुमर्थसिद्धिर्वेदान्तवेद्यविषयावगतौ न चेत्स्यात् ।
स्वाराज्यमत्र कवलीकृतभोगभूमि संपूर्णमस्य विदुषो भवतीति दृष्टम् ॥३०१॥

आज्यावेक्षण की भाँति ब्रह्मदर्शन को कर्माङ्ग नहीं मान सकते(वसन्ततिलका छन्द)

यस्यापि विप्लुषि कृतार्थतया निषण्णाः शक्रादयो जलचरा इव सागरस्य ।
प्रत्यक्स्वभावकमपास्तसमस्तदुःखं तद्वैष्णवं सुखमवाप्तवतः किमन्यत् ॥३०२॥

ब्रह्मज्ञान के फल में कर्म और उपासना का फल समाहित है(वसन्ततिलका छन्द)

अज्ञानमात्मविषयं भवहेतुभूतं प्रच्छादकं च परमात्मसुखस्य तूर्णम् ।
त्रय्यन्तवाक्यजनितात्ममतिर्विपाकमासाद्य हन्ति यदि तत्र किमर्थनीयम् ॥३०३॥

नित्य आत्मसुख से प्राप्त परमात्मसुख अज्ञान से अप्राप्त सा भासता है (सुन्दरी छन्द)

करमुष्टिनिविष्टमुत्तमं कनकं प्रस्मरणादलब्धवत् ।
प्रतिभाति तदाप्तवाक्यतः प्रतिपत्त्या लभते यथा जनः ॥३०४॥

परमात्मपदं पराकृतद्वितीयं प्राप्तमपि स्वभावतः ।
अनवाप्तवदेव लिप्सते लभते चैवमयं प्रमाणतः ॥३०५॥

मोक्ष में क्रियाका प्रवेश सम्भव नहीं है(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

न स्वाध्यायवदाप्यता न च पुनस्त्रेताग्निवज्जन्यता

न व्रीह्यादिवदस्य संकृतियुजा नो सोमवद्धिक्रिया ।
पाठाधानजलोक्षणाभिषवणैः कूटस्थरूपं हि तद्
ब्रह्मापास्तविकारजन्ममरणं निःश्रेयसं साधनैः ॥३०६॥

आपात आप्यता का निराकरण (वसन्ततिलका छन्द)

ब्रह्मैव सन्निति वचः प्रथमश्रुतत्वादप्येतिशब्दमुपसंहरणस्थमुच्चैः ।
प्रच्यावयत्स्वविषयादुचिताद् बलीयो ब्रह्मात्मनोरनतिरेकमसाध्यमाह ॥३०७॥

सुबन्त पदमें गौणत्व और तिङन्त में प्रधानत्व शङ्का (इन्द्रवज्रा छन्द)

आग्नेय इत्याद्यपि तद्धितान्तमष्टाकपालादिसमन्वितं सत् ।
आख्यातशब्दस्य धुरं बिभर्ति भव्यार्थसंवित्तिनिबन्धनत्वात् ॥३०८॥

भूतार्थसमर्पक आख्यात पद में भी गौणत्व है (वसन्ततिलका छन्द)

आख्यातमेव सदिदं भवतीति नाम भव्येतरार्थमतिजन्मनिबन्धनत्वात् ।
अप्येतिशब्दमपि तद्वदिमं प्रतीमो भव्येतरार्थगतबुद्धिनिबन्धनत्वात् ॥३०९॥

भव्यार्थक न होने के कारण अप्येति पद गौण और ब्रह्म पद मुख्य है (वसन्ततिलका छन्द)

ब्रह्मैव सन्निविततिगिरं प्रति शेषितायै नाप्येतिगीरियममलं कथितोपपत्तेः ।
आख्यातमेव खलु नामपदस्य शेषि नाख्यातमेतदनृतत्वनिवेदकत्वात् ॥३१०॥

प्रधान-अप्रधान को शक्यार्थ से दूर करेगा ही (वसन्ततिलका छन्द)

ब्रह्मैव सन्निविति ततः प्रथमश्रुतं सदप्येतिशब्दमपसारयति स्ववाच्यात् ।
अस्याङ्गभावविरहादमुना सहातो ब्रह्मात्मनोरनतिरेकमुशन्ति धीराः ॥३११॥

ज्ञानकाण्ड एवं कर्मकाण्ड में विपरीतता का प्रदर्शन(वसन्ततिलका छन्द)

भव्याय भूतमिति किंच विधिप्रधाने काण्डे नयोऽयमिह तद्विपरीतमाहुः ।
भूताय भव्यमिति भूतपरं हि सर्वं वेदावसानमिति सूत्रकृदाचचक्षे ॥३१२॥

उक्त न्याय से ब्रह्म अर्थ में मुख्यत्व सिद्ध होता है (वसन्ततिलका छन्द)

ब्रह्मैव सन्निविति ततोऽपि बलिष्ठमेतदप्येतिशब्दमवसानगतं व्यपेक्ष्य ।
तस्मादमुष्य परिपीडकमेतदेव ब्रह्मैव सन्निवितिपदं गुणकल्पनायै ॥३१३॥

मोक्ष में कर्मादिजन्यत्व सम्भव नहीं है (वसन्ततिलका छन्द)

निःश्रेयसं न खलु साध्यमतः क्रियाभिर्ज्ञानेन वा द्वयसमुच्चयवर्त्मना वा ।
उत्पत्तिराप्तिविकृती न च संस्कृतिश्च यस्मान्न सम्भवति वर्णितवर्त्मनेह ॥३१४॥

वेदान्तवाक्य में प्रवर्तकत्वाभाव दूषण नहीं है अपितु भूषण है(वसन्ततिलका छन्द)

तस्मात्प्रवृत्तिविनिवृत्तिविवर्जितत्वं ब्रह्मात्मवस्तुविषयावगतेर्न दोषः ।
सर्वप्रवर्त्तकनिवर्त्तकमूलदाहात् स्वाराज्यहेतुरिति भूषणमेव तन्नः ॥३१५॥

ब्रह्म में अज्ञातत्वासम्भव आक्षेप का परिहार(वसन्ततिलका छन्द)

अज्ञातताऽपि घटतेऽत्र दृशोऽनुभूतेर्जानामि नाहमिति दृश्यपि दृश्यते हि ।
अज्ञातताऽनुभवनं न च वास्तवं तदज्ञाततोद्वहति कल्पिततां हि तस्याः ॥३१६।

अज्ञान के स्वरूप निरूपण (वसन्ततिलका छन्द)

अज्ञानमित्यजडबोधतिरस्क्रियात्मा जाडयं च मौढयमिति च प्रकृतिः प्रसिद्धा ।
सा चातिदुःस्थितवपुर्दृशमद्वितीयामालिङ्गति स्म घृतपिण्ड इवाग्निमिद्धम् ॥

तिमिरादि अनेक शब्दों से भावरूप अज्ञान को ही शास्त्र कहता है(वसन्ततिलका छन्द)

चिद्वस्तु नश्चिति भवेत्तिमिरं तमिस्रं तामिस्रमन्धतमसं जडिमा तमिस्रा ।
माया जगत्प्रकृतिरच्युतशक्तिरान्ध्यं निद्रा सुषुप्तिरनृतं प्रलयो गुणैक्यम् ॥३१८॥

शुद्ध चैतन्य ही अज्ञान का आश्रय और विषय है(रथोद्धता छन्द)

आश्रयत्वविषयत्वभागिनी निर्विभागचितिरेव केवला ।
पूर्वसिद्धतमसो हि पश्चिमो नाश्रयो भवति नापि गोचरः ॥३१९॥

अज्ञान में अभावरूपता की आशङ्का का निराकरण(वसन्ततिलका छन्द)

नाभावताऽस्य घटते वरणात्मकत्वान्नाभावमावरणमाहुरभावशौण्डाः ।
अज्ञानमावरणमाह च वासुदेवस्तद्भावरूपमिति तेन वयं प्रतीमः ॥३२०॥

वेदव्यासजी ने भी अज्ञान को भावरूप माना है (उपजाति छन्द)

एकः शत्रुर्न द्वितीयोऽस्ति शत्रुरज्ञानतुल्यः पुरुषस्य राजन् ।
येनावृतः कुरुते संप्रमत्तो घोराणि कर्माणि सुदारुणानि ॥३२१॥

अर्थापत्ति प्रमाण से भी अज्ञान में भावरूपता की सिद्धि (वसन्ततिलका छन्द)

जाडयं जगत्यनुगतं खलु भावरूपं मौढयं च पुंगतमिति प्रतिभाति तादृक् ।
जाडयं च मौढयमिति चानुभवप्रसिद्धमज्ञानमाहुरपवर्गपिधानदक्षम् ॥३२२॥

साभास अज्ञान में जगत्कारणता का प्रकारवर्णन(वसन्ततिलका छन्द)

साभासमेतदुपजीव्य चिदद्वितीया संसारकारणमिति प्रवदन्ति धीराः ।
साभासमेतदिति संसृतिकारणत्वे द्वारं परं भवति कारणता दृशस्तु ॥३२३॥

सांख्यादि मत का निराकरण(वसन्ततिलका छन्द)

यावद् दृशोऽन्यदिह संसृतिकारणं तद् वेदान्तवादिसमये न मतं जडत्वात् ।
यद्यज्जडं भवति संसृतिकारणं तन्नेति स्फुटं वदति सूत्रकृदत्र यस्मात् ॥३२४॥

सांख्यादि मतों का निराकरण भी ब्रह्मकारणतावाद का समर्थक है(द्रुतविलम्बित छन्द)

अजडकारणभावनिबन्धनं सकलमेव जडं न तु कारणम् ।
इति हि वेदशिरस्सु विचक्षणाः कपिलपक्षनिराकरणे जगुः ॥३२५॥

वेदान्त के एक देशी मत का प्रदर्शन(द्रुतविलम्बित छन्द)

शबलमात्मपदेन निगद्यते सकलमात्मजमित्यपि च श्रुतिः ।
शबलात्मपदं जगतस्ततः प्रकृतिरित्यपरे तु जना जगुः ॥३२६॥

चेतनप्रतिबिम्ब में जगत्कारणत्व का उपपादन (द्रुतविलम्बित छन्द)

सुकृतदुष्कृतकर्मणि कर्त्तृतां मतिगतात्मचितिप्रतिबिम्बकम् ।
व्रजति तद्वददः परमात्मनो जगति याति तमःप्रतिबिम्बकम् ॥३२७॥

प्रतिबिम्ब में कर्तृत्व होने पर भी उपादनत्व का होना सम्भव नहीं है(द्रुतविलम्बित छन्द)

सुकृतदुष्कृतयोः शबला यथा भवति कारणमात्मचितिस्तथा ।
गगनवायुपुरःसरकारणं परमचेतनता शबलाकृतिः ॥३२८॥

उक्त मत का विस्तार (द्रुतविलम्बित छन्द)

शबलताकवलीकृततावशात् परमचेतनतैव निगद्यते ।
शबलमात्मपदेन न कथ्यते शबलमात्मनि वृत्तिनिबन्धनम् ॥३२९॥

आत्मादि पदों का वाच्यार्थ विशिष्ट चैतन्य को मानना भ्रम है(द्रुतविलम्बित छन्द)

शबलतापरिधानसमन्वयात् परमचेतनतात्मगिरःपदम् ।
भवति तेन जनस्य तु विभ्रमः शबलमात्मगिरःपदमित्ययम् ॥३३०॥

सकल व्यवहारसिद्धि के लिये उक्त रीति का अनुसरण युक्तियुक्त है(द्रुतविलम्बित छन्द)

बहु निगद्य किमत्र वदाम्यहं शृणुत संग्रहमद्वयशासने ।
सकलवाङ्मनसातिगता चितिः सकलवाङ्मनसव्यवहारभाक् ॥३३१॥

अज्ञान में सर्वव्यवहार-प्रयोजकत्व की सिद्धि के लिए उचित दृष्टान्त (मन्दाक्रान्ता छन्द)

चित्रायागः पशुफल इति श्रूयमाणेऽपि चित्रा-
ऽपूर्वं द्वारं पशुफलतयाऽऽक्षिप्यते तत्र तद्वत् ।
चैतन्यात्मा जगदुदयकृच्छ्रूयतेऽत्रापि पश्चा-
न्मायादीनां भवति जगति द्वारभावः फलेऽस्मिन् ॥३३२॥

ब्रह्म में जन्मादिकारणत्वरूप तटस्थ लक्षण की सिद्धि के लिए कारणता माननी ही पडती है

(रथोद्धता छन्द)

कारणत्वमुपलक्षणं चितेर्ब्रह्मणो न खलु तद्विशेषणम् ।
इत्यपीदमुपपद्यते तदा चेतना भवति कारणं यदा ॥३३३॥

अन्य में कारणता मानने पर कारणता ब्रह्म का उपलक्षण नहीं बन सकेगी(रथोद्धता छन्द)

अन्यदेव यदि कारणं भवेत् कारणत्वमुपलक्षणं कथम् ।
चेतनस्य घटतेऽन्यगामिना वस्तुनान्यदुपलक्ष्यते यतः ॥३३४॥

ब्रह्म में अज्ञातत्वनिरूपण का उपसंहार(द्रुतविलम्बित छन्द)

अनवबुद्धमतः श्रुतिमस्तकैर्विषयतामुपपादयितुं क्षमम् ।
अनुभवात्मपदं तमसा यतः पिहितमेतदिह प्रतिभासते ॥३३५॥

पिछले १२० श्लोक द्वारा कहे गये अनिर्वचनीयता के उपर आक्षेप का समाधान अग्रिम प्रसङ्ग से करते हैं (वसन्ततिलका छन्द)

अज्ञानकल्पितमनिर्वचनीयमस्मिन्नाबालवृद्धमविवादपदं प्रसिद्धम् ।

स्वप्ने तथा च भगवानऽपि वक्ष्यतीदं सन्ध्येऽस्ति सृष्टिरिति पक्षनिराससिद्ध्यै ॥

कल्पित में भी सद्बोधकतासामर्थ्य का उपपादन (वसन्ततिलका छन्द)

मिथ्या शुषिः सवितृमण्डलमध्यवर्त्ती प्रत्यक्षदृष्टिपथमापतितोऽचिरेण ।
द्रष्टुः शरीरकरणप्रविभागरूपं मृत्युं निवेदयति सत्यमिति प्रसिद्धम् ॥३३७॥

सूत्रकार के मत से पूर्वोक्त अभिप्राय का स्पष्टीकरण(वसन्ततिलका छन्द)

स्वप्नः शुभाशुभफलागमसूचकः स्यान्
मिथ्याऽपि सन्निति च सूत्रकृदाह यत्नात् ।
गुर्वादि सर्वमिदमद्वयबुद्धिहेतु-
र्मायानिबन्धनमिति प्रतिपादनाय ॥३३८॥

भ्राँति-विषय में अर्निवचनीयता का उपपादन(वसन्ततिलका छन्द)

भ्रान्तिप्रतीतिविषयो न च सन्न चासन्नाकाशतत्कुसुमयोर्न हि सोऽस्ति नापि ।
तस्या भवेत्सदसदात्मकगोचरत्वं न ह्यस्ति तत्किमपि यत्सदसत्स्वरूपम् ।३३९।

अनिर्वचनीय पक्ष की उपपत्ति(वसन्ततिलका छन्द)

आलम्बनं च विरहय्य न विभ्रमस्य ज्ञानात्मनो भवति जन्म कदाचिदत्र ।
सिद्धं ततः सदसती व्यतिरिच्य किंचिदालम्बनं भ्रमधियः सकलप्रवादे ॥३४०॥

वेदान्तवाक्य में अपरोक्षज्ञानजनकत्व का समर्थन(वसन्ततिलका छन्द)

ब्रह्मात्मवस्तु निरवद्यचिदेकरूपं वह्न्युष्णतावदपरोक्षवपुः स्वभावात् ।
निर्दोषवेदशिरसो वचनादतोऽस्मिन् ब्रह्मात्मवस्तुनि भवेदपरोक्षबुद्धिः ॥३४१॥

वेदान्तवाक्य में निष्प्रयोजनता का परिहार (वसन्ततिलका छन्द)

सा चोपनेयरहिते विषयिण्यनन्तेऽनिर्वाच्यमग्रहणमात्रमपाकरोति ।
स्वोत्पत्तिलब्धनिजवस्तुबलेन तत्र तापत्रयं समुपशाम्यति निर्निमित्तम् ॥३४२॥

वेदान्त में कार्यपरत्व का निराकरण(वसन्ततिलका छन्द)

वाक्यात्प्रवर्त्तकनिवर्त्तकरूपभाजः पुंसः प्रवृत्तिमुपलभ्य धियोऽनुमानात् ।
कार्यान्विते शिशुरवैति पदस्य शक्तिमित्युच्यते यदि तु तत्र वयं वदामः ॥३४३॥

सिद्धान्ती द्वारा वक्तव्य अर्थ का स्पष्टीकरण(वसन्ततिलका छन्द)

योग्येतरान्वितपदार्थनिवेदने तु शब्दस्य शक्तिरिह वृद्धजनप्रयोगे ।
विज्ञायते न खलु कार्यसमन्वितेऽर्थे कार्याभिधायिषु पदेष्वपि तत्प्रसंगात् ॥

इतरकार्यार्थान्वित पदार्थ में शक्ति मानने पर अनवस्थाप्रसङ्ग(वसन्ततिलका छन्द)

कार्यान्वितार्थविषया यदि शब्दशक्तिः कार्यार्थवाचिषु लिङादिषु कार्यमन्यत् ।
वक्तव्यमापतति तत्र च तत्र चान्यद् वक्तव्यमेव भवतीत्यनवस्थितिः स्यात् ॥

सिद्धान्वितकार्य में लिङादि की शक्ति मानने पर नियमभङ्गापत्ति(वसन्ततिलका छन्द)

सिद्धान्वितं यदि लिङादिपदानि कार्यं ब्रूयुर्विनश्यति तदा नियमस्त्वदीयः ।
यो वर्णितः सकलमेव पदं स्वमर्थं कार्यान्वितं वदति नान्यदिति स्वशास्त्रे ॥

इतरार्थान्वित स्वार्थ में शक्ति मानने पर लाघव है(वसन्ततिलका छन्द)

योग्येतरान्वितनिमित्तकशब्दशक्तिव्युत्पत्तिरेव यदि संभवभागिनी स्यात् ।
आश्रीयते किमिति कार्यसमन्वितेऽर्थे शब्दस्य शक्तिरसदर्थविशेषणेन ॥३४७॥

व्यर्थ विशेषण का प्रयोग निरर्थक है (वसन्ततिलका छन्द)

यत्राविशेषितनिमित्तकताविरोधे किंचिन्निवारकमुदीक्षितमस्तु तत्र ।
किंचिद्विशेषणविशिष्टमभीष्टशक्तेर्वस्तु प्रयोजकमिदं पुनरत्र नास्ति ॥३४८॥

कार्यान्वयान्वयित्व कहने पर भी व्यर्थ विशेषणापत्ति दोष है ही (वसन्ततिलका छन्द)

कार्यान्वयान्वयिनि वस्तुनि शब्दशक्तिरित्युच्यते यदि तदापि समानमेतत् ।
अन्वीयमानवचनत्वमतोपपत्तौ कार्यान्वयान्वयिविशेषणगीर्वृथेति ॥३४९॥

क्वचित् कार्यत्व में शक्ति देखकर सर्वत्र उसे प्रयोजक मानोगे तो अतिप्रसङ्ग आयेगा ही (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

वक्तृज्ञानविवक्षयोरपि भवेच्छब्दार्थता तावके
पक्षे शब्दमनु प्रतीतिरुभयोरस्त्येव यस्मात्तयोः ।
यद्यच्छब्दमनु प्रतीतिपदवीमारोहदुत्प्रेक्ष्यते
तत्तद्वाच्यमिति स्थितौ न हि तयोः शब्दार्थतावर्जनम् ॥३५०॥

शब्द प्रमाण में अप्रामाण्यापत्ति दोष आ जायेगा(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

वेदे वक्तुरभावतस्तदुभयं नास्तीह यस्मादतः
शब्दो वाचकशक्तिमुज्झति निजां तत्र स्ववाच्यं विना ।
वाच्ये वाचकशक्तिमिच्छति भवान्नान्यत्र तत्र श्रुते-
रप्रामाण्यमिति स्फुटं तव भवेद् बुद्धेरनुत्पत्तितः ॥३५१॥

आपके मतानुसार सोमेन यजेत इत्यादि स्थल में सर्वाभिमत विशिष्ट विधि की सिद्धि नहीं होगी (प्रमिताक्षरा छन्द)

न च सोमयागपदयोरुभयोरपरस्परेण घटतेऽत्र युजा ।
पदजातमेतदखिलं हि निजं विषयं समर्पयति कार्ययुतम् ॥३५२॥

कार्यान्वयी अर्थ में शक्ति मानने पर भी पूर्वोक्त दोष रहेगा ही (वसन्ततिलका छन्द)

कार्यान्वयान्वयिनि शक्तिरिति स्थितौ च कार्यान्वयान्वितमतिर्न परस्परेण ।
संबन्धितामतिरतश्च न सिद्धिमेति सर्वो विशिष्टविधिरित्यपि दूषणं वः ॥३५३॥

वेदान्त पक्षमें पूर्वोक्तदोषाभाव का उपपादन(वसन्ततिलका छन्द)

योग्येतरान्वितपदार्थगतैव शब्दशक्तिः स्थिता यदि पुनर्घटते तदाऽयम् ।
सर्वो विशिष्टविधिरस्तु तथैव तस्माद् युक्तं तदेतरदितीदमपीह भाष्यम् ॥३५४॥

प्रवर्तकत्व की अन्यथानुपपत्ति से कार्यार्थत्व की सिद्धि नहीं हो पाती(वसन्ततिलका छन्द)

शब्दः प्रवृत्तिजनको न तु बोधकश्चेन्नैतत्प्रवर्तकधियो जनकत्वहेतोः ।
इष्टाभ्युपायमतिजन्मनिमित्तभूतः शब्दः प्रवर्तयति नैष पुनः पुमांसम् ॥३५५॥

गौरव तथा विशिष्ट विधि के लोप हो जाने के कारण आप का पक्ष असङ्गत है(वसन्ततिलका छन्द)

तस्मादसंगतमिदं यदुशन्ति केचित् कार्यान्वितार्थविषयैव तु शब्दशक्तिः ।
तत्र प्रयोगमभिवीक्ष्य तथा प्रतीतिः कल्प्येति वर्णितनिजेष्टविघातहेतोः ॥३५६॥

अलौकिक नियोग में शब्दशक्तिग्रह का होना सम्भव नहीं(वसन्ततिलका छन्द)

वेदैकगम्यमिति कार्यमभीष्टमस्मिञ्छक्तिग्रहोऽपि न पदस्य समञ्जसोऽयम् ।
शक्तिग्रहं च परिहृत्य न बोधकत्वं शब्दस्य शक्यमिह वक्तुमशङ्कितेन ॥३५७।

लोक-प्रसिद्ध ब्रह्म अर्थ में शब्दशक्तिग्रह सुलभ है(वसन्ततिलका छन्द)

शश्वत्स्वयंप्रभमलुप्तचिदात्मभूतं विष्णोः परं पदममुत्र तु शब्दशक्तिः ।
शक्या ग्रहीतुमतिबुद्धिमनस्यपीति शास्त्रप्रमाणकमदः प्रवदन्ति सन्तः ॥३५८॥

सिद्धार्थ वाक्य में शक्तिग्रह के लिये दृष्टान्त (वसन्ततिलका छन्द)

जातः सुतः सकलवंशविवर्द्धनस्ते विप्रेति वाक्यसमनन्तरमस्य बुद्धिः ।
श्रोतुर्मुखाकृतिवशेन तु पुत्रजन्मवस्तुन्यवश्यमनुमीयत एव बालैः ॥३५९॥

उक्त दृष्टान्त को दार्ष्टान्त में बताते हैं (वसन्ततिलका छन्द)

भूतार्थनिष्ठवचनादपि शब्दशक्तिः शक्या ग्रहीतुमुदितेन पथाऽनभिज्ञैः ।
तत्र प्रवर्त्तकनिवर्त्तकवाक्यमूलशक्तिग्रहैकनियमस्य न हेतुरस्ति ॥३६०॥

पहले सपिण्ड अर्थ में सपिण्ड पद का शक्तिग्रह होता है (वसन्ततिलका छन्द)

सामान्यतः प्रथममेष पदार्थपिण्डो वाच्योऽस्य वाचकमिदं पदपिण्डरूपम् ।
इत्याकलय्य पुनरेष विशेषतोऽपि शब्दार्थसंगतिमवैति जनस्तटस्थः ॥३६१॥

प्रसिद्धार्थक पदों की सन्निधि से भी अप्रसिद्धार्थक पद का शक्तिग्रह संभव हो जाता है (मन्दाक्रान्ता छन्द)

काष्ठैः स्थाल्यां पचति विविधैरोदनं पूर्णकेति
श्रुत्वा बालः सपदि मनुते काष्ठशब्दस्य शक्तिम् ।
दृष्ट्वा तस्मिन्पचनकरणं प्रज्वलत्काष्ठजातं
न्यायोपायादितरवचसां शक्तिषु प्राक् प्रवीणः ॥३६२॥

प्राभाकर के नियोग में अप्रामाणिकत्वप्रदर्शन(हरिणी छन्द)

न च किमपि नः कार्यं नाम प्रमाणपथानुगं
यदिह तु पुनर्लिङ्लोडादेरुपैष्यति वाच्यताम् ।
न खलु तदितो धात्वर्थादेः पृथग्व्यवसीयते
व्रजतु तदिह श्रेयोहेतुर्लिङादिपदार्थताम् ॥३६३॥

इष्टसाधनताज्ञान में प्रवर्तकत्व का उपपादन (हरिणी छन्द)

[8]न [5]खलु [1]जगति [3]श्रेयोहेतुप्रतीत्युदया[4]दृते
[2]पुरुषवचनात् [6]क्वापि [5]प्राज्ञः [7]प्रवर्त्ति[9]तुमर्हति ।
[1]पुरुषवचना[2]च्छ्रेयोहेतुप्रतीत्युदयात् [3]पुन-
[5]स्तदनुवशगो [4]रागोत्पत्तौ [6]ततः [7]स हि [8]चेष्टते ॥३६४॥

राग साक्षात् प्रवर्तक होने पर भी साक्षात् शब्दजन्य न होने के कारण इष्टसाधनताज्ञान में ही लिङादि की शक्ति माननी चाहीये (वंशस्थ छन्द)

[1]नयनिपुणधी[2]र्बाल[4]श्चेष्टां [5]समीक्ष्य [3]समीहितुः
[9]कृततदुचितव्याप्तिज्ञानः [6]पुरा [7]निज [8]आत्मनि ।
[1]परतनुगतं [2]श्रेयोहेतुप्रतीत्युदयोत्थितं
[3]चरितविषये [4]रागं [5]तस्य [6]प्रवर्त्तकमिङ्[7]गति ॥३६५॥

उक्त अनुमान का स्पष्टीकरण(वंशस्थ छन्द)

[2]प्रवर्त्तकोत्थाननिबन्धने [1]ततः [3]समीहितोपायविशेषवस्तुनि ।

गिरोऽनुमाय प्रतिपत्तिहेतुतां विशेषसिद्धौ तु समीहते पुनः ॥३६६॥

पूर्वोक्त प्रयत्नशीलता का स्वरूप प्रदर्शन (वंशस्थ छन्द)

पदान्तरस्यागमनादिहीन्यतस्तथा पदस्योद्धरणादितो गिरः ।
विशेषसिद्धिं लभते प्रयत्नवान् पदार्थसंबन्धगतां विचक्षणः ॥३६७॥

पूर्वोक्त अभिप्रायका स्पष्टीकरण(वंशस्थ छन्द)

लडादिशब्देऽपगते लिङादौ प्रत्यागतेऽभीप्सितसाधनत्वम् ।
प्रतीयते तेन लिङादिशब्दस्तदर्थवाचीति स वेत्ति बालः ॥३६८॥

विशेषार्थ निश्चय के लिए अन्वितत्वमात्र पक्षग्रहण पर्याप्त है(वसन्ततिलका छन्द)

योग्येतरान्विततया न च वाच्यताऽस्य कार्यान्वितत्ववपुषा सुतरां न चेष्टा ।
किंत्वन्वितत्ववपुषो न विशेषणस्य किंचित्प्रयोजकमिहास्तिनिरूपणायाम् ॥

अभिहितान्वयादी मत का अनुवाद(वसन्ततिलका छन्द)

यत्केचिदाहुरभिधाय निजान्पदार्थानेतावतोपरतवन्ति पदानि तेभ्यः ।

पश्चाद्विशेषणविशेष्यतया तु तेषां संसर्गबुद्धिरपराऽवतरिष्यतीति ॥३७०॥

उक्त मत का निराकरण(वसन्ततिलका छन्द)

तद् दुर्घटं न खलु किंचिदपि प्रमाणमस्याः प्रसाधकमुदीरितकल्पानायाः ।
येनोपलब्धिविषयत्वमुपागतानि संसृष्टमेव तु पदानि पदार्थमाहुः ॥३७१॥

अन्वय-व्यतिरेक से अन्वितपदार्थ में ही शक्तिग्रह मानना उचित है(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

नासंसृष्टपदार्थबुद्धिपदयोः पूर्वापरत्वप्रमां
मुक्त्वा कारणकार्यतावगतये कश्चित्समर्थस्तयोः ।
पौर्वापर्यमुदीक्ष्य हेतुफलतां सर्वत्र संगृह्णते
नोचेत्सर्वमसंगतं भवति वः सर्वव्यवस्थाहतेः ॥३७२॥

स्वर्ग एवं याग में पौर्वापर्य-ग्रह के बिना जैसे कार्यकारणता भाव माना गया है, वैसे ही इस सन्दर्भ में भी माना जा सकता है- इस आक्षेपका समाधान (वसन्ततिलका छन्द)

पूर्वापरान्वयबलेन हि कारणत्वकार्यत्वसंगतिमिह प्रतियन्ति लोके ।

नो चेद्द्विवेदनियमो न च तत्र कर्तुं कार्याणि कारणविशेषमुपाददीरन् ॥३७३॥

अभिहिता अन्वयवाद का निराकरण (प्रमिताक्षरा छन्द)

पदजातबुद्धिजनिता भवति व्यतिषक्तबुद्धिरिति तावदिह ।
न विगानमस्ति भवतामपि चेद् व्यवधानकल्पनमकारणकम् ॥३७४॥

काष्ठ जलने के बाद ही जैसे पाक को जन्म देता है, वैसे ही पदार्थस्मरण द्वारा व्यवधान मानने में कोई आपत्ति नहीं है । इसका समाधान करते है(प्रमिताक्षरा छन्द)

व्यतिषक्तबुद्धिजनकं सकलं पदजातमित्यनुमतं यदि वः ।
व्यवधानकल्पनविडम्बनया किमिहाञ्जसैव जनकं भवतु ॥३७५॥

वैदिक सोमादि क्रयण में व्यवधान दीखने पर भी लोक में व्यवधान की कल्पना उचित नहीं है(मन्दाक्रान्ता छन्द)

पारम्पर्यं ह्यगतिकगतिं कारणादाश्रयन्ते
नोत्सर्गेण स्फुरति विदुषां यत्र तत्र प्रनाडी ।
श्रुत्या सोमक्रयमनुगतः साधनत्वेन हित्वा

साक्षाद्भावं ह्यरुणिमगुणः प्रापदेनामशक्तेः ॥३७६॥

पदार्थ में अन्वयबोधजनकत्व का दृष्टान्त (रथोद्धता छन्द)

श्वेतिमानमभिपश्यतः पुरः शृण्वतस्तदनु हेषितध्वनिम् ।
तद्वदत्र खुरमु रस्वनं श्वेतरूपतुरगोऽटतीति धीः ॥३७७॥

उक्त दृष्टान्त का दार्ष्टान्त में संघटन (रथोद्धता छन्द)

तद्वदत्र पदजातबुद्धिभिर्बोधिताखिलपदार्थहेतुकः ।
सर्वशब्दविषयार्थसंगतेः प्रत्ययो भवति योग्यतादिभिः ॥३७८॥

उक्त आक्षेप का निराकरण(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

नैतत् क्लृप्तनिमित्ततोऽपि घटते संसर्गधीरीदृशी
श्वेतोऽश्वस्त्वरितोऽभिधावतितरामित्यादिकार्योत्थिता ।
कार्यं क्लृप्तनिबन्धनं यदि भवेन्नास्यापरं कारणं
कल्प्यं तेन पदार्थजातजनिता नैषा मतिर्लिङ्गजा ॥३७९॥

पदार्थ प्रमाण तथा तज्जन्य फल का निराकरण (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

पादार्थं न पृथक् प्रमाणमपरं नानाप्रमाणोद्भवं
नाप्येतत्फलमत्र पक्षयुगले कल्प्यं निमित्तान्तरम् ।
क्लृप्तं लिङ्गमतोऽपि निर्वहति चेत्संसर्गधीरीदृशी
पादार्थी न पृथक् प्रमा न च फलं नानाप्रमाणोद्भवम् ॥३८०॥

अन्वित पदार्थाभिधान पक्ष का समर्थन(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

नासंसृष्टमतो वदन्ति न च तान्याहुः क्रियासङ्गतं
योग्येनान्वितमेव केवलममून्याहुः स्वमर्थं यतः ।
एवं सत्यपवर्जितक्रियमलं निष्पन्नरूपं सदा
संसर्गादिविवर्जितं च वदितुं वस्तुस्वरूपं श्रुतिः ॥३८१॥

वेद में अभिहितान्वयवाद या अन्विताभिधानवाद दोनों ही असङ्गत है (पुष्पिताग्रा छन्द)

अभिहितघटनाऽथ वाऽन्वितानामभिहितिरस्त्वथ वा न पक्षपातः ।

[10]क्वचिदपि [11]समये[16]ऽस्ति [12]नः [13]कदाचिद् [2]बहुघटनात्मकवस्तुनिष्ठवाक्ये ।।३८२।।

उक्त पक्ष का समर्थन(पुष्पिताग्रा छन्द)

[2]अभिहितघटना [3]न [4]चोपपन्ना [1]परदृशि [1]ना[3]भिहितिस्[4]तै[2]र्थान्वितानाम् ।
[10]अनधिकविकलार्थगोचरत्वा[9]न्न [7]त[8]दुभयं [5]श्रुतिमस्तके [6]पदानाम् ।।३८३।।

अन्विताभिधानवाद का वेदान्त में आंशिक उपयोग है(पुष्पिताग्रा छन्द)

[2]अभिहितघटना [1]यदा [3]तदानीं [6]स्मृतिसमबुद्धियुगं [4]पदे [7]विधत्तः ।
[5]परदृशि [2]पुन[1]रन्विताभिधाने [4]पदयुगलात्[5]स्मृतियुग्ममे[6]व [3]पूर्वम् ।।३८४।।

उक्त दोनों वादों के वाक्यार्थबोध में वैशिष्ट्य प्रदर्शन(पुष्पिताग्रा छन्द)

[3]स्मृतिसमपदजन्यबुद्धियुग्मात् [2]परदृशि [4]मोहनिवर्त्तनं [1]परेषाम् ।
[2]परदृशि [3]पदजस्मृतिद्वये [7]स्यात् [4]पदयुगलात्[5]प्रमितेः [6]समुद्भवो [1]नः ।।३८५।।

भाट्टमत का प्रदर्शन(शालिनी छन्द)

[2]औदासीन्यप्रच्युतिप्रापके[3]ऽर्थे [4]लिङ्लोडादे[1]र्लोकतो [7]ज्ञातशक्तेः ।

पुंसो वेदे प्रेरकत्वेन कल्प्या लिङ्लोडादेर्भावनैवानृतन्त्रे ॥३८६॥

पूर्व श्लोकार्थ का वर्णन(शालिनी छन्द)

आज्ञाद्यर्थः प्रेरकः पौरुषेये लिङ्लोडादेर्भावना वेदवाक्ये ।
पुंसोऽभावात्तद्गताज्ञाद्यभावात् पुंसंबन्धात्प्रेरकास्ते हि वाक्ये ॥३८७॥

भावना का पूर्ण परिचय प्रदर्शन(शालिनी छन्द)

लिङ्लोडादिर्भावकस्तत्र भाव्यानुष्ठेयेऽर्थे पुंप्रवृत्तिः प्रसिद्धा ।
लिङ्लोडादेः पुंप्रवृत्त्यंशनिष्ठो व्यापारो यस्तं विदुर्भावनेति ॥३८८॥

भावना के अनुरूप तीन अंशो में से साध्य अंश को पूर्वश्लोक में बतलाया गया, शेष साधन एवं इतिकर्त्तव्यता अंश को इस श्लोक में दिखलाते हैं (शालिनी छन्द)

करणमिह लिङादेर्ज्ञानमेवाङ्गभागः पुनरभिरुचिहेतुर्दृश्यते च प्रशंसा ।
विधिरयमिह तन्त्रे जैमिनीये न कार्यं न च भवति विधिर्नः श्रेयसो हेतुरर्थः ॥

लिङादिपदवाच्य शाब्दीभावना तथा आर्थीभावना में साध्य-साधनत्व का प्रदर्शन(मालिनी छन्द)

[3]विधि[1]रिह [5]गुणभूतः [2]प्रत्ययार्थोऽपि [4]नित्यं
[6]भवति [3]च [4]पुरुषोत्था [5]भावना[1]ऽस्य [2]प्रधानम्।
[7]भवति [1]दशलकारप्रत्ययैः [3]सा[6]ऽभिधेया
[5]विधिविहितलकारै[4]र्भावना [2]शब्दहेतुः ॥३९०॥

स्वर्गादि पुरुषार्थ का साधक होने से आर्थीभावना की प्रधानता(पुष्पिताग्रा छन्द)

[5]भवति [2]च [4]पुरुषार्थकर्मिके[1]यं [3]पुरुषनिमित्तकभावना, [5]न [4]तद्वत्।
[6]भवति [3]तु [1]विधिशब्दकर्तृ[2]काऽन्या [3]न [4]हि [2]निरवद्यपुमर्थता [1]प्रवृत्तेः ॥३९१।

दोनों ही भावनाओं में भाव्य-वैलक्षण्य का कथन(पुष्पिताग्रा छन्द)

[4]अभिमतपशुपुत्रवृष्टिनाकप्रभृतिकभाव्यगता [2]हि [3]भावने[1]यम्।
[3]अनभिमतसुदुष्करातिदुःखां [6]नयति [2]तु [5]भाव्यपदं [4]प्रवृत्ति[1]र्मन्या ॥३९२॥

उक्त रीति से भाट्ट मत में भी अन्विताभिधान का प्रसङ्ग आ जायेगा जिसे भाट्ट इष्टापत्ति बतला रहे हैं(रथोद्धता छन्द)

प्रत्ययप्रकृतिशब्दतो बहिर्विद्यतेऽभिहितसङ्गतिश्च नः ।
प्रत्ययप्रकृतिशब्दयोः पुनर्नित्यमन्वितधियो निमित्तता ॥३९३॥

उक्त मान्यताओं का निष्कर्ष (रथोद्धता छन्द)

भावनाद्वयमतोऽवबोध्यते धातुवाच्यघटितं लिङादिभिः ।
प्रत्ययार्थगुणवस्तुवाचिनो धातवः प्रकृतयो हि धातवः ॥३९४॥

उक्त भावनाद्वय ही जैमिनि आदि को अभिमत है(वसन्ततिलका छन्द)

भव्याय भूतमुपदिश्यत इत्यवोचन् पूज्यास्ततः सकलमेव तु वेदशास्त्रम् ।
कार्यप्रधानमिति निश्चिनुमोऽस्मदीये तन्त्रे च कार्यमुदितः पुरुषप्रयत्नः ॥३९५॥

उक्त भाट्ट मत का अब निराकरण करते हैं(द्रुतविलम्बित छन्द)

अभिदधाति करोति च लिङ्पदं श्रुतिवचःसु निजामपि भावनाम् ।
न च करोति न वक्ति च तां पुनर्नरवचःस्विति दुःशकमुच्यते ॥३९६॥

लौकिक वैदिक शब्दों के अर्थो में भेद मानना उचित नहीं है (वसन्ततिलका छन्द)

वक्तृत्वमेव घटते यदि लिङ्पदस्य सर्वत्र नार्द्धजरतीयमीदं प्रशस्तम् ।
सामर्थ्यमेकरसमेव यदोपपन्नं नानारसं न खलु तत्परिकल्पनीयम् ॥३९७॥

वेदान्त पक्ष में उक्त दोषाभाव(स्रग्धरा छन्द)

श्रेयोहेतुत्ववाची यदि भवति तदा संभवत्येकरूपा
शक्तिस्तस्याभिधाने न तु भवति तदा कारकोऽयं प्रवृत्तेः ।
श्रेयोहेतुश्च वाच्यः श्रुतिवचसि तदा पौरुषेये च तुल्यः
क्लृप्तश्चासौ न कल्प्यः श्रुतिवचसि यथा भावना लिङ्निबद्धा ॥३९८॥

आर्थीभावना का निराकरण प्रारम्भ (इन्द्रवज्रा छन्द)

धात्वार्थतोऽन्या न च भावानाऽस्ति यां भावनां वक्तुमलं लकारः ।
धात्वर्थमुद्रिच्य न पुंप्रयत्नो लोके यतो भाति निरूपणायाम् ॥३९९॥

कर्मकाण्ड में भी नियोगवाद या भावनावाद जब सिद्ध नहीं होता तो वेदान्त में उनकी चर्चा निरर्थक ही है(उपेन्द्रवज्रा छन्द)

[5]न [2]कर्मकाण्डे[3]ऽपि [1]ततो [4]नियोगो [5]न [3]भावना[4]ऽप्यु[1]क्तनयेन [2]तस्मिन् ।
[5]न [3]तद् [4]द्वयं [2]वेदशिरःसु [1]तस्मात्[1]ततो [4]न [3]कार्यार्थपराणि [2]तानि ॥४००॥

कर्मकाण्ड भी कार्यपरत्व का व्यभिचारस्थल है(सुन्दरी छन्द)

[1]अपि [2]च [6]प्रतिषेधचोदना-
विषयः [7]स्यात्[3]प्रतिषिद्धकर्मणः ।
[4]फलगर्द्धिनिवृत्ति[5]रेव [1]सा
[2]न [3]नियोगो [4]न [5]च [6]तस्य [7]गोचरः ॥४०१॥

नञ् का शक्यार्थ तो निवृत्ति ही है,कहीं कहीं किसी कारणविशेष से अनुष्ठेय अर्थ में लक्षणा की जाती है (वंशस्थ छन्द)

[2]नञः [5]स्वसम्बन्धिपदार्थवस्तुनो
[6]निवृत्ति[4]रर्थः [3]सहजः [1]प्रसिद्धितः ।
[1]अनीक्षणादौ [2]व्रतशब्दसङ्गतेः

[5]परप्रयुक्ता [6]खलु [3]मानसी [4]क्रिया ।।४०२।।

विधि एवं निषेधवाक्यों में भेद मानना ही पडेगा (सुन्दरी छन्द)

[1]अपि [2]च [6]प्रतिषेधचोदना
[7]न [8]तु [9]भिद्येत [3]भवन्[4]मते [5]विधेः ।
[4]विधिरे[5]व [2]तु [3]चोदनाऽ[1]खिला
[4]न [5]हि [1]वेदे [3]वचनं [2]निवर्त्तकम् ।।४०३।।

निषेधवाक्यों को सिद्धार्थक मानने पर लाभप्रदर्शन(प्रमिताक्षरा छन्द)

[2]प्रतिषेधवाक्यव[1]दतः [3]सकलं
[4]विधिशून्यमे[5]व [9]फलव[10]द्भवतु ।
[8]वचनं [6]त्रयीशिरसि [7]तत्त्वमसि-
प्रभृति [1]प्रतीचि [2]तमसो[3]ऽपहतेः ।।४०४।।

मीमांसकों के आग्रह पर नञ् के मुख्यार्थ पर्युदास का उपपादन(रथोद्धता छन्द)

नामधातुसहितो नञिष्यते पर्युदासविषयो मनीषिभिः ।
न प्रसक्तविनिवृत्तिवाचकोऽब्राह्मणादिषु तथोपलम्भनात् ॥४०५॥

नाम एवं धातु से सम्बद्ध नञ् पद का उदाहरण(इन्द्रवज्रा छन्द)

अब्राह्मणाधर्मगिरोर्नञेष नामान्वयादाश्रितपर्युदासः ।
अन्यं विरुद्धं च समाभिधत्ते नोद्यन्तमित्यादिषु धातुयोगात् ॥४०६॥

धातु सम्बद्ध नञ् की पर्युदासवृत्ति का प्रकार प्रदर्शन(उपजाति छन्द)

नोद्यन्तमित्यत्र नञोक्षणार्थसमीपकार्यान्तरमुच्यते हि ।
ततश्च नेक्षिष्य इतीदृशी स्यात् संकल्पना संनिहितत्वहेतोः ॥४०७॥

प्रतिषेधार्थक नञ् का उदाहरण(उपेन्द्रवज्रा छन्द)

द्विजं न हन्यान्न कलञ्जमद्यादित्यादिवाक्ये विधिनाऽस्य योगात् ।
प्रसज्यमानार्थनिवृत्तिमात्रं नञोऽर्थ इत्याश्रितमादरेण ॥४०८॥

प्राभाकर उक्त स्थल में भी पर्युदास ही मानते है(वंशस्थ छन्द)

नाद्यां न हन्यां न पिबेयमित्यपि वाक्येषु नञ्वस्तु वदन्ति मानसीम् ।
संकल्परूपां विधिबन्धिनीं क्रियां नोद्यन्तमित्यादिवचःस्विवापरे ॥४०९॥

पर्युदासवृत्ति माने का वास्तविक कारण (उपजाति छन्द)

वाक्येषु नञ्वस्तु निवृत्तिमात्रं प्रमेयमित्यभ्युपगम्यमाने ।
प्रत्यक्षमानेन विरुध्यते हि निवृत्तिशास्त्रं न च युज्यते तत् ॥४१०॥

भाष्यकार शबरस्वामी को भी सभी वाक्यों में प्रवर्तकत्व ही मान्य है (वंशस्थ छन्द)

प्रवर्त्तकं वाक्यमुवाच चोदनां निवर्त्तकं नैवमुवाच भाष्यकृत् ।
ततश्च विद्मो न हि चोदनाऽस्ति सा प्रवर्त्तिका या न भवेदिति स्थितिः ॥४११॥

पूर्वोक्त प्राभाकरीय द्विविध नञर्थ में दोषप्रदर्शन(उपेन्द्रवज्रा छन्द)

न नामयोगो न च धातुयोगो लिङादियोगोऽपि न कारणं नः ।
नञः स्वसम्बन्धिनिवृत्तिमात्रं स्वतोऽभिधेयं परतोऽन्यदस्य ॥४१२॥

पूर्वोक्त श्लाक में कहे गये नञर्थ-निर्णय के कारणों के लिए उदाहरण(उपेन्द्रवज्रा छन्द)

तथाहि नाग्रे करिणीति नाम्ना गजोऽत्र नास्तीति च धातुयोगे ।
लिङ्ादियोगेऽपि निवृत्तिरर्थो विषं न खादेदिति नञ्पदस्य ॥४१३॥

वेद में लोक सामानता का प्रदर्शन(उपजाति छन्द)

तथा श्रुतौ नेति वचःसु नाम्नि नानेह नास्तीति च धातुयोगे ।
तथा विधाने न कलञ्जमद्यान्नञोऽविशेषेण निवृत्तिरर्थः ॥४१४॥

पर्युदास अर्थ के व्यवस्थापकनिमित्त का वर्णन(मन्दाक्रान्ता छन्द)

औदासीन्यं पुरुषगतमेवाविशेषान्नञोऽर्थो
भ्रान्तिप्राप्ते सति तु विषये यत्र यत्रैष दृष्टः ।
नौदासीन्यं पृथगिह भवेदात्मचिन्मात्ररूपात्
सिद्धे वस्तुन्यवसितमतो वेदवाक्यं निषेधे ॥४१५॥

पूर्वोक्त भाष्यविरोध का परिहार (वंशश्थ छन्द)

प्रवर्त्तकं वाक्यमुवाच चोदना निधाय बुद्धौ वचनं निवर्त्तकम् ।
द्वितीयसूत्रे भगवान् बहुश्रुतो न चोदनाद्वित्वनिवारणाय तत् ॥४१६॥

निषेधवाक्यों में प्राभाकरीय मतोपपादन(द्रुतविलम्बित छन्द)

ननु निवृत्तिपरत्वमुदीरितं विघटयामि निषेधगिरामहम् ।
न हि कलन्जमिति प्रतिपाद्यते यदि तदा नयनेन विरुध्यते ॥४१७॥

भक्षणादि के अभाव को भी नञर्थ मानना ठीक नहीं (द्रुतविलम्बित छन्द)

अथ कलञ्जपदार्थगभक्षणं न हि तदप्यमुनैव विरुध्यते ।
अथ तदीयफलस्पृहयाऽन्वयो न हि तदप्यनुभूतिपराहतम् ॥४१८॥

नञ् का अन्वय नियोगरूप प्रत्ययार्थ के साथ भी असङ्गत है(द्रुतविलम्बित छन्द)

अथ तदीयनियोगनिवर्त्तनं भवतु भक्षणमस्तु तदिच्छया ।
न हि नियोगनिवृत्तिनिवेदने सति कलञ्जमभक्ष्यमितीङ्गयते ॥४१९॥

पूर्वोक्त त्रिविध अन्वय के अतिरिक्त नञ् की चतुर्थ गति नहीं है(द्रुतविलम्बित छन्द)

इह कलञ्जपदेन नञन्वयो भवति वास्य नञोऽदिसमागमः ।
अदिगतेन लिङादिपदेन वा सह समेति नञत्र गतिस्त्रयी ॥४२०॥

परिशेषन्याय से निवृत्तिनियोग अर्थ मानना ही उचित है (द्रुतविलम्बित छन्द)

उदितपक्षपरिग्रहकारिणां न च निषेधगिरामुपपादने ।
भवति शक्तिरतश्च निषेधगीरपि नियोगपराऽभ्युपगम्यताम् ॥४२१॥

निवृत्तिनियोग में भेदोपपादन(उपजाति छन्द)

यथा च यागाद्यनुबन्धभेदाद्भिन्नेषु शास्त्रेषु नियोगभेदः ।
निवृत्तिभेदादपि तद्वदस्य निवृत्तयोऽपि ह्यनुबन्धभूताः ॥४२२॥

निषिद्धानुष्ठान में अनर्थहेतुत्व का उपपादन(उपेन्द्रवज्रा छन्द)

निवृत्तिसिद्ध्याऽपि नियोगसिद्धिः प्रवर्त्तमानस्य न गर्त्तपातः ।
निषिद्धचेष्टा निरयस्य हेतुर्नियोगतो नाध्यवसीते हि ॥४२३॥

निवृत्तिनियोगानुष्ठान में प्रवृत्ति के लिये सैद्धान्तिक रहस्योद्घाटन(वंशस्थ छन्द)

नियोग एवैष पुमान्नियुज्यते नियोगसिद्ध्यै तु पुनर्नियुज्यते ।
परत्र कर्मस्वथ वा निवृत्तिषु स्थितिः प्रसिद्धेति नियोगवादिनाम् ॥४२४॥

अपनी सिद्धि के लिए निवृत्ति में नियोग की प्रयोजकता (वंशस्थ छन्द)

प्रवृद्धरागस्य निवृत्तयोऽस्थिरास्ततः स्थिरत्वाय नियुज्यते पुमान् ।
निवृत्तिदेशेषु नियोगबुद्धितो निवृत्तिमूर्ध्वं परिपालयिष्यति ॥४२५॥

प्राभाकरमत में अभावस्वरूप का उपपादन(उपेन्द्रवज्रा छन्द)

अनाद्यजग्धेश्च निवृत्तिरिष्टा विशिष्टदन्तोष्ठनिविष्टसंवित् ।
अनन्यसंसर्गिपदार्थसंविन्निवृत्तिरित्येष हि राजमार्गः ॥४२६॥

किसी एकदेशी मत का उत्थापन(द्रुतविलम्बित छन्द)

ननु समीहतसाधनता लिङो लशुनगृञ्जनभक्षणसंश्रया ।
भवति वाच्यतयाऽभिमताऽस्य नो नञपि तद्विनिवृत्तिनिवेदकः ॥४२७॥

उक्त शङ्का का समाधान (द्रुतविलम्बित छन्द)

तदसदिष्टफलोद्भवदर्शनाल्लशुनगृञ्जनपर्युषिताशनात् ।
न हि निषिद्धपदार्थनिमित्तकः सुखलवः पुरुषस्य न विद्यते ॥४२८॥

निषेधवाक्य इष्टसाधनत्वाभावपरक है (वंशस्थ छन्द)

अदृष्टदोषं परिहृत्य शंसतः कलञ्जमास्वाद्य सुखित्वमात्मनः ।
पुमानबोधोपहतः समीहते तदीहिताभावपरा निषेधगीः ॥४२९॥

अनुभवसिद्ध इष्टसाधनत्व के निषेधप्रकार का प्रदर्शन(द्रुतविलम्बित छन्द)

नरकपातविवर्जनवर्त्मना भवतु विप्रवधात्परमार्थतः ।
मम सुखित्वमितीच्छति यत्पुमान्न तदितीह निषेधगिरोच्यते ॥४३०॥

कलञ्जभक्षण में आपात सुखसाधनत्वानुभव में भ्रमत्व का उपपादन(वंशस्थ छन्द)

प्रमाणतो नास्ति निषिद्धकर्मणः फलस्पृहाऽदृष्टभयं विना तव ।
भ्रमादबोधप्रभवात्प्रवर्त्तते न तात मानेन फलस्पृहाऽत्र ते ॥४३१॥

निषिद्धकर्मों में इष्टसाधनता भ्रममूलक सिद्ध होने पर फल प्रदर्शन(वंशस्थ छन्द)

इति श्रुतिः शास्ति निषिद्धकर्मणि प्रवृत्तिमन्तं पुरुषं नञन्विता ।
न चायमर्थोपहृतः प्रमान्तरैर्न हि प्रमाणैरपरैर्विरुद्धयते ॥४३२॥

अनुकूल दृष्टान्त द्वारा पूर्वोक्त सिद्धान्त का दो श्लोकों से उपपादन(वंशस्थ छन्द)

भुजङ्गभोगं सुकुमारशीतलं निदाघसंतापनिवृत्तये शिशुम् ।
प्रमादुपादित्सुमुदीक्ष्य कातरा निवर्त्तयेत्तज्जननी यथा तथा ॥४३३॥

प्रमादनर्थस्य निदानमादरात् कृतार्थतायै लशुनादिभक्षणम् ।
नञन्विता वैदिकचोदनाऽप्यसौ विधित्सुमालक्ष्य निवर्त्तयिष्यति ॥४३४॥

अब तक निषेधवाक्यस्थ नञ् को प्रसज्यप्रतिषेधार्थक कहा है, अब विषयासम्भव बतलाकर नियोग पक्ष में दोष कहते हैं(भुजङ्गप्रयात छन्द)

क्रियानुप्रवेशं विना प्रागभावः प्रसक्तक्रियाया न निर्वोढुमीशः ।
गुणद्रव्यवन्नित्यनिष्पन्नभावात् पदत्वं नियोगस्य भावार्थवद्धः ॥४३५॥

पालनक्रिया के सम्बन्ध से पूर्वोक्त प्रागभाव में नियोगविषयताभाव का उपपादन(भुजङ्ग०)

न पाल्यत्वयोगादलंभूष्णुभावो यतः पालनं श्रूयते नात्र वाक्ये ।
न खल्वश्रुतं गृह्यते न्यायहानाद्यथा न श्रुतं त्यज्यते तद्वयेन ॥४३६॥

नियोगवाद पक्ष में श्रुतिहानि दोष की प्रसक्ति(भुजङ्गप्रयात छन्द)

उदासीनता च श्रुता नञ्पदार्थो नियोगे सति त्याज्यतां याति सद्यः ।
अतद्योग्यभावादयोग्यः पदार्थो न वाक्यार्थभागिष्यते जैमिनीयैः ॥४३७॥

नियोगपक्ष में प्रत्यवायासिद्धिरूप महान दोष की प्रसक्ति(भुजङ्गप्रयात छन्द)

निषिद्धक्रिया प्रत्यवायाय नेति स्वकर्णौ जनः प्रोर्णुते पापभीरुः ।
समाकर्ण्य दुर्भाषितं पार्श्ववर्ती न पापाक्षरं किंचिदेतादृगन्यत् ॥४३८॥

निषिद्ध क्रिया में पापाभाव का कथन अनुभवविरुद्ध है (भुजङ्गप्रयात छन्द)

निषिद्धक्रिया प्रत्यवायाय नो चेत्तदा दुःखमाकस्मिकं सर्वपुंसाम् ।
सुखं पुण्यमूलं यथा सर्वपुंसां तथा दुःखमप्यस्तु वः पापमूलम् ॥४३९॥

पाप में निषिद्ध क्रियाजन्यत्व का उपपादन(भुजङ्गप्रयात छन्द)

निषिद्धक्रियां चोदितस्याक्रियां वा विना नास्ति पापस्य निष्पत्तिहेतुः ।
ततस्तद्द्वयं पापनिष्पादकत्वाद्भवेत्प्रत्यवायस्य नित्यं निदानम् ॥४४०॥

विहिताकरण पाप-हेतु का सूचकमात्र है(भुजङ्गप्रयात छन्द)

निषिद्धक्रिया दुःखनिष्पत्तिहेतुर्भवेल्लक्षणं चोदितस्याक्रियाऽस्य ।
अभावान्न भावस्य निष्पत्तिरिष्टा भवेल्लक्षणं ज्ञायमानस्त्वभावः ॥४४१॥

निषेधवाक्य निवृत्तिपरक है, इस पक्ष में भी निषिद्धानुष्ठान पाप का कारण कैसे हैं, इसका उपपादन किया जाता है (उपजाति छन्द)

निवृत्तिनिष्ठे तु निषेधवाक्ये निषिद्धकर्माचरणादनर्थः ।
प्रतीयतेऽर्थादिति तत्र युक्तं दुःखं नृणां दुश्चरितैकमूलम् ॥४४२॥

लिङ् के इष्टसाधनार्थत्व पक्ष में नञ् का पर्युदास अर्थ किया जायेगा, तो निषिद्ध क्रिया में अनिष्टसाधनत्व अर्थ सिद्ध नहीं होगा (वंशस्थ छन्द)

समीहितोपायतया लिङन्वयात् प्रतीयमानस्य तु भक्षणादिनः ।

न पर्युदासाश्रयणेन नञ्पदादनिष्टहेतुत्वमतिर्भविष्यति ॥४४३॥

उक्त सिद्धान्त पक्ष का उपपादन(वंशस्थ छन्द)

तथाहि सम्बन्ध्युपमर्दबुद्धये समर्थमुत्सर्गमपेक्ष्य नञ्पदम् ।

न पर्युदासाय विनाऽपवादकं ततो निवृत्त्यर्थपरं तदिष्यते ॥४४४।

प्रतिषेध एवं पर्युदास अर्थ मानने पर ही कलञ्जमक्षणादि का निषेध एवं उसमें अनर्थ हेतुत्व का बोध हो सकेगा (वंशस्थ छन्द)

अतः प्रसज्यप्रतिषेधसम्भवान्न पर्युदासाश्रयणं प्रशस्यते ।

न पर्युदासाश्रयणं विना भवेदनिष्टहेतुत्वनञर्थकल्पना ॥४४५॥

उक्तसिद्धान्त का उपपादन(वंशस्थ छन्द)

अभीष्टहेतुत्वलिङर्थपृष्ठतो ह्यनर्थहेतुत्वनञर्थकल्पना ।

न पर्युदासं परिहृत्य कल्प्यते न पर्युदासः प्रतिषेधसंभवात् ॥४४६॥

निषेधवाक्य में निवृत्ति अर्थसिद्ध हो जाने पर कार्यवादी पक्ष में असामञ्जस्य का उपपादन(वंशस्थ

प्रमाणमिच्छन्प्रतिषेधचोदनां समस्तवेदस्य न कार्यगोचरम् ।
प्रमाणभावं प्रतिपत्तुमीश्वरो निषेधवाक्ये तदसंभवाद्यतः ॥४४७॥

वेदान्तवाक्यों में विधिनिष्ठत्व की आशङ्का का परित्याग ही उचित है(वंशस्थ छन्द)

अतो न वेदान्तवचस्सु विद्यते विधिर्नियोगो न च शब्दभावना ।
न कर्मकाण्डेऽपि नियोगतोऽस्त्यसौ यतो निषेधेषु न विद्यते विधिः ॥४४८॥

वेदान्तवाक्यों में कार्यपरत्वाभाव का उपपादन(वंशस्थ छन्द)

उपेत्यवादं परिगृह्य चोच्यते नियोगनिष्ठाऽस्तु निषेधगीरपि ।
तथापि वेदान्तवचःसु विद्यते विधेर्न गन्धोऽपि विरोधकारणात् ॥४४९॥

उक्त विरोध का स्पष्टीकरण (उपजाति छन्द)

ज्ञानं विधातुं हि न शक्यमेतन्न शक्यते कर्तुमकर्त्तुमेतत् ।
अतोऽन्यथा कर्त्तुमशक्यमेतत् प्रमाणमेयैकनिबन्धनत्वात् ॥४५०॥
ब्रह्मज्ञानं जानता ब्रह्मबुद्धेःकर्तव्यत्वं शक्यते ज्ञातुमेतत् ।

न ह्यज्ञात्वा ब्रह्मबुद्धिं तदीयं कर्त्तव्यत्वं कश्चिदीष्टे ग्रहीतुम् ॥४५१॥

विधि से पूर्व ब्रह्मज्ञान रहने पर दोषापत्तिप्रदर्शन(शालिनी छन्द)

ब्रह्मज्ञानं ब्रह्मणि ज्ञायमाने ज्ञातुं शक्यं नान्यथा तच्च तद्वत् ।
विज्ञातं चेद् ब्रह्मगस्तत्त्वमस्य प्राप्ता मुक्तिर्नास्ति कृत्यं विधीनाम् ॥४५२॥

ब्रह्मज्ञान हो जाने पर विधि के असम्भावित्व का उपपादन(वंशस्थ छन्द)

दृशो विराट्सूत्रशरीरगोचरं परस्पराध्यासमबोधसंभवम् ।
अनर्थमाहुः श्रुतिमस्तके स्थितास्ततोऽस्य विद्यासमयैव मुक्तता ॥४५३॥

ज्ञानाभ्यास का विधान भी अनावश्यक है(वंशस्थ छन्द)

अनाद्यविद्यापटनेत्रबन्धनं प्रसह्य वेदान्तनिबन्धना मतिः ।
स्वजन्ममात्रेण दृढात्मगोचरा समूलदाहं दहतीति हि श्रुतिः ॥४५४॥

ब्रह्म के ज्ञात और अज्ञात उभय पक्ष में विधि की असम्भावना(स्रग्धरा छन्द)

विज्ञाते ब्रह्मणि स्याद्विधिरयमफलः प्रत्यये तस्य तद्व-

नाज्ञातब्रह्मकर्मा विधिविषय इति प्रत्ययो बुद्धियोग्यः ।
ब्रह्मात्मप्रत्ययेऽतो विधिरनवसरः सर्वथा चिन्त्यमान-
स्तस्माद् ब्रह्मात्मवस्तुन्यवसितमखिलं विद्धि वेदान्तवाक्यम् ॥४५५॥

मीमांसादृष्टि से भी ब्रह्मज्ञान में विधि की सम्भावना नहीं है (भुजङ्गप्रयात छन्द)

विरुद्धत्रिकस्य द्वयापत्तिदोषान्न शक्यं विधीनां धियः संग्रहीतुम् ।
यथा वाजपेये गुणस्येह तद्वत्ततो नास्ति वेदान्तवाक्ये विधानम् ॥४५६॥

विरुद्ध त्रिकद्वय का उपपादन (उपजाति छन्द)

उद्दिश्यमानत्वमनूद्यमानभावः प्रधानत्वमितीदमेकम् ।
तथाऽप्युपादेयंविधेयशेषभावप्रभेदं त्रिकमन्यदत्र ॥४५७॥

दार्ष्टान्त में उक्त त्रिकद्वयापत्ति प्रदर्शन (उपजाति छन्द)

एकेन वाक्येन धियो विधानं प्रत्यक्प्रमित्सा च यदि प्रतीचि ।
त्रिकद्वयं तत्र विरुद्धमेतत् प्रसज्यते कष्टमतः किमन्यत् ॥४५८॥

विरुद्ध त्रिकद्वय का प्रदर्शन (उपजाति छन्द)

[4]उद्दिश्यमानं [3,5]तदनूद्यमानभूतं [6]प्रधानं [7]च [1]धियो [2]विधाने ।
[3]प्रमीयमाणं [1,2]पुनरात्मवस्तु [5,6]तदास्पदं [7,4]स्यादितरत्रिकस्य ॥४५९॥

दृष्टान्त में उक्त विरुद्ध त्रिकद्वय के प्रकार का प्रदर्शन(वंशस्थ छन्द)

[4]प्रथमत्रिकं [3]यजिनिगद्यगतं [1,2]गुणसंगतेरवगमे [5]भवति ।
[6]चरमत्रिकं [5]यजिनिगद्यगतं [1,2]फलसंगतेरवगमे [3]तु [4]पुनः ॥४६०॥

एक में भी सापेक्षदृष्टि से विरुद्धधर्म रह सकता है, जैसे एक ही पुरुष में पुत्रत्व तथा पितृत्व धर्म लोक में देखा जाता है : इस शङ्का का समाधान (प्रमिताक्षरा छन्द)

[3,4,2,1]सकृदुच्चरन्यजतिरेष [5]गुणं [10]न [6]फलं [7]च [8]सङ्गमयितुं [11]क्षमते ।
[12]कथितत्रिकद्वयविरोधवशाद् [9,13]यजिवस्तुनीति ननु [14]नीतिविदः ॥४६१॥

उक्त प्रसङ्ग का उपसंहार (प्रमिताक्षरा छन्द)

[1]इति [2,3]वाजपेयगतनीतिवशादपि [6,4]नात्मवस्तुविषयावगतौ ।

विधिरस्ति तेन विधिशून्यतया परमात्मवस्तुविषयोपनिषत् ॥४६२॥

जैसे निर्गुणब्रह्मबोधक विधिशून्य श्रुतिवाक्यों का समन्वय ब्रह्मस्वरूप में बतलाया गया, वैसे ही सगुणब्रह्मबोधक श्रुतिवाक्यों का समन्वय भी निर्गुण ब्रह्म में ही है (द्रुतविलम्बित छन्द)

सगुणवाक्यमपीह समन्वितं भवति निर्गुणवस्तुनि सर्वशः ।
न खलु निर्गुणवस्तुसमन्वयं न सहते सगुणस्य समन्वयः ॥४६३॥

सगुण एवं निर्गुण श्रुतिवाक्यों में समन्वय विरोध परिहार (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

सत्यासत्यवपुस्तथाहि सगुणं ब्रह्मास्य विद्या तथा
तद्वत्तद्विषयस्य वेदवचसस्तात्पर्य्यमेवंविधम् ।
तेनावान्तरमस्य वेदवचसस्तात्पर्य्यमन्यादृशं
चान्यन्निर्गुणवस्तुतत्त्वविषयं संकीर्त्त्यते भागशः ॥४६४॥

विरोधी सत्यासत्य के वैशिष्ट्य में विरोधपरिहार (मन्दाक्रान्ता छन्द)

रूप्यज्ञानं रजतमिदमित्येवमुत्पद्यमानं

सत्यासत्यं विषयमपृथग्दर्शयत्येकमेव ।
तद्वन्मानं सगुणविषयं सत्यमिथ्यावभासं
संसृष्टार्थद्वयमिति दृढं दर्शयत्येकमेतत् ॥४६५॥

अभिमत तात्पर्य का स्वरूपवर्णन (वसन्ततिलका छन्द)

तद्बुद्धिमात्रफलतैव च तत्परत्वं वेदान्तवादिसमये न तु शेषभावः ।
शेषत्वमक्षरकलापगताप्तिमात्रं प्रत्येव नाध्ययनमर्थधियोऽपि शेषः ॥४६६॥

स्वाध्याय-अध्ययन अर्थावबोध का शेष न होने पर भी अध्ययन से अर्थावबोधक फल तो सिद्ध होता ही है (वसन्ततिलका छन्द)

तच्छेषभावमनपेक्ष्य च तत्फलं स्यादाधानवन्न हि तदङ्गमिह क्रतूनाम् ।
अग्न्यङ्गमेव हि तदिष्टमथापि तस्य सर्वक्रतुष्वधिकृतिः फलमभ्युपेतम् ॥४६७॥

४६६ वें श्लोक में कहे गये मात्रपद की व्यावृत्ति (वसन्ततिलका छन्द)

मन्त्रार्थवादगतमध्ययनं तदर्थमात्रप्रतीतिफलमित्यपि नाभ्युपेतम् ।

[2]विद्व[3]चर्थबुद्धि[1]मनुसृत्य फलावसानां [4]सा [5]तद्व[6]तीति [7]तदतत्परतोपपत्तिः ॥४६८॥

उक्तार्थ में विद्वानों की सम्मति (रथोद्धता छन्द)

[3]संप्रयोजनकबुद्धिकारणं [4]वाक्य[6]माहु[1]रिह [5]तत्परं [2]बुधाः ।
[1]संप्रयोजनकबुद्धिशेषधीहेतु[2]मन्यपर[4]माश्रयन्ति [3]च ॥४६९॥

वेदान्त मत में अनधिगत एवं अबाधित अर्थ को बतलाने वाले अर्थवादादि में अवान्तर तात्पर्य का निरूपण(वसन्ततिलका छन्द)

[5]मन्त्रार्थवादवचसा[6]मपि [8]गोचरेषु
[7]सौवेष्व[9]वान्तर[12]मुशन्ति [11]च [10]तत्परत्वम् ।
[1]केचि[2]त्त्रयीशिरसि [3]खिन्नधियो [4]मुनीन्द्रा-
[2]स्तद्वद्धियो [1]विधिषु [3]शेषतया [4]निवेशात् ॥४७०॥

सगुणवाक्यों का तात्पर्य नियोग में नही है(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

[1]श्रेयःसाधनता [2]लिङर्थ [3]इति [4]च [5]प्रा[7]गुक्त[6]मत्यादरा-

च्छ्रेयःसाधनयागदानहवनाद्यर्थैकनिष्ठं ततः।
सर्वं कर्मवचो नियोगपरता तस्यापि नालोचने
वक्तव्या किमुताऽस्य वेदशिरसः सा नेति भूयोऽपि नः ॥४७१॥

महर्षि जैमिनि को भी कर्मकाण्ड में ही क्रियार्थत्व अभिमत है(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

श्रेयःसाधनयागदानहवनाद्यर्थेषु कार्य्यात्मसु
सर्वं कर्मवचः प्रमाणमिति तु ग्राह्यं वचो जैमिनेः।
भाष्यं पश्यत शाबरं स्फुटतरं यो यागमित्यादिकं
श्रेयःसाधनयागमात्रवचनं धर्माभिधानं वदत् ॥४७२॥

यागवाचक धर्म शब्द में पुँल्लिङ्गत्व का उपपादन(वसन्ततिलका छन्द)

पुँल्लिङ्गताऽपि घटते क्रतुगामिनोऽस्य सूक्ष्मात्मना भवति हि क्रतुरप्यपूर्वम्।
तेन क्रतोरुपचरन्नभिदां पुमान्स्यात् क्लीबस्तु धर्ममिति हि क्रतुवाचकत्वे॥

स्वर्गकामाधिकरण में स्वर्गकाम पद के प्रयोग का उपपादन(वसन्ततिलका छन्द)

इष्टाभ्युपायवचनो लिङिति स्थितौ च स्याद्भावनावचनताऽस्य यदा तदा च ।
कर्तुर्भवेदधिकृतिस्तु नियोगवादे स्वाम्ये स्थिते सति भवेदथ कर्तृभावः ॥४७४॥

इष्टसाधनत्व ज्ञान से भी प्रवृत्ति का उपपादन(इन्द्रवज्रा छन्द)

इष्टाभ्युपायो विधिरात्मनीच्छामुत्पादयन्प्रेरकतामुपैति ।
इष्टाभ्युपायेऽवगते लिङादेरिच्छा फलादेनमुपैति सद्यः ॥४७५॥

नियोग में प्रवर्तकत्वाभाव का निरूपण (उपजाति छन्द)

नियोगकोट्याऽपि नरो न कश्चिदिच्छां विना दुःखनिदानभूतम् ।
करोति कर्मेह पुमर्थरागात् प्रवृत्तिरेवेति हि राजमार्गः ॥४७६॥

इष्टसाधनत्वविशिष्ट कृतिसाध्यत्वज्ञान प्रवर्तक होता है(उपजाति छन्द)

इष्टाभ्युपायस्य च कार्यभावः प्रयत्ननिष्पाद्यतयोपपन्नः ।
स चावसेयो वचनाल्लिङादेः प्रत्यक्षतो रागनिबन्धनस्तु ॥४७७॥

द्विविध कार्यत्व का उपपादन(उपजाति छन्द)

कार्यत्वमिच्छावशवर्त्ति किंचिदिष्टाभ्युपाये निजमस्य किंचित् ।
निजं लिङादेरवसेयमस्य साक्षिप्रसादादितरप्रतीतिः ॥४७८॥

गौण मुख्य भेद से कृतिसाध्यत्व दो प्रकार का माना जाता है(शालिनी छन्द)

जानात्यर्थे लिङ् पदं गौणमाहुर्जानात्यर्थः कर्तृतन्त्रो न हीष्टः ।
यागाद्यर्थे कर्तृतन्त्रे हि मुख्यो लिङ्लोडादिः श्रेयसो हेतुभूते ॥४७९॥

ज्ञान में लिङादि को गौणार्थक मानने में कारण का निरूपण(शालिनी छन्द)

जानात्यर्थे श्रेयसो हेतुभावभागोऽबुद्धो बोध्यते लिङ्पदेन ।
यागाद्यर्थे श्रेयसो हेतुभावो मुख्यो बोध्यः कर्तृतन्त्रो न गौणः ॥४८०॥

यागादि की भाँति ज्ञान के साधन श्रवणादि में प्रयुक्त लिङादि पद की मुख्यार्थता का उपपादन(शालिनी छन्द)

यागाद्यर्थे मुख्यता यद्वदस्य ब्रह्मज्ञानस्यान्तरङ्गेषु तद्वत् ।
तर्कादीनां कर्तृतन्त्रत्वहेतोर्ज्ञानादर्वा गौणता हेत्वभावात् ॥४८१॥

सिद्ध पदार्थ आत्मा के बोधक वाक्यों में श्रवणादि को अङ्ग नहीं माना जा सकता(उपजाति)

भूतस्य भव्याय यथोपदेशः क्रियापरे वस्तुपरे तु काण्डे ।
न हीष्टमेवं विपरीतमस्मिन् भव्यस्य भूताय सदोपदेशः ॥४८२॥

पूर्वोक्त विभागव्यवस्था की युक्तियुक्तता का वर्णन(उपजाति छन्द)

भव्यप्रतीतावुपयोगभाजो भवन्ति कार्त्स्न्येन च सिद्धवादाः ।
क्रियाप्रधाने न तथात्र किं तु भूतप्रतीतौ खलु भव्यवादाः ॥४८३॥

कर्मकाण्ड और ज्ञानकाण्ड में भिन्नार्थता का उपपादन(इन्द्रवज्रा छन्द)

भव्यप्रतीतौ न हि कश्चिदर्थो भूतप्रतीतौ पुनरस्ति मुक्तिः ।
श्रोतव्य इत्यादि ततो विधानं भूतोपदेशानुगुणं समस्तम् ॥४८४॥

उपनिषद् में भव्य उपदेश को भूतार्थक मानने में आपत्ति(वसन्ततिलका छन्द)

आदाय मुख्यगुणलाक्षणिकप्रवृत्तीर्भव्यप्रतीतिजनकैः सह भूतवादाः ।
सम्बन्धिनोऽविधिवचःसु तथात्र सर्वे भव्यार्पणाः परिबृढप्रतिपादकेन ॥४८५॥

कर्मकाण्ड तथा ब्रह्मकाण्ड के वाक्यों में गुण दोष की समानता (वसन्ततिलका छन्द)

सिद्धार्थवादिवचनेषु न गौणतादिर्दोषाय कर्मपरवाक्यगतेषु यद्वत् ।
कार्यार्थवादिवचनेषु न गौणतादिर्दोषस्तथोपनिषदीति समानमेतत् ॥४८६॥

कर्मकाण्ड तथा ब्रह्मकाण्ड में अनेक स्थलों पर वैपरीत्य प्रदर्शन(इन्द्रवज्रा छन्द)

मानेन मेयावगतिश्च युक्ता धर्मस्य जाड्याद्विधिनिष्ठकाण्डे ।
मेयेन मानावगतिस्तु युक्ता वेदान्तवाक्येष्वजडं हि मेयम् ॥४८७॥

उक्त दोनों स्थलों में वाक्य लक्षण की भी विपरीतता है (इन्द्रवज्रा छन्द)

कर्मप्रधानेऽतिगते च काण्डे वाक्यत्वमाख्यातपदप्रयुक्तम् ।
ब्रह्मप्रधाने श्रुतिमस्तकेऽस्मिन्नामप्रधानं वचनं समस्तम् ॥४८८॥

उपनिषद् में आये हुए क्रियाबोधक पद सत्तामात्रपरक है(वसन्ततिलका छन्द)

कार्यप्रधानमखिलं च पदं सुबन्तमाख्यातमेव फलतः खलु कर्मकाण्डे ।
तद्वत्तिङन्तमपि वेदशिरःसु सर्वं नामैव तद्धि परिनिष्ठितवस्तुनिष्ठम् ॥४८९॥

उक्त सिद्धान्तों का उदाहरण द्वारा स्पष्टीकरण(वसन्ततिलका छन्द)

आग्नेयमाश्विनमथैन्द्रमितीदृशं हि सर्वं सुबन्तमपि भव्यपरं प्रसिद्धम् ।
सोऽस्येति तद्धितसमन्वितसन्निधाने नामैव तद्भवति यद्भवतीति तद्वत् ॥४९०॥

वेदान्तगत तिङ्न्त पद में सुबन्तरूपता का प्रदर्शन(वसन्ततिलका छन्द)

अस्त्यस्म्यसीति च तिङन्तपदानि सन्ति वेदान्तवाक्यनिलयानि तथापि तानि ।
नाख्यातशब्दनिजशक्तिधुरं वहेयुरस्तित्वमात्रविषया हि निषक्तिरेषाम् ॥४९१॥

उक्त सिद्धान्त के निर्णायक वैयाकरण है(इन्द्रवज्रा छन्द)

पूर्वापरीभूतपदार्थनिष्ठमाख्यातमाख्यातविदो वदन्ति ।
कूटस्थसत्तावगतिप्रधानमाख्यातवत्साधु तिङन्तमाहु : ॥४९२॥

वेदान्ती द्वारा उक्त रीति से कथित आख्यात परिभाषा पर प्राभाकरों का आक्षेप(वसन्ततिलका)

अस्तित्ववस्तुविषयोपनिषन्निषक्तिराश्रीयते यदि तदा प्रमितं प्रमेयम् ।
तस्यास्तवापतति मानमितत्वमेव ह्यस्तित्वमात्मगतमभ्युपयन्ति धीराः ॥४९३॥

प्राभाकरीय वैकल्पिक आक्षेप (सुन्दरी छन्द)

अथवा मितियोग्यताऽस्तिता निरवद्याऽस्तु समस्तवस्तुषु ।
परमात्मनि तत्प्रतीतये सकलं वेदशिरः प्रवर्त्तताम् ॥४९४॥

प्राभाकरों के उक्त आक्षेप का निराकरण (सुन्दरी छन्द)

तदसुन्दरमात्मसंविदोरपि सत्ता भवताऽभ्युपेयते ।
न तयोर्विषयत्वहीनयोर्मितियोग्यत्वमितित्वसंभवः ॥४९५॥

वेदान्त ब्रह्म के तटस्थ लक्षण का विमर्श(पुष्पिताग्रा छन्द)

क्षितिजलदहनानिलाम्बराणां जनिमनुमाय विभक्तताबलेन ।
जगति हि जनिमद्विभज्यमानं घटघटिकादि समीक्ष्यते समस्तम् ॥४९६॥

उक्त अनुमान में हेत्वन्तर का प्रदर्शन(पुष्पिताग्रा छन्द)

क्षितिजलदहनेषु तत्प्रदेशाञ् जनिसहितानुपलभ्य तद्बलेन ।
क्षितिजलदहनत्वलिङ्गमार्गादपि जनिमेष्वनुमाय तर्कयन्ति ॥४९७॥

कारणानुमान का प्रदर्शन(मालिनी छन्द)

जनिमदभवदेतच्चेतनादेव हेतो-
र्घटवदिति पुनस्तत्कारणे चेतनत्वम् ।
अनुमिमत उदर्के कार्यतालिङ्गतोऽमी
जगति हि परिदृष्टं चेतनादेव कार्यम् ॥४९८॥

उक्त रीति से जगत्कारण ब्रह्म को अनुमेय मानने पर वेदान्त में अप्रामाण्यापत्ति (मालिनी छन्द)

जगदुदयनिमित्तं चेतनं किं नु नाना किमु भवतु तदेकं सर्ववित् सर्वशक्ति ।
इति भवति तु पश्चात् कारणे चेतनेऽस्मिन्ननवगतिनिमित्तः संशयो दुर्निवारः ॥

जगत्कारण चेतन में वेदान्तवाक्यों द्वारा एकत्वादिसिद्धि प्रकार प्रदर्शन(मालिनी छन्द)

श्रुतिवचनविशेषाच्चेतने कारणेऽस्मिन्
यत इति निरवद्यादेकताधीरथाऽऽगात् ।
प्रकृतिरिति च तस्मिन् कारणे पञ्चमीयं

जनयति दृढबुद्धिं तद्विधानादिहैव ॥५००॥

यतः पद से अवगत एका प्रकृतिः इस अर्थ पर आक्षेप (वसन्ततिलका छन्द)

एकत्वमेकवचनादवगम्यमानं यच्छब्दवाच्यनिलयं यत इत्यमुष्मिन् ।
वाक्ये जगत्प्रकृतिगामितया न विद्मः संख्यां विभक्त्यभिहिते वचनं हि नाऽऽह ॥

उक्त आक्षेप की पुष्टि (द्रुतविलम्बित छन्द)

न हि विभक्त्यभिधेयपदार्थगं वचनमाह निजं विषयं क्वचित् ।
वचनवाच्यगतं न वदन्ति च स्वमभिधेयमशेषविभक्तयः ॥५०२॥

उक्त आक्षेप का परिहार(सुन्दरी छन्द)

प्रातिपदिकार्थगतमेव वचनानि स्वं स्वमभिधेयमभिधातुमलमर्थम् ।
प्रातिपदिकार्थगतमेव निजमर्थं वक्ति च विभक्तिरपि नेह वचनार्थे ॥५०३॥

मीमांसा से उक्त सिद्धान्त की पुष्टि (सुन्दरी छन्द)

पशुनेति पदे तृतीयया करणत्वं हि पशोर्निवेद्यते ।

वचनेन पशोरिहैकता न पुनः सा करणस्य कथ्यते ॥५०४॥

पशुना यजेत इस वाक्य में एकत्वविशिष्ट पशुः कारणम् ऐसे लोकप्रसिद्ध अर्थ का बोध प्राभाकर मतानुसार हो सकता है(द्रुतविलम्बित छन्द)

अनुपपत्तिबलेन विधेस्तयोः करणतैकतयोरवगम्यते ।
करणतैकपशोरिति संगतिर्न घटते हि विधिर्विरहय्य ताम् ॥५०५॥

उक्त सङ्गति के बिना नियोगानुपपत्ति का प्रदर्शन(भुजङ्गप्रयात छन्द)

उपादानतः संख्यया संगतिः स्यादवच्छेदकत्वेन संख्यानिवेशात् ।
पशोरेतयोस्तेन मार्गेण कार्ये निवेशोपपत्तेरुपादानमानात् ॥५०६॥

दार्ष्टान्त में उक्त युक्ति अभाव की आशङ्का (भुजङ्गप्रयात छन्द)

न चैवं विधिः कश्चिदत्रेति न स्यादुपादानतः संगतिर्यत्पदार्थे ।
विभक्त्यर्थसंख्यार्थयोर्नेह कश्चिद्यतो वा इमानीति वाक्ये विधिर्नः ॥५०७॥

उक्त शङ्का का समाधान (पुष्पिताग्रा छन्द)

अवितथमिदमेवमेतदस्मिन्न खलु विधेर्वचनं पठन्ति वाक्ये ।
यत इति घटते तथापि योगो वचनविभक्तिनिगद्ययोरिहापि ॥५०८॥

दार्ष्टान्त में अनुपपत्ति का प्रदर्शन (वसन्ततिलका छन्द)

एकत्वमेकवचनेन समर्पितं यद्यच्छब्दवाच्यनिलयं यत इत्यमुष्मिन् ।
पञ्चम्युपात्तमपि यत्प्रकृतित्वमस्मिन् सङ्गच्छते तदुभयं पशुवस्तुनीव ॥५०९।

अन्वयाक्षेपका स्पष्ट प्रदर्शन(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

एका या प्रकृतिः समस्तजननी तद् ब्रह्म जिज्ञास्यता-
मित्यत्रापि हि वस्तुनिष्ठवचने शक्यैव तत्संगतिः ।
विज्ञातुं विधिमन्तरेण च तथाऽऽनर्थक्यभीत्या न हि
स्वाध्यायाध्ययनैकगोचरविधेरायातमर्थं विना ॥५१०॥

दृष्टान्त एवं दार्ष्टान्त में अन्यथानुपपत्ति का प्रदर्शन(सुन्दरी छन्द)

वचनार्थविभक्तिवाच्ययोरुपपन्नाऽन्वयबुद्धिरर्थतः ।

[3]पशुनेति [4]पदे [1]यथा [1]तथा [2]यत [3]इत्यादिपदे[4]ऽपि [2]लक्षणे ॥५११॥

पूर्वोक्त पदगत अर्थतः पद का विवरण (प्रमिताक्षरा छन्द)

[1]विधिनिष्ठवाक्य[2]मपि [7]बोधयति [4]स्व[5]मपेक्षितं [6]विषय[3]मर्थवशात् ।
[1]परमात्मनिष्ठ[2]मपि [6]तुल्य[5]मिदं [4]वचसो[2]र्द्वयो[3]रपि तु [7]रूप[1]मतः ॥५१२॥

ब्रह्म के स्वरूपका उपाधि लक्षण पर उत्थापित शङ्का का समाधान (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

[5]एकं [6]चेतन[1]मस्य [4]यत्[2]प्रकृतिता[3]मापन्न[7]मुत्प्रेक्षते
[8]तद् [9]ब्रह्मे[10]ति [11]निशामये[1]ति [13]निपुणं [14]ब्रूते [10]परब्रह्मणः ।
[11]सिद्धं [12]लक्षण[8]मादरेण [7]महता [9]व्यावर्त्तयद् [5]ब्रह्मण-
[6]स्तत्त्वं [3]तत्त्वमसीतिवाक्यनिलयं [4]तच्छब्दलक्ष्यं [2]वचः ॥५१३॥

त्रिविध लक्षण का निरूपण (वसन्ततिलका छन्द)

[3]लक्षस्य [5]लक्षण[1]मिह [4]त्रिविधं [6]प्रसिद्धं [2]लोके [1]स्वलक्षण[2]ममुष्य [3]विशेषणं [4]वा ।
[5]यद्वो[6]पलक्षण[1]मिमानि च [4]लक्षणेन [5]व्यावर्णयामि [2]पृथगे[3]व तु [6]तत्[7]प्रतीहि ॥५१४॥

सामान्य लक्षण का निरूपण(वसन्ततिलका छन्द)

लक्ष्यार्थनिष्ठमुपलब्धमतोऽन्यतोऽर्थान्निःशेषतो यदतिरिच्य तदर्थवस्तु ।
लक्ष्यं निवेदयति लक्षणमेतदाहुः सामान्यलक्षणमिदं त्रिषु लक्षणेषु ॥५१५॥

प्रतिज्ञात प्रथम लक्षण का निरूपण(वसन्ततिलका छन्द)

लक्ष्यस्वरूपमपि सद्यदमुष्य साक्षादर्थान्तराद्भवति भेदकमेतदाहुः ।
अस्य स्वलक्षणतयैव तु लक्षणं खं छिद्रं द्रवं जलमितीदृशमत्र लोके ॥५१६॥

द्वितीय विशेषण लक्षण का निरूपण(रथोद्धता छन्द)

स्वानुरक्तमतिजन्मकारणं यत्पुनर्भवति लक्ष्यवस्तुनि ।
तद्विशेषणतयाऽस्य लक्षणं केसरादिकमिवाश्ववस्तुनः ॥५१७॥

प्रतिज्ञात उपलक्षण का निरूपण(रथोद्धता छन्द)

स्वानुरक्तमतिजन्महेतुतां लक्ष्यवस्तुनि निरस्य लक्षणम् ।
अस्वरूपमपि तस्य यद्भवेत्काकवत्तदुपलक्षणं विदुः ॥५१८॥

तैत्तिरीय श्रुति में कहा गया ब्रह्म का लक्षण तटस्थ कोटि का है(वसन्ततिलका छन्द)

विश्वोद्भवस्थितिलयप्रकृतित्वमस्य चिद्वस्तुनो यदसहायपरिग्रहस्य।
तद्वर्णनीयमुपलक्षणमेव कस्माद् ब्रह्मेति लक्ष्यपदशक्त्यविरोधहेतोः ॥५१९॥

विशेषण पक्ष में विरोध दोष प्रदर्शन (रथोद्धता छन्द)

विश्वोद्भवास्थितिलयप्रकृतित्वरूपमेकाकिनो यदिह लक्षणमुच्यमानम्।
तद् ब्रह्मणो यदि विशेषणरूपमिष्टं ब्रह्मेति लक्ष्यविषयस्य पदस्य भङ्गः ॥५२०।

उक्त रीति से उपलक्षण पक्ष में लक्षणवाक्यगत काल्पनिकार्थकत्व आक्षेप का निराकरण (वसन्ततिका छन्द)

लक्ष्यार्थवाचि पदमत्र हि लक्षणार्थे वाक्ये प्रधानमितरद् गुणभूतमाहुः।
ब्रह्मेति लक्ष्यविषयं च पदं समर्थं भूमानमेव वदितुं न तु मर्त्यमल्पम् ॥५२१॥

लक्षणवाक्य को उपलक्षणार्थक मानना "गुणे त्वन्याय्यकल्पना". इस जैमिनियन्याय से अनुमोदित है (वसन्ततिलका छन्द)

तस्मात्प्रधानपदभङ्गभयाद् गुणानां युक्तं ग्रहीतुमुपलक्षणगोचरत्वम् ।
ब्रह्मेति चैतदुपलक्ष्यसमर्पणार्थमेवं समञ्जसमिदं पदजातमस्मिन् ॥५२२॥

लक्षणप्रयोजन का उपपादन(वसन्ततिलका छन्द)

लक्ष्यस्वरूपकथनाय न लक्षणानि नाप्यस्य वाचकमिदं पदमित्यमुष्मै ।
व्यावृत्तमेतदखिलादितरार्थजातादित्येतदेव वदितुं ननु लक्षणानि ॥५२३॥

अज्ञातज्ञापकत्व पक्ष में दोष प्रदर्शन (वसन्ततिलका छन्द)

लक्ष्यस्वरूपमुपलभ्य तदेकनिष्ठं दृष्टवा च लक्षणमनेन तदेव लक्ष्यम् ।
व्यावर्त्य बोधयितुमुत्सहते जनोऽयं तत्त्वान्तरादिति यतः प्रतिपन्नमेतत् ॥५२४॥

लक्ष्यस्वरूप का कथन भी लक्षण का प्रयोजन नहीं है (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

संज्ञासंज्ञिसमन्वयावगतये नेष्टं क्वचिल्लक्षणं
व्यावृत्तिप्रतिपत्तिमात्रजनकं लक्ष्ये भवेदन्यतः ।
लक्ष्यं लक्षणवर्त्मना हि जगति व्यावर्त्तयन्तोऽन्यत-

स्तत्तल्लक्षणमादरेण महता संगृह्णते वादिनः ॥५२५॥

प्रकृत प्रसङ्ग का उपसंहार (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

तस्माद् ब्रह्मणि वाच्यवाचकयुजासिद्ध्यै श्रुतिर्नामधेयधा-
ज्जन्मादस्य समीक्षितस्य जगतो यद् ब्रह्मणो लक्षणम् ।
नापीदं स्वकरूपबोधनपरं संकीर्तितं ब्रह्मणः
किंत्वब्रह्मपदार्थतोऽस्य सकलाद् व्यावृत्ततासिद्धये ॥५२६॥

अद्वैतवाद में ब्रह्मेतर पदार्थ न होने के कारण उसकी व्यावृत्ति लक्षण का प्रयोजन कहना असङ्गतजान पडता है, इस आक्षेप का निराकरण(वसन्ततिलका छन्द)

परिच्छिन्नवस्तुव्यवच्छेदसिद्ध्यै जगाद श्रुतिर्लक्षणं ब्रह्मणस्तत् ।
परिच्छिन्नता प्रापिता पूर्वपक्षे परब्रह्मणस्तन्निषेधार्थमेतत् ॥५२७॥

परिच्छिन्नताप्रापक पूर्वपक्षोपवर्णन(वसन्ततिलका छन्द)

कालस्वभावपरमाण्वसुभृत्प्रधानस्कन्धप्रतीत्यखिलशून्यकथाप्रसङ्गे ।

जन्मादिसूत्रमवतीर्णमियं श्रुतिश्च तस्मादिदं परमिदं द्वितयं प्रवृत्तम् ॥५२८॥

अद्वैत-मतानुसार अधिष्ठातृ-अधिष्ठान भेद की अपेक्षा कर ब्रह्म में परिच्छिन्नता की सम्भावना का प्रदर्शन(भुजङ्गप्रयात छन्द)

अधिष्ठात्रधिष्ठेयभावेन योनिर्निमित्तं च यत्कारणं जन्मभाजाम् ।
परिच्छिन्नतास्यापि सम्भावितैव प्रतीचोऽस्य भेदे परैरुच्यमाने ॥५२९॥

उक्त आक्षेप का निराकरण(भुजङ्गप्रयात छन्द)

ततस्तन्निषेधार्थमेतद् बभाषे श्रुतिर्ब्रह्म तद्भिन्नता तस्य कस्मात् ।
प्रतीचोऽपि हि ब्रह्मता नित्यसिद्धा दृशो भेदसिद्धिर्निरालम्बनैव ॥५३०॥

अभिन्न निमित्त,उपादान कारण ब्रह्म एवं जीव में आशङ्कित भेद का निराकरण (भुजङ्ग०)

जगत्कारणत्वं पुनर्यत्र दृष्टं न तल्लक्षणं तत्स्वरूपप्रसिद्ध्यै ।
स्वरूपे यतो लक्षणे दृश्यमाने प्रसिद्धं ततो लक्ष्यवस्तुस्वरूपम् ॥५३१॥

उक्त शङ्का का समर्थन(भुजङ्गप्रयात छन्द)

निमित्तं च योनिश्च यत्कारणं तत्परं ब्रह्म सर्वस्य जन्मादिभाजः।
इति स्पष्टमाचष्ट एषा श्रुतिर्नः कथं सिद्धवल्लक्षणं सिद्धिबाह्यम् ॥५३२॥

पूर्वोक्त लक्षण में लौकिकप्रमाणाभाव प्रदर्शन(भुजङ्गप्रयात छन्द)

न खल्वीदृशं कारणं लोकसिद्धं यतोऽनूद्य तल्लक्षणं तेन लक्ष्यम्।
व्यवस्थापयन्ती प्रवृत्तैवमेषा विधत्तेऽनुवक्तीति चैतद्विरुद्धम् ॥५३३॥

उक्त आक्षेपका परिहार (पुष्पिताग्रा छन्द)

अनुवदादिदमेव वाक्यमर्थादुपनयतीदृशकारणं प्रसिद्धम्।
अनुवदनमशक्यमन्यथा स्यादवगतगोचरमेव हीदमिष्टम् ॥५३४॥

उक्त मत की सिद्धि के लिए जैमिनीयदृष्टान्त (इन्द्रवज्रा छन्द)

यथा विशिष्टस्य विधानतोऽर्थाद्विशेषणानां घटते विधानम्।
स्थितेऽनुवादेऽपि तथेह योज्यमनूद्यमानेऽपि जगन्निदाने ॥५३५॥

एक वाक्य को उभयपरक मानने पर ५३३ वें श्लोक में जो विरोध दिखलाया गया था, उसका

परिहार करते हैं (प्रमिताक्षरा छन्द)

अथ वाऽनुवादमुपलभ्य ततोऽनुपपद्यमानवपुषः प्रमितेः ।
अपरं निमित्तमिह कल्प्यमिति प्रवदन्ति केचिदभियुक्ततराः ॥५३६॥

विशिष्ट विधिस्थल में ऐसा समझना उचित है (प्रमिताक्षरा छन्द)

अपि विशिष्टविधौ वचनान्तरादनुपपत्तिबलानुमितादिह ।
विधिरशेषविशेषणगोचरो न तु पुनस्तत एव विधानतः ॥५३७॥

वैशेषिक मत का निराकरण (वसन्ततिलका छन्द)

जन्मादिलक्षणमिदं जगतो यदुक्तं सद्ब्रह्मणस्तदिह चिह्नतयोपदिष्टम् ।
नास्मिन् प्रमाणमपरे पुनरेतदेव ब्रह्मप्रमाणमनुमानमुदीरयन्ति ॥५३८॥

अनुमान पक्ष में दोष प्रदर्शन(वसन्ततिलका छन्द)

कार्यानुमानपरतन्त्रमिदं हि शास्त्रं शास्त्रस्य नोपकरणं तदितीक्षमाणाः ।
तद् दुर्घटं न खलु कारणमद्वितीयं चैतन्ययुक्तमिति कार्यवशात् प्रतीमः ॥५३९॥

अलौकिक ब्रह्म में शब्दशक्ति की युक्तियुक्तता का निरूपण (वसन्ततिलका छन्द)

वेदान्तवाक्यमिह येन पथा प्रवृत्तं लोकप्रसिद्धपदशक्तिमुपाददानम् ।
विश्वोद्भवस्थितिलयप्रकृतौ निमित्ते सच्चित्सुखात्मनि परात्मनि नैवमन्यत् ॥५४०॥

काणादमताभिमत अनुमानसापेक्ष शब्द में प्रामाण्य का निराकरण (वसन्ततिलका छन्द)

भङ्क्त्वा कथंचिदनुमानवशेन सिद्धे सर्वेश्वरे कणभुगादिभिरुच्यमाने ।
वेदान्तवाक्यमपि योज्यमतोऽनुमाने सापेक्षतोपनिषदां यदि साहसं तत् ॥५४१॥

वैशेषिकों का उक्त दुःसाहस का परिहास (वसन्ततिलका छन्द)

निष्कारणं श्रुतिशिरोवचनस्य भङ्गं ये वर्णयन्ति सहसा स्वमनोरथेन ।
दीप्तस्य दावदहनस्य न ते किमर्थं ज्वालां पिबन्ति कथनीयमिदं बहुज्ञैः ॥५४२॥

वैशेषिकों द्वारा सच्चिदानन्द ब्रह्म में श्रौताभिमत जगत्कारणत्व पर आक्षेप(प्रमिताक्षरा छन्द)

ननु सच्चिदादिवपुषो जगतः प्रकृतित्वबोधनमकारणकम् ।
परमात्मनो न हि पदार्थयुजा रहितेह सम्भवति योग्यतया ॥५४३॥

उक्त उपादानत्व की अयोग्यता का वर्णन(भुजङ्गप्रयात छन्द)

उपादानता सच्चिदानन्दमूर्तेर्विरुद्धा जडेष्वेव सा दृश्यते हि।
विरुद्धैः पदार्थैर्न वाक्यार्थसिद्धिर्न खल्वग्निनोक्षेदितीहान्वयोऽस्ति ॥५४४॥

उक्त आक्षेप का परिहार (भुजङ्गप्रयात छन्द)

उपादानता चेतनस्यापि दृष्टा यथा स्वप्नसर्गे विचित्रे प्रतीचः।
यथा चोर्णनाभस्य सूत्रेषु पुंसां यथा केशलोमादिसृष्टौ च दृष्टा ॥५४५॥

वैशेषिकादि मतों से भी चेतन आत्मा में जगदुपादानता सिद्ध होती है(आख्यानकी छन्द)

बुद्ध्यादिकार्येष्वपि चेतनोऽयं भवेदुपादानमितीष्यते च।
आत्मा गुणी ते च गुणाः प्रसिद्धा गुणी गुणानां प्रकृतिश्च सिद्धा ॥५४६॥

चेतन ब्रह्म में जगदुपादानत्व की उपपत्ति (शालिनी छन्द)

आकाङ्क्षादिर्विद्यते योग्यतान्ता यस्मादस्मिन्नागमाज्जायमाने।
सामग्री या वैदिकैरस्य दृष्टा तस्माद् युक्ता योनिता चेतनस्य ॥५४७॥

समन्वय का उपसंहार(शालिनी छन्द)

तस्मादेतल्लक्षणं चिह्नमाहुर्नैतत्तस्मिन् ब्रह्मणि स्यात् प्रमाणम् ।
आम्नायस्य स्वप्रधानत्वहेतोर्लिङ्गस्यास्मिन् शेषभावाच्च नित्यम् ॥५४८॥

सृष्टिश्रुति का तात्पर्य अद्वयब्रह्मबोध कराने में ही हैं (उपजाति छन्द)

इत्थं जगत्कारणवादिवाक्यं समन्वितं ब्रह्मणि तत्पदार्थे ।
तल्लक्षणं तस्य तटस्थभूतमानन्त्यसिद्ध्यै कथयद् यथोक्तम् ॥५४९॥

विचित्रजगत् का उपादान कारण सम ब्रह्म कैसे हो सकता है ?इस प्रश्नका उत्तर (वसन्ततिलका

स्वात्मानमेव जगतः प्रकृतिं यदेकसर्गे विवर्तयति तत्र निमित्तभूतम् ।
कर्माकलय्य रमणीयकपूयमिश्रं पश्यन्नृणां परिवृढं तदितीर्यमाणम् ॥५५०॥

आनन्दमयाद्यधिकरण की भाँति जिज्ञासाद्यधिकरण के विषयों पर भी विचार समन्वयाधिकरण के बाद ही करना था , वैसा क्यों नहीं किया ? इसका समाधान (सुन्दरी छन्द)

पदवृत्तिसमन्वयावुभौ प्रतिपाद्यौ प्रथमे हि लक्षणे ।

तदवान्तरवाक्यवर्त्मना पदवृत्तिः प्रथमं प्रकीर्तिता ॥५५१॥

उपदेशार्थ का निर्णय विधेयार्थ से पूर्व होना आवश्यक समझकर "त्वम्." पदार्थ का निर्णय प्रथम सूत्र द्वारा किया गया है (शालिनी छन्द)

आद्ये सूत्रे त्वंपदस्योदितत्वाद् वृत्तेरस्मिंस्तत्पदस्योच्यमाना ।
वृत्तिर्ज्ञेया तत्पदार्थेऽद्वितीये प्रत्यङ्मात्रे त्वंपदस्योदितैव ॥५५२॥

प्रथम सूत्र में अधिकारी का निरूपण है न की त्वम्पदार्थ प्रत्यगात्मा का , इस आक्षेप का निराकरण(द्रुतविलम्बित छन्द)

अनधिकारिणि शुद्धचिदात्मके दृगदृशोरितरेतरविभ्रमात् ।
शमदमादिसमन्विततेष्यते भवति तेन चितोऽप्यधिकारिता ॥५५३॥

परमार्थतः प्रत्यगात्मा में शमादि साधनों का सम्बन्ध नहीं है (द्रुतविलम्बित छन्द)

अनधिकारितया दृगवस्थिता स्वरसतः परमेश्वरविग्रहा ।
घनतमःपटलावरणान्वयादुपगता श्रवणाद्यधिकारिताम् ॥५५४॥

बन्ध और मोक्ष में वैयधिकरण्यापत्तिप्राप्तिरूप आक्षेप का निराकरण(वसन्ततिलका छन्द)

[2]अज्ञानतज्जघटना [1]चिदधिक्रियायां [4]द्वारं [3]परं [5]भवति [3]ना[2]धिकृतत्व[1]मस्याः ।
[4]ना[1]चेतनस्य [5]घटते[3]ऽधिकृतिः [2]कदाचित् [2]कर्तृत्वशक्तिविरहा[1]दिति [4]वक्ष्यते [3]हि ॥५५५

प्रथम सूत्र द्वारा प्रत्यगात्मनिरूपण प्रकार का वर्णन (प्रमिताक्षरा छन्द)

[3]उपसत्तिवाक्य[4]मधिकारिणि [2]यत् [6]कथितं [5]समन्विततया [1]प्रथमम् ।
[2]इद[3]मेव [4]चेतसि [5]निधाय तु [1]तत् [7]मुनिना [8]प्रकीर्तित[6]मुदारधिया ॥५५६॥

उक्तार्थ का स्पष्टीकरण(वसन्ततिलका छन्द)

[10]शिष्योपसत्तिवचनानि [11]समन्वितानि [9]शिष्ये [7]चिदात्मनि [8]परात्मनि [6]नित्यमुक्ते ।
[12]इत्ये[13]त[5]दत्र [15]कथितं [14]मुनिना [1]त्वमर्थे [4]त्वंशब्दवृत्तिकथनाय [2]परे [3]प्रतीचि ॥५५७॥

प्रथम दोनों सूत्र तत्-त्वम् पदार्थबोधन के लिए ही प्रकृत हुए है(पुष्पिताग्रा छन्द)

[2]उपसदनवचोविचारमार्गात् [3]त्व[4]मितिपदस्य [5]परात्मनी[1]ह [6]वृत्तिम् ।
[5]कथयति [4]भगवन् [1]द्वितीयसूत्रे [2]तदितिपदस्य [3]पररात्मनीति [6]भे[7]दः ॥५५८॥

युक्तिरहित शब्दमात्र से पूर्वोक्त अर्थ का बोध कैसे हो सकेगा , इस आक्षेप का समाधान
(शालिनी छन्द)

आवृत्त्या वा तन्त्रवृत्त्याऽथवेदं सूत्रं युक्तिं वेदवाक्योपयुक्ताम् ।
अप्याचष्टे बृंहणीमन्तरेण स्वार्थे युक्तिं वेदवाक्यं न पुष्टम् ॥५५९॥

महावाक्यार्थ बोधकप्रकार निरूपण (रथोद्धता छन्द)

त्वम्पदार्थविषयं समन्वयं तत्पदार्थविषयं ततः क्रमात् ।
तस्य शेषमपरं च वर्णयन्नुक्तवानथ महावचोगतम् ॥५६०॥

उक्तार्थ का स्पष्टीकरण (रथोद्धता छन्द)

त्वम्पदस्य दृशि वृत्तिमद्वये तत्पदस्य च निवेदयन् मुनिः ।
प्रत्यगद्वयपरं समन्वयं शेषिणं पुनरथाब्रवीत्तयोः ॥५६१॥

समन्वय सूत्र से सिद्ध होनेवाले अर्थों का संक्षिप्त वर्णन (वसन्ततिलका छन्द)

शक्नोति सिद्धमवबोधयितुं च वाक्यं शक्नोति कार्यरहितं वदितुं च वाक्यम्

शक्नोत्यखण्डमवबोधयितुं च वाक्यं शक्नोति मुक्तिफलमर्पयितुं च वाक्यम् ॥

समन्वय निरूपण का फलोपवर्णन (वसन्ततिलका छन्द)

एतत्समन्वयनिरूपणमेवमस्मिन् बुद्धिस्थतामुपगते सति वाक्यजन्यम् ।
विज्ञानमद्वयगतं न ततोऽन्यदन्यत् पुंसोऽपराधकृतमित्युदियात् प्रतीचि ॥५६३॥

इति श्रीमच्छुरेश्वराचार्य शिष्य श्रीसर्वज्ञात्ममुनि विरचित संक्षेपशारीरकस्य

प्रथमोध्यायः समाप्तः ।

ॐ

अथ द्वितियोऽध्यायः

प्रथमाध्यायोक्त समन्वयमें प्रत्यक्षादि विरोधापत्ति प्रदर्शन (वसन्ततिलका छन्द)

एवं समन्वयनिरूपणयाऽवबोधो जातोऽप्यखण्डविषयो ननु वाक्यजन्यः ।
मानान्तरेण परिपीडित एव जातो भेदप्रकाशनकृताक्षनिबन्धनेन ॥१॥

समन्वयनिरूपण में परिहासप्रदर्शन(वसन्ततिलका छन्द)

मज्जत्यलावु सहसाऽप्सु शिलाः प्लवन्त इत्यादिकादभिहितादिव वाक्यजातात् ।
जातापि बुद्धिरपबाधितगोचरैवमद्वैतबुद्धिरपि भेदधियाऽऽत्मनि स्यात् ॥२॥

प्रत्यक्षादि में आत्मविषयक बोधबाधकत्व प्रदर्शन (वसन्ततिलका छन्द)

अध्यक्षगोचरमनर्थमवैमि वाक्यं निर्मुक्तमाह मम रूपमनर्थहेतोः ।
एवं च वेदशिरसोऽक्षनिबन्धनेन ज्ञानेन बाधनमतीव हि दुर्निवारम् ॥३॥

कर्मविधायकवाक्य भी वेदान्त का विरोधी है(वसन्ततिलका छन्द)

कर्तृत्वमाह मम कर्मविधिर्नियोगसंबन्धपूर्वकमपास्तसमस्तभेदम् ।
मामाह वेदशिरसो वचनं तथा च सत्यस्य दुःस्थितमिवापतति प्रमात्वम् ॥४॥

कर्मविधि में बाधकता का निरूपण(वसन्ततिलका छन्द)

प्रत्यक्षकर्मवचसोरुभयोः समूहः सामर्थ्यवानुपनिषद्विषयापहारे ।
एकैकमेव तु न पारयतेऽपहर्तुं स्वार्थप्रकाशनविधावुभयोः समत्वात् ॥५॥

वेदान्त के बाधित होने में युक्ति का प्रदर्शन(वसन्ततिलका छन्द)

ज्यैष्ठ्यात् समर्थमथवाऽक्षजमेकमेव तस्यैव कर्मविधिरस्तु सहायभूतः ।
प्रत्यक्षमेव विधिवाक्यसहायमेवं ब्रह्मात्मवस्त्वपहरिष्यति को विरोधः ॥६॥

प्रत्यक्षादि द्वारा उपस्थापित विरोध का परिहार (वसन्ततिलका छन्द)

अत्रोच्यते न खलु वेदशिरांसि मुक्त्वा किंचित् प्रमाणमिह तत्त्वनिवेदनाय ।
शक्नोति येन भवतीह विरोधशङ्का वेदान्तवाक्यमुखतोऽवगते प्रतीचि ॥७॥

पारमार्थिकत्व बोध कराने में प्रत्यक्षादि का सामर्थ्य नही है (वसन्ततिलका छन्द)

अज्ञातमर्थमवबोधयदेव मानं तच्च प्रकाशकरणक्षममित्यभिज्ञाः ।
न प्रत्यगात्मविषयादपरस्य तच्च मानस्य संभवति कस्यचिदत्र युक्त्या ॥८॥

प्रत्यक्षादि प्रमाणों में तत्त्वबोधाशक्तत्व की उपपत्ति(वसन्ततिलका छन्द)

सर्वं पराग्विषयमेव हि मानजातं वेदावसानवचनानि तु वर्जयित्वा ।
यद्भौतिकं किमपि भौतिकगोचरं तद्रूपप्रदीपकनिदर्शनतः प्रसिद्धम् ॥९॥

उक्त व्याप्ति में घटादि स्थल पर व्यभिचार दिखने के कारण अन्य व्याप्ति का प्रदर्शन करते है (वसन्ततिलका छन्द)

यद् व्यञ्जकं किमपि लौकिकमीक्षितं तद् व्यङ्ग्येन तुल्यमवलोकितमत्र जात्या
दीपः प्रकाशकतया विदितो हि लोके रूपेण तैजसतया सदृशः प्रसिद्धः ॥१०॥

बुद्धिगत व्यभिचार-आशङ्का का निराकरण (वसन्ततिलका छन्द)

बुद्धिः समस्तविषयावगमे प्रवृत्ता सापि प्रकाशविषयेण समानजातिः ।
बुद्धिश्च भौतिकतया श्रुतिषु प्रसिद्धा तेनास्तु सापि खलु भौतिकगोचरैव ॥११॥

प्रत्यक्षादि प्रमाणों में अनात्मविषयकत्व का उपसंहार(वसन्ततिलका छन्द)

एवं प्रमाणमखिलं बहिरर्थनिष्ठं वेदान्तवाक्यमपहाय यथोक्तहेतोः ।
न प्रत्यगात्मविषयं श्रुतिरप्युवाच स्पष्टं पराञ्चिवचसाऽर्थमिमं यथोक्तम् ॥१२॥

उक्त श्रुति का पाठ(उपजाति छन्द)

पराञ्चि खानि व्यतृणत् स्वयंभूस्तस्मात् पराङ् पश्यति नान्तरात्मन् ।
कश्चिद्धीरः प्रत्यगात्मानमैक्षदावृत्तचक्षुरमृतत्वमिच्छन् ॥१३॥

शब्दात्मक श्रुति में भी भौतिकत्वेन बाह्यविषयकत्व आक्षेप का समाधान (वसन्ततिलका छन्द)

यत् कर्मभावमनपास्य निजप्रमेये संवित्तिसाधनतया जगति प्रसिद्धम् ।
मानं जडार्थविषयं तदिहाभ्युपेयं न प्रत्यगात्मविषयं कथितोपपत्तेः ॥१४॥

वेदान्त में ही आत्मविषयत्व का उपपादन(वसन्ततिलका छन्द)

यत्तु प्रमाणमवधीर्य निजप्रमेये कर्मत्वमर्थमवबोधयितुं प्रवृत्तम् ।
तत् प्रत्यगात्मविषयं भवितुं क्षमेत तत्तत्त्वमादिवचनं न ततोऽन्यदस्ति ॥१५॥

२/८ श्लोक में कथित जडविषयक प्रमाण में अज्ञातबोधकत्वाभाव की उपपत्ति (वसन्ततिलका छन्द)

[5]न[4]ाज्ञाततावगतिर[6]स्ति [1]जडेषु [3]पूर्वं [2]मेयेषु [7]तत्स्फुरणकारणवर्जितत्वात् ।
[1]मानोदया[6]न्न [7]हि [2]पुरा [3]किमपी[5]ह [4]मानं [1]ना[3]पि [2]प्रमेयबलतो [3]जडता [1]हि [2]तस्य ॥१६॥

प्रमेय स्वयं अज्ञात होता हुआ भी स्वनिष्ठ अज्ञातत्व का बोध करा सकता है ? इस शङ्का का निराकरण करते हैं (वसन्ततिलका छन्द)

[7]न[3]ाज्ञातताववगतये [4]स्वयमे[5]व [1]बाह्यं [2]मेयं [6]समर्थ[7]मवबोधविलक्षणत्वात् ।
[6]नापि [5]प्रमाण[4]मवबोधक[7]मस्ति [3]किञ्चित् [1]मानोदयात् [2]पुर [8]इति [9]स्फुट[10]मभ्युपेयम् ।१७।

घटादिनिष्ठ अज्ञातताबोधक अर्थापत्ति का निराकरण (वसन्ततिलका छन्द)

[11]न[4]ाज्ञातता[5]मनवगम्य [3]पुरा [2]प्रवेशात् [1]मानस्य [9]किंचिदपि [6]मानबलेन [10]बोद्धुम् ।
[12]शक्नोति [7]कश्चि[8]दपि [1]मानबलेन [2]बुद्धं [3]किं [4]वा [5]स्वभाव [6]इति [7]निश्चयहेत्वभावात् ॥१८॥

पूर्वोक्त सिद्धान्तबोध के लियें दृष्टान्तप्रदर्शन(वसन्ततिलका छन्द)

प्रक्षालनेन धवलं किमिदं बभूव किं वा पुरापि धवलं स्वयमेव वस्त्रम् ।
इत्येवमेष न विवेक्तुमलं कदाचिद् यो दृष्टवान्न मलिनं वसनं पुरस्तात् ॥१९॥

उक्त दृष्टान्त को दार्ष्टान्त में दिखलाते हैं(वसन्ततिलका छन्द)

एवं पुराऽनधिगतं यदि नानुभूतं मानेन बोधितमिदं प्रतिभाति मेयम् ।
न स्वप्रकाशमिति शक्यमिदं विवेक्तुं केनापि नैव तदवस्थतयैव दृष्टेः ॥२०॥

वेदान्त में ज्ञान और अज्ञान साक्षिभास्य माने जाते हैं(वसन्ततिलका छन्द)

अज्ञातमर्थमवबोधयितुं न शक्तमेव प्रमाणमखिलं जडवस्तुनिष्ठम् ।
किंत्वप्रबुद्धपुरुषं व्यवहारकाले संश्रित्य संजनयति व्यवहारमात्रम् ॥२१॥

अध्यस्त प्रपञ्च का विभागपूर्वक उपपादन(वसन्ततिलका छन्द)

आबोधतः सकलमेव हि सत्यमिथ्याभ्रान्तिप्रमाणविनिवर्त्यनिवर्त्तकत्वम् ।
स्वप्नेऽपि दृष्टमिदमेवमिहापि जाग्रत्काले भवत्वखिलमापरमात्मबोधात् ॥२२॥

स्वप्नदृष्टान्त से पूर्वोक्त विभाग की अभिव्यक्ति (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

स्वप्ने तप्तशिलाधिरोहणगता निःश्रेयसोपायता
मिथ्या ब्राह्मणतर्पणादिनिलया सत्या तथा लौकिकी ।
स्त्रक् सत्या तदहर्मृषैव विदितो निद्रानिवृत्तौ पुनः
स्वप्ने दृष्टमशेषमेव वितथं ग्राह्यं तथा जागरे ॥२३॥

पूर्वोक्त दृष्टान्त का स्पष्टीकरण (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

श्रेयःसाधनताऽग्निहोत्रनिलया सत्येति संगृह्यते
मिथ्या तप्तशिलाधिरोहणगता शिष्टैः परित्यज्यते ।
रज्जुः सत्यतया स्थितैव तदहर्मिथ्यैव तावद् भवेद्
यावन्मूलतमोविदारणपटुर्विद्योदयो नाऽऽगमत् ॥२४॥

वेदान्त में विज्ञानवाद की समानता का आक्षेप(प्रमिताक्षरा छन्द)

ननु शाक्यभिक्षुसमयेन समः प्रतिभात्ययं च भगवत्समयः ।

[1]यदि [2]बाह्यवस्तु [3]वितथं [8]नु [7]कथं [5]समया[4]विमौ [9]न [6]सदृशौ [10]भवतः ॥२५॥

उक्त दोनों मतों का स्पष्टीकरण (प्रमिताक्षरा छन्द)

[1]यदि [2]बोध [3]एव [4]परमार्थवपु[7]र्न [6]तु [5]बोध्य[8]मित्य[9]भिमतं [10]भवति।
[8]ननु [7]चाश्रितं [9]भवति [1]बुद्धमुने[3]र्मत[4]मेव [2]कृत्स्न[5]मिह [6]मस्करिभिः ॥२६॥

ब्रह्मवाद में विज्ञानवाद की समानता का निराकरण(प्रमिताक्षरा छन्द)

[1]ननु [5]मातृमानविषयावगती[2]र्परस्परं [3]प्रति [4]विभागवतीः।
[6]उपयन् [9]भदन्तमुनिना [10]सदृशः [11]कथ[7]मेष [8]वैदिकमुनि[12]र्भवति ॥२७॥

आत्मा में निष्प्रपञ्चतापत्ति पर आक्षेप का परिहार (प्रमिताक्षरा छन्द)

[5]परमात्मसंश्रयतमोजनितं [7]प्रविभक्त[8]मेव तु [6]परस्परतः।
[9]स्थिर[11]मभ्युपेत[2]मिह [3]नः [4]समये [1]ननु [10]मातृमानविषयप्रभृति ॥२८॥

प्रपञ्च में साक्षिभास्यत्व का उपपादन(प्रमिताक्षरा छन्द)

[1]तमसा [4]विनिर्मित[2]मिदं [3]सकलं [4]चतुरः [1]स [10]पश्यति [5]परः [6]पुरुषः।

[2]अविकारिबोधवपु[3]र्द्वयकः [7]करणै[8]र्विना [9]सकलसाक्षितया ॥२९॥

प्रमाता तथा साक्षी में भेद का उपपादन(प्रमिताक्षरा छन्द)

[4]निजमायया [5]परिगतः [3]पुरुषः [9]परतन्त्रया तु [8]निजया [10]प्रभया ।
[6]परिकल्पितं [7]सकलमा[11]कलयन् [1]स [2]हि [12]साक्षिता[13]मुपगतो [14]भवति ॥३०॥

प्रतिज्ञात अर्थ के दाढर्च हेतु का उपपादन(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

[2]ग्राह्यग्राहकयोः [3]स्थिरत्वगमनी [4]तत्प्रत्यभिज्ञा [5]प्रमा
[6]नो[7]पापत्स्यत [1]चेदसे[12]त्स्यद[11]पि [8]नौ [9]सिद्धान्तयो[10]स्तुल्यता ।
[1]सा [4]निर्वक्ष्यति [2]सिध्यती[3]ति [7]जगतः [10]स्थैर्यं [11]स्वरूपात्मकं
[8]चैतन्यस्य [9]च [4]भङ्गुरत्वमि[5]व [6]मे [3]सर्वस्य [1]ते [2]दर्शने ॥३१॥

स्वप्न एवं जाग्रत् में साम्य की शङ्का (प्रमिताक्षरा छन्द)

[1]ननु [4]कल्पितं [2]यदि हि [3]जागरितं [4]वद [11]कीदृशी [10]खलु [9]विलक्षणता ।

स्वपनादमुष्य भवतोऽभिमता परिकल्पितत्वमुभयोस्तु समम् ॥३२॥

स्वप्न एवं जाग्रत् में साम्य का परिहार(रथोद्धता छन्द)

न प्रमातरि सति प्रबाध्यते जागरः स्वपनदृष्टवस्तुवत् ।
मातृमानविषयोपलब्धिभिः साकमेव तमसो निराकृतेः ॥३३॥

जाग्रत् प्रपञ्च को सर्वथा अवाध्य कहना असङ्गत है(रथोद्धता छन्द)

देशकालपुरुषैरवस्थया जागरस्य खलु कारणं तमः ।
साकमेव सहसा निरस्यते वेदवाक्यजनितात्मसंविदा ॥३४॥

स्वप्न तथा जाग्रत् प्रपञ्च में भेद का उपपादन(रथोद्धता छन्द)

स्वप्नदृष्टमिह रज्जुसर्पवद् देशकालपुरुषेषु बाध्यते ।
जागरः पुनरयं तथाविधं बाधकं न लभतेऽसमीक्षणात् ॥३५॥

व्यावहारिकदृष्टि से जाग्रत्, सत्य और स्वप्न मिथ्या कहा गया है(रथोद्धता छन्द)

तेन सत्यमिह जागरं विदुः स्वप्नविभ्रमविरुद्धधर्मकम् ।

आपरात्मपरमार्थदर्शनात् तेन बाधितवपुर्न संत् क्वचित् ॥३६॥

स्वप्न एवं जाग्रत् प्रपञ्च में वैलक्षण्य का उपपादन(रथोद्धता छन्द)

तत्र सत्यमनृतं च भेदतः प्रत्यगात्मतमसा विकल्पितम् ।
प्रक्षिणोति परमात्मवस्तुगा बुद्धिवृत्तिरविचालिनी सती ॥३७॥

कार्यसहित अज्ञान का बाध बुद्धिवृत्ति में आरूढ चैतन्य से ही होता है(रथोद्धता छन्द)

नित्यबोधपरिपीडितं जगद्विभ्रमं नुदति वाक्यजा मतिः ।
वासुदेवनिहतं धनञ्जयो हन्ति कौरवकुलं यथा पुनः ॥३८॥

वेदान्तातिरिक्त मत में सत्यासत्यविभाग की अनुपपत्ति (रथोद्धता छन्द)

सत्यमेवमनृतं च दुर्लभं ब्रह्मवादिसभयाद् बहिः पुनः ।
सत्यतो यदि मृषा पृथग् भवेत् सत्यमेव तदपि प्रसज्यते ॥३९॥

सत्य एवं असत्य में अभेद तथा भेदाभेद पक्ष की अनुपपत्ति(रथोद्धता छन्द)

सत्यतो यदि मृषा न भिद्यते सत्यमेव सुतरां तदिष्यताम् ।

न द्वयात्मकतयाऽनृतं मतं पक्षयोः कथितदूषणद्वयात् ॥४०॥

परमत में वैदिक सिद्धान्त का समर्थन और अवैदिक सिद्धान्त का निराकरण भी दुर्लभ हो जायेगा (रथोद्धता छन्द

वेदवाक्यविषयस्य सत्यता बुद्धवाक्यविषयो मृषा भवेत् ।
इत्यतः कथयितुं न शक्नुयाद् ब्रह्मवादिसमयाद् बहिर्मुखः ॥४१॥

ब्रह्मवाद में सत्यासत्यव्यवस्था की सौलभ्योपपत्ति(रथोद्धता छन्द)

सत्यमेवमनृतं च भेदतः कल्पितं भवतु वर्णितान्नयात् ।
तत्र तद् घटयितुं हि शक्यते नेतरत्र कथितोपपत्तिभिः ॥४२॥

प्रत्यक्षादि प्रमाण में व्यावहारिकत्व मात्र की उपपत्ति(रथोद्धता छन्द)

व्यावहारिकमतोऽवगम्यतां मानजातमखिलं न तात्त्विकम् ।
बाह्यवस्तुविषयं विरोधतोऽबुद्धबोधविधिशक्त्यसंभवात् ॥४३॥

प्रत्यक्षादि प्रमाणों से वेदान्त का बाध कहना असङ्गत है (वसन्ततिलका छन्द)

एवं न तत्त्वविनिवेदनशक्तियोगः संभाव्यतेऽनधिगताधिगतेरयोगात् ।

मानान्तरस्य सकलस्य ततश्च तेन बोधस्त्रयीशिरसि वर्णयितुं न शक्यः ॥४४॥

अनात्मबोध में तात्त्विकत्वानुपपत्ति(वसन्ततिलका छन्द)

आरम्भणादिवचसा खलु निर्विकल्पप्रत्यक्षबुद्धिमनुसृत्य विकल्पबुद्धेः ।
आभासतां मुनिरुवाच तदास्य भावो विज्ञायते स्फुटतरो गुडजिह्विकायाम् ॥४५।

महर्षि जैमिनि के अभिप्राय का उद्घाटन(वसन्ततिलका छन्द)

सत्संप्रयोग इति जैमिनिरप्युवाच यल्लक्षणं तदुभयोः सममेव विद्यात् ।
आपाततस्तदथ युक्तिनिपीडितं सत् सन्मात्रसंविदि निषीदति निर्विशङ्कम् ॥

जैमिनीय सूत्रान्तर की समीक्षा से भी उक्तार्थ की सिद्धि(वसन्ततिलका छन्द)

तत्रापि दुर्घटमवैति यदा तु तत्त्वबोधं विवक्षति विसृज्य विकल्पजालम् ।
किं कारणं वदति येन स तत्त्वगामिविज्ञानमर्थमवबोधयदप्रबुद्धम् ॥४७॥

औत्पत्तिक्र सूत्र का तात्पर्यवर्णन(वसन्ततिलका छन्द)

औत्पत्तिके हि भगवानयमप्रबुद्धमर्थं प्रमाणविषयं कथयांबभूव ।

अत्राह तत्र ननु धर्मगतं प्रमाणं तत्त्वार्थगामि कथितं न परात्मगामि ॥४८॥

उक्त शङ्का का समाधान(वसन्ततिलका छन्द)

सत्यं यथाह पितृमान् व्यवहारदृष्टिमाश्रित्य तत् कथितवान् प्रकृतोपयोगात् ।
दूरप्रसारितनिसृष्टनिगूढभावस्तद्बादरायणमतानयनात् प्रतीमः ॥४९॥

वेदान्त वाक्यों में विध्यर्थ शङ्का परिहार (वसन्ततिलका छन्द)

द्रष्टव्य इत्यपि विधिर्न विधिप्रमेयमात्मानमेव विनियच्छति तत् कुतश्चेत् ।
अज्ञातता च परमात्मन एव यस्माद् यस्माच्च कर्तृवशवर्ति न दर्शनं तत् ॥५०॥

तव्य प्रत्यय में विध्यर्थता की अनुपपत्ति (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

अर्हे कृत्यतृचश्च पाणिनिवचः स्पष्टं विधत्ते यत-
स्तस्माद् दर्शनयोग्यतां वदति नस्तव्यो न तत्त्वान्तरम् ।
तस्मादात्मपदार्थमात्रनियतं मेयत्वमेकान्ततो
द्रष्टव्यादिवचो वदत्यनुभवादज्ञात आत्मा यतः ॥५१॥

अयं धर्मः इत्यादि लौकिक प्रत्यक्ष में प्रामाण्य शङ्का का परिहार (वसन्ततिलका छन्द)

रूप्यादिविभ्रममपेक्ष्य हि शुक्तिकादौ सत्संप्रयोगजनितैव तु बुद्धिवृत्तिः ।
तामप्यपेक्ष्य सति संहृतसर्वभेदे सत्संप्रयोगजनिता मतिरभ्युपेया ।।५२।।

परमात्मा में आपेक्षिक सत्यत्व शङ्का का परिहार (वसन्ततिलका छन्द)

वेदान्तवाक्यजनितां परमात्मबुद्धिवृत्तिं व्यपेक्ष्य पुनरत्र न काचिदस्ति ।
सत्संप्रयोगजनिता भुवनत्रयेऽपि बुद्धिस्तमोविरचितं हि जगत् समस्तम् ।।५३।।

धर्मविषयक विधिवाक्य में व्यावहारिक प्रामाण्य की उपपत्ति (वसन्ततिलका छन्द)

धर्मेऽपि तत्त्वमतिरेव तु चोदनायाः सत्त्वादिवस्तुनि यथाऽक्षनिबन्धना धीः ।
अज्ञाततताऽपि सदृशी व्यवहारकाले तत्त्वावबोधसमये न तु तत्त्वबुद्धिः ।।५४।।

सृष्टि श्रुति में तात्त्विकत्व शङ्का का निराकरण (वसन्ततिलका छन्द)

आरम्भणादिवचनं सकलं प्रवृत्तं प्रत्यक्षबुद्धिविषयादपहर्तुमुच्चैः ।
तत्त्वं यथोदितनयेन विवर्तवादमाश्रित्य सत्यपरिणामनिवारणेन ।।५५।।

श्रुत्यादिगत परिणामवाद स्वीकार का तात्पर्य वर्णन(वसन्ततिलका छन्द)

[6]वाक्यप्रवृत्ति[7]मनुसृत्य [8]च [9]सूत्रकारः [12]सिद्धान्तता[13]मनयद[10]त्र [11]विवर्तवादम् ।
[3]तत्त्वप्रकाशनविधा[5]वपहृत्य [4]शक्ति[1]मारम्भणादिवचना[2]दपरप्रमायाः ॥५६॥

वेदव्यासजी का अभिप्राय विवर्तवाद में सुनिश्चित है (वसन्ततिलका छन्द)

[1]आरम्भसंहतिविकारविवर्तवादा[2]नाश्रित्य [3]वादिजनता [4]खलु [5]वावदीति ।
[2]आरम्भसंहतिमते [3]परिहृत्य [6]वादौ [5]द्वा[1]वत्र [7]संग्रहपदं [8]नयते [6]मुनीन्द्रः ॥५७॥

पूर्वोत्तर भूमिका भेद का प्रदर्शन (वसन्ततिलका छन्द)

[1]तत्रापि [2]पूर्व[4]मुपगम्य [3]विकारवादं [5]भोक्त्रादिसूत्र[6]मवतार्य [7]विरोधनुत्त्यै ।
[12]प्रावर्तत [10]व्यवहृतेः [11]परिरक्षणाय [8]कर्मादिगोचरविधा[9]वुपयोगहेतोः ॥५८॥

परिणामवाद विवर्तवाद की पूर्वभूमिका है (वसन्ततिलका छन्द)

[2]साक्षादि[1]हा[3]भिमत[5]मेव [4]विवर्तवाद[6]माहृत्य [9]सूचयति [7]पूर्व[8]मपेक्षमाणः ।
[3]आरम्भणादिवचनेन [4]विवर्तवादं [6]शक्नोति [5]वक्तु[2]मुदिते [1]परिणामवादे ॥५९॥

उक्तार्थ को स्पष्ट करने के लिये लौकिक दृष्टान्त (वसन्ततिलका छन्द)

आरुह्य भूमिमधरामितराऽधिरोढुं शक्येति शास्त्रमपि कारणकार्यभावम् ।
उक्त्वा पुरा परिणतिप्रतिपादनेन संप्रत्यपोहति विकारमृषात्वसिद्ध्यै ॥६०॥

उक्त दृष्टान्त का सिद्धान्त में संगमन (उपजाति छन्द)

विवर्तवादस्य हि पूर्वभूमिर्वेदान्तवादे परिणामवादः ।
व्यवस्थितेऽस्मिन् परिणामवादे स्वयं समायाति विवर्तवादः ॥६१॥

परिणामवाद में प्राथम्य उक्ति का समापन (उपेन्द्रवज्रा छन्द)

उपायमातिष्ठति पूर्वमुच्चैरुपेयमाप्तुं जनता यथैव ।
श्रुतिर्मुनीन्द्रश्च विवर्त्तसिद्ध्यै विकारवादं वदतस्तथैव ॥६२॥

दार्शनिकों के विविध बादपक्ष का निरूपण (इन्द्रवज्रा छन्द)

आरम्भवादः कणभक्षपक्षः संघातवादस्तु भदन्तपक्षः ।
सांख्यादिपक्षःपरिणामवादो वेदान्तपक्षस्तु विवर्त्तवादः ॥६३॥

परिणामवाद को सूत्रकार ने अभ्युपगमवाद के आधारपर माना है(उपजाति छन्द)

[9]विकारवादं [8]कपिलादिपक्ष[7]मुपेत्यवादेन तु [2]सूत्रकारः ।
[1]श्रुति[3]श्च [10]संजल्पति [4]पूर्वभूमौ [5]स्थित्वा [6]विवर्त्तप्रतिपादनाय ॥६४॥

परिणामवाद का लक्षण (उपेन्द्रवज्रा छन्द)

[6]अभेदिनः [7]सावयवस्य [8]सत्यविचित्ररूपान्तरदर्शकत्वम् ।
[10]वदन्ति [5]धीराः [9]परिणाम[1]मस्या [2]वसुन्धराया [4]इव [3]सस्यसृष्टिम् ॥६५॥

विवर्त का लक्षण (उपेन्द्रवज्रा छन्द)

[5]अभेदिनो [6]निर्विकृते[7]रनेकमृषास्वरूपान्तरदर्शकत्वम् ।
[8]विवर्तशब्दार्थ [4]इह [9]प्रसिद्ध[1]स्तरङ्गभेदादि[3]व [2]चन्द्रभेदः ॥६६॥

विवर्तवाद में श्रुतिप्रमाणप्रदर्शन(उपजाति छन्द)

[1]अहं [5]प्रजायेय [3]बहु [2]स्वयं [4]स्या[6]मित्यादिनाऽऽ[7]दौ [8]परिणाम[9]मुक्त्वा ।
[2]विकारमिथ्यात्व[1]मथ [3]ब्रुवाणा [5]विवर्तवादं [4]श्रुति[6]रानिनाय ॥६७॥

अन्यान्य श्रुत्यादियों का सामञ्जस्य भी विवर्तवाद में ही है(वसन्ततिलका छन्द)

मायाश्रुतिस्मृतिवचः सकलं तथा च वस्तुत्वमर्दनपरं घटते विवर्ते।
सर्वस्य कारणविकारविभागभाजः प्रागादृतस्य परमार्थतया प्रतीतेः ॥६८॥

बौद्ध मत का निराकरण (वसन्ततिलका छन्द)

संघातवादमुपगम्य तु तत्र पक्षे संहन्त्रभाव इति सूत्रकृदाह दोषम्।
स्थायी भदन्तसमये न हि कश्चिदत्र संघातसंजननशक्तिसमन्वितोऽस्ति ॥६९॥

आरम्भवाद में दोष प्रदर्शन (वसन्ततिलका छन्द)

आरम्भवादमुपगम्य तदीययुक्तेस्तत्प्रक्रियामनुसरन् व्यभिचारमाह।
वैशेषिकं प्रति महद्वर्दिदं हि योज्यं यद्वाऽपि दीर्घवर्दिदं जडमित्यनेन ॥७०॥

उक्तार्थ का स्पष्टीकरण (मन्दाक्रान्ता छन्द)

ह्रस्वारब्धं त्र्यणुकमणुभिस्तद्वदारब्धमेतद्
ह्रस्वं नो तन्न च तदणुवत्संमतं तद्वदेतत्।

सर्वं कार्यं गगनधरणीमध्यगं चेतनोत्थं
निश्चित्कं नो जडिमघटितं युक्तमित्याचचक्षे ॥७१॥

पूर्वोक्त व्यभिचार का स्पष्टीकरण (शालिनी छन्द)

ह्रस्वाणुत्वे कारणद्वित्वहेतोर्जाते नैते पारिमाण्डल्यहेतोः।
दीर्घत्वं यद् यच्च दीर्घे महत्त्वं द्रव्ये ते द्वे कारणत्रित्वहेतोः ॥७२॥

वैशेषिक सिद्धान्तप्रदर्शन (प्रमिताक्षरा छन्द)

द्व्यणुकस्य जन्म परमाणुयुगात् परिमण्डलादिति कणादमतम्
द्व्यणुकत्रयात् त्र्यणुकजन्म पुनर्नियमं न कश्यपसुतो वदति ॥७३॥

उक्त व्यभिचार का परिणाम प्रदर्शन (सुन्दरी छन्द)

द्व्यणुकत्र्यणुकव्यपाश्रयं परिमाणं प्रति कारणाश्रयः।
न तु कारणमिष्यते गुणस्तदवष्टभ्य वयं जिगीषवः ॥७४॥

कारणगत परिणाम से कार्यगत परिणाम की उत्पत्ति मानने पर क्षतिप्रदर्शन (सुन्दरी छन्द)

[1]यदि [2]कारणसंश्रयाद् [3]गुणाद् [4]द्व्यणुकादेः [5]परिमाण[6]मिच्छति ।
[2]द्व्यणुकादिसमाश्रये [1]तदा [3]परिमाणे[4]ऽतिशयो [5]विरुध्यते ॥७५॥

अभ्युपगमवाद के आधार पर व्यासजी ने परिणामवाद स्वीकारा है (प्रमिताक्षरा छन्द)

[2]परिणामवाद[3]मुपगम्य [1]तथा [4]रचनाद्यसंभव[6]मुवाच [5]मुनिः ।
[1]परमेश्वरं [4]न हि [2]विना [5]घटते [3]जडरूपवस्तुपरिणाम [6]इति ॥७६॥

त्रिविध दृष्टि निरूपण प्रदर्शन(प्रमिताक्षरा छन्द)

[2]क्वचि[3]दभ्युपेत्य [4]कथनं [5]कुरुते [1]परपक्षदूषणकथावसरे ॥
[4]निजपक्षदोषपरिहारपरः [1]क्वचि[2]दभ्युपेत्य [6]वदती[3]ह [5]मुनिः ॥७७॥

उक्तार्थ का विवरण (प्रमिताक्षरा छन्द)

[3]परपक्षनिषेध[4]माचरन् [2]क्वचि[5]दङ्गीकरणं [6]करोति [1]सः ॥
[2]परदर्शितदोषनुत्तये [1]क्वचिदि[3]त्ये[4]ष [5]विशेष [6]ईरितः ॥७८॥

उक्तार्थ में तात्पर्यावधारण (उपजाति छन्द)

भोक्त्रादिसूत्रे परिणामवादमाश्रित्य तद्वादिभिरुक्तदोषम् ।।
समादधानो मुनिराह तस्मात् सिद्धान्तसिद्धिः पुनरुत्तरत्र ।।७९।।

२।५७ श्लोक से किये गये उद्घोष का तात्पर्यवर्णन (मन्दाक्रान्ता छन्द)

प्रत्यासन्ना परिणतिरियं विप्रकृष्टस्तु पूर्वः
संघातादिः सकल उदितो वेदसिद्धान्तसिद्धेः ।।
एतावत्त्वादियमभिमता सूत्रकारस्य भाति
भ्रान्तिभ्रष्टस्फुटनिजमनःकौशलानां नराणाम् ।। ८०।।

सिद्धान्त बोध के लिए भिन्न भिन्न दृष्टियों का निरूपण(वसन्ततिलका छन्द)

आरोपदृष्टिरपवादकदृष्टिरेवं व्यामिश्रदृष्टिरिति दृष्टिविभागमेनम्
संगृह्य सूत्रकृदयं पुरुषं मुमुक्षुं सम्यक् प्रबोधयितुमुत्सहते क्रमेण ।।८१।।

उक्त दृष्टियों का स्वरूप एवं क्रम प्रदर्शन (वसन्ततिलका छन्द)

आरोपदृष्टिरुदिता परिणामदृष्टिर्द्वैतोपशान्तिरपवादकदृष्टिरन्त्या ।

मध्ये विवर्तविषया द्वयमिश्रदृष्टिः व्यामिश्रदृष्टिरधरोत्तरभूमिभावात् ॥८२॥

पूर्वोक्त तीनों दृष्टियों के पौर्वापर्यभाव का प्रदर्शन (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

तत्त्वावेदकमानदृष्टिरधमा तत्त्वक्षतिर्मध्यमा
तत्त्वप्रच्युतिविभ्रमक्षतिकरी तत्रान्त्यदृष्टिर्मता ।
जीवैकत्वमुमुक्षुभेदगतितो व्यामिश्रदृष्टिर्द्विधा
भिन्ना तत्र च पूर्वपूर्वविलयादूर्ध्वोर्ध्वलब्धिर्भवेत् ॥८३॥

संगृहीत विलयक्रम का प्रदर्शन (प्रीमताक्षरा छन्द)

परिणामबुद्धिमुपमृद्य पुमान् विनिवर्तयत्यथ विवर्तमतिम् ।
उपमृद्य तामपि पदार्थधिया परिपूर्णदृष्टिमुपसर्पति सः ॥८४॥

ब्रह्मावबोध के लिए पूर्वोक्त दृष्टियों की अनिवार्यता (प्रमिताक्षरा छन्द)

अथशब्दसूचितमुमुक्षुरिमं खलु दृष्टिभेदमुदितक्रमतः ।
उपढौकते विगलिताखिलधीरवतिष्ठते निजमहिम्नि ततः ॥८५॥

परिणामादि दृष्टियों के क्रम का निरूपण (प्रमिताक्षरा छन्द)

परिणाम इत्यथ विवर्त इति बहवोऽहमेव च मुमुक्षुरिति।
परिपुष्कलं च परमं पदमित्यवगत्य तिष्ठति महिम्नि निजे ॥८६॥

विवर्तदृष्टि में मध्यमत्व का उपादान (सुन्दरी छन्द)

परिणामधियो विवर्तधीरपवादात्मतया व्यवस्थिता।
सकलद्वयमर्दिनीं धियं प्रति साऽऽरोपगिराऽभिधीयते ॥८७॥

उभयव्यतिमिश्ररूपतां भजते तेन विवर्तधीरियम्।
प्रथमोत्तमयोर्द्वयोः पुनर्व्यतिमिश्रीभवनं न विद्यते ॥८८॥

उक्त दृष्टित्रय से नानाश्रयत्व का उपपादन (दुतविलम्बित छन्द)

कृपणधीः परिणाममुदीक्षते क्षपितकल्मषधीस्तु विवर्तताम्।
स्थिरमतिः पुरुषः पुनरीक्षते व्यपगतद्वितयं परमं पदम् ॥८९॥

विवर्त की उभयरूपता विभिन्न पुरुषों के आश्रित रहती है (दुतविलम्बित छन्द)

पुरुषभेदवशाद् विविधा भवेत् क्षपितकल्मषधीरपि मध्यमा ।
जगदनेकमुमुक्षुकमीक्षते पुरुष एकतरो न तथेतरः ॥९०॥

उक्त तीनों दृष्टियों का एक पुरुष के आश्रित की मान्यता (द्रुतविलम्बित छन्द)

इति तु केचिदुशन्ति महाधियस्तदपि सम्भवतीति न दुष्यति ।
इह तु सूत्रकृताऽथगिरोदितः पुरुष एकविधस्त्रिविधो न तु ॥९१॥

सूत्रोक्त एक ही अधिकारी क्रमशः पूर्वोक्त तीनों भूमियों को पार कर जाता है (द्रुतविलम्बित छन्द)

तिसृषु भूमिषु तस्य च तिष्ठतः क्रमवशात् स्वयमुत्तमभूमिका ।
समुपसर्पति तत्र च तिष्ठतः समुपशाम्यति कारणकार्यधीः ॥९२॥

हेत्वन्तर से उक्तार्थ का उपपादन (द्रुतविलम्बित छन्द)

श्रुतिवचांसि मुनिस्मरणानि च द्वयविशारदगीरपि सर्वशः ।
त्रयमपेक्ष्य दशात्रितयं विना न हि घटामुपयान्ति कदाचन ॥९३॥

विरोध परिहारमात्र के लिए परिणामवाद को स्वीकारा था, सिद्धान्त दृष्टि से नही (उपजाति)

[1]अतो[5]ऽनपो[6]ह्यैवं तु [3]तत्त्वसंविदुत्पाद[2]नेऽध्यक्षमितेः [7]पुरस्तात् ।
[4]सामर्थ्य[10]मक्षादिविरोध[8]मस्य [11]निवारयामास [9]समन्वयस्य ॥९४॥

सिद्धान्तदृष्टि से विरोध का परिहार (उपजाति छन्द)

[2]इ[1]हा[6]धुनारम्भणशब्दशक्तिं [7]संश्रित्य [9]तत्त्वावगतिक्षमत्वम् ।
[8]अक्षादिमानस्य [10]निराकरोति [3]समन्वय[5]स्यापनयन् [4]विरोधम् ॥९५॥

विवर्तवाद की उपादेयता (उपजाति छन्द)

[3]अखण्डवाक्यार्थ[4]मनुव्रजन्ती [5]समन्वयोत्थापितबुद्धिवृत्तिः ।
[1]अक्षादिभि[2]स्तत्त्वनिवेदने हि [7]सद्यः [8]परिम्लायति [6]निर्विशङ्कम् ॥९६॥

समन्वय सूत्र से होनेवाले फल की उपेक्षा असङ्गत ही होगी (उपेन्द्रवज्रा छन्द)

[5]अखण्ड[6]मे[7]वाद्वय[8]मात्मतत्त्वं [1]त्रयीशिरोवाक्य[2]मनुप्रविष्टाः ।
[9]वदन्ति [3]शब्दा [10]इति [4]शब्दशक्तिनिरूपणे [11]पूर्व[12]मुदीरितं हि ॥९७॥

पूर्वोक्त ग्रन्थ का तात्पर्यावधारण (उपजाति छन्द)

अतो विरोधस्य निरासससिद्ध्यै निरस्यतेऽक्षादिषु तत्त्वभागः ।
संरक्ष्यते संव्यवहारशक्तिभागः पुनः सर्वमतोऽनवद्यम् ॥९८॥

विवर्तवाद में व्यावहारिकत्व की सिद्धि (प्रमिताक्षरा छन्द)

चितिवस्तुनः स्वमहिमस्फुरणे स्वयमेव कारणमिति प्रगतम् ।
प्रतिबध्य तच्चितिगताग्रहणं विपरीतबुद्धिमुपढौकयति ॥९९॥

अज्ञान के स्वभाव का उपपादन (प्रमिताक्षरा छन्द)

व्यवहारनिर्वहणशक्तिमसौ न चिदग्रहोऽस्य विनिवारयति ॥
परमार्थवेदनविधिक्षमतामवखण्डयन्नपि मनःप्रभृतेः ॥१००॥

वेदान्तवाक्यनिष्ठ तत्त्वावेदकत्व का अवरोधक अज्ञान नही है(प्रमिताक्षरा छन्द)

चितिवस्तुबुद्धिजनकस्य पुनर्वचसो न खण्डयति शक्तिमसौ ।
स्वनिबन्धनस्फुरणमेव चितेः प्रतिबध्य तिष्ठति न वाचनिकम् ॥१०१॥

अज्ञान में पक्षपातित्व का हेतुप्रदर्शन (शालिनी छन्द)

प्रत्यक्षादेरेव दोषस्ततोऽयं वेदान्तानां नैव दोषानुबन्धः ।
सत्यं वस्तु छादयन्नद्वितीयं द्वैतं यस्मादानयत्येष दोषः ॥१०२॥

समानविषयत्वाभाव के कारण प्रत्यक्षादि प्रमाणों में और वेदान्तवाक्यों में बाध्यबाधकता का अभाव है(वसन्ततिलका छन्द)

किं च प्रतीचि सकलोपनिषत् प्रवृत्ता मानान्तरं सकलमेव तु तत्पराचि ।
प्रत्यक्पराग्विषयगोचरयोश्च बुद्ध्योः स्पर्द्धा न संभवति मेयविभागसिद्धेः ।१०३।

युक्तियों से भी विरोधाभाव का उपपादन (वंशस्थ छन्द)

अभिन्न एवैष पटः समीक्ष्यते न भेदगन्धोऽपि पटे समीक्ष्यते ।
पटेऽपि भेदो यदि कल्प्यते तदा पटो विदीर्येत कुतस्तदा पटः ॥१०४॥

द्वितीय पक्ष में दोष प्रदर्शन (वंशस्थ छन्द)

घटात् पटो भिन्न इतीष्यते यदि स्फुटं प्रसज्येत विकल्पिता भिदा ।
न सत्यमापेक्षिकमीक्षितं क्वचित् तथा च यत्नेन निरूपयियिष्यते ॥१०५॥

भेदबुद्धि का निरूपण अशक्य है (वंशस्थ छन्द)

न भेदबुद्धिर्घटते प्रमाणतो विना च धर्मिप्रतियोगिसंविदा ।
न भेदबुद्धिं विरहय्य कल्पते तथैव धर्मप्रतियोगिधीरपि ॥१०६॥

वैधर्म्यरूप भेद माननेपर भी अन्योन्याश्रय दोषापत्ति (वंशस्थ छन्द)

परस्पराभावधिया न भेदधीर्विनोपपन्ना न तया विनेतरा ।
इतीदमन्योन्यसमाश्रयं यतो मतिद्वयं तेन तदस्तु कल्पितम् ॥१०७॥

प्रत्यक्षादि में प्रामाण्याभाव की उपपत्ति (उपेन्द्रवज्रा छन्द)

असन्निवृत्तिर्न च सन्निवृतिर्न चोपपन्ना सदसन्निवृत्तिः ।
जडप्रमाणस्य फलं ततोऽपि न तेन वेदान्तजबुद्धिबाधः ॥१०८॥

उत्पत्तिरूप पक्ष में भी पूर्वोक्त दोषापत्ति(उपेन्द्रवज्रा छन्द)

असत्प्रसूतिर्न च सत्प्रसूतिर्न चोपपन्ना सदसत्प्रसूतिः ।
जडप्रमाणस्य फलं ततोऽपि न तेन वेदान्तजबुद्धिबाधः ॥१०९॥

जडविषयक संवित् की अनुत्पत्ति का निरूपण (वंशस्थ छन्द)

जडार्थसंविन्न च कुर्वतः फलं तदा हि कुर्वत्त्वमपीदृशं भवेत् ।
अकुर्वतस्तत्फलमित्युदीरयन् विहस्यते दुर्मतिरर्भकैरपि ॥११०॥

संवित् में प्रमाणफलत्वका निरास (उपेन्द्रवज्रा छन्द)

सती न संवित् क्रियते हि सत्त्वान्न चासती तद्वदसत्त्वहेतोः ।
न चोपपन्नं सदसत्त्वमस्यास्ततो न कार्यत्वमुपैति संवित् ॥१११॥

सामान्यतः कार्यत्व का निरास (वंशस्थ छन्द)

न शक्यमुत्पाद्यमिति प्रशस्यते तदा हि शक्तेरपि जन्यताऽऽपतेत् ।
अशक्यमुत्पाद्यमितीष्यते यदि द्रुतं नभश्चूर्णय मुद्गरादिना ॥११२॥

प्रत्यक्षादि में अप्रामाण्य के लिए जडविषयक प्रमाण में फलाभाव का निरूपण (वंशस्थ छन्द)

जडप्रमाणस्य फलानिरूपणाज्जडस्य तत्त्वं न निरूपणक्षमम् ।
अतो न मानान्तरमर्थतोऽपि नस्त्रयीशिरोवस्तु निराकरिष्यति ॥११३॥

प्रत्यक्षादि प्रमाणों का विषय आत्मा को मानने पर भी उनमें बाधकत्व नही है
(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

आत्मन्येव समस्तमस्तु यदि वा मानान्तरं तेन च
स्पष्टं वेदशिरोविरुद्धमिति च स्वीकुर्महे कामतः ।
एवं सत्यपि पूर्वभावि सकलं मानान्तरं बाधते
पश्चात् कस्यचिदेव वेदशिरसो जाता परब्रह्मधीः ॥११४॥

पौर्वापर्ये पूर्वदौर्बल्य उपन्यास (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

पूर्वोत्पन्नमृगाम्बुविभ्रमधियो बाधं विना नोत्तरं
विज्ञानं समुदेतुमूषरभुवो याथात्म्यमावेदयत् ।
शक्नोतीति यथा मृगाम्बुधिषणामुन्मृद्नदुत्पद्यते
तद्वद्वेदशिरोवचोजनितधीर्भेदभ्रमं ब्रह्मणि ॥११५॥

उक्त बाध्य-बाधक का पूर्वमीमांसा से समर्थन करते हैं (शालिनी छन्द)

पौर्वापर्ये पूर्वदौर्बल्यमाह षष्ठेऽध्यायेऽवस्थितो जैमिनिर्यत् ।
वक्ष्यामस्तत्सर्वमानीय तुभ्यं बुद्धिं स्वीयां सम्यगत्रावधत्स्व ॥११६॥

उक्त प्रतिज्ञा का उपपादन (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

उद्गातृप्रतिहर्तृकर्तृकतया जातौ वियोगौ क्रमाद्
यस्मिन् कर्मविधिप्रयोगसमये तत्रैष नः संशयः ।
किं सर्वद्रविणव्ययो भवतु वा संस्थापनं दक्षिणा-
हीनस्येति तदा परं बलवदित्यूचे मुनिर्जैमिनिः ॥११७॥

सूत्रस्थ प्रकृतिवत् पद का विवरण (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

यद्वत् प्राकृतवैकृतावतितरामन्योन्यसंस्पर्धिनौ
धर्मौ बाध्यनिवर्तकावभिमतौ बुद्धौ क्रमेणान्वयात् ।
पाठव्यत्ययसंभवेऽपि च तयोर्बुद्धिक्रमो विद्यते

पूर्वा प्राकृतधर्मधीरितरधीरन्त्या तथैवोत्थितेः ॥११८॥

श्रुतिलिङ्गादि सूत्र में पारदौर्बल्य और पौर्वापर्य सूत्र में पूर्वदौर्बल्य जो महर्षि ने कहा है उनकी व्ययस्थाका उपपादन (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

सापेक्षावुदितौ यदा तु भवतः पूर्वापरप्रत्ययौ
पूर्वस्तत्र निवर्तको भवति तत्रान्त्यो निवर्त्यो यथा ।
वेदोपक्रमजा मतिर्बलवती नर्गादिसंहारजा
वेदोपक्रममुख्यभाग् भवति तत्रार्गादिवाणी गुणात् ॥ ११९॥

ब्रह्मसूत्र में भी पूर्व से पर को बाध्य कहा है (रथोद्धता छन्द)

ब्रह्म पुच्छमितिवाक्यगामिनोर्ब्रह्म पुच्छमिति शब्दयोर्द्वयोः ।
ब्रह्मशब्दबलवत्तरत्वतः पुच्छशब्दपरिपीडनं मतम् ॥१२०॥

पूर्वोक्त नियम के अपवाद का उपपादन (प्रमिताक्षरा छन्द)

अथ यद्युपक्रमणमल्पतरं भवति प्रभूतमुपसंहरणम् ।

बलवत्तदा चरममेव भवेदुभयोर्विरोधसमये नितराम् ॥१२१॥

उक्त अपवाद के भी बाधक को दिखाते है (प्रमिताक्षरा छन्द)

अथ यद्युपक्रमणमल्पमपि प्रतिपाद्यवस्तुविषयं भवति ।
अविवक्षितार्थविषयं चरमं भवति प्रभूतमपि बाध्यमदः ॥१२२॥

अद्वैत आगम में प्रत्यक्षादि-बाधकत्व का पुनरुपपादन(वसन्ततिलका छन्द)

आसन्नवस्तुविषयेण यथाऽक्षजेन बाधो भवत्यनुमितेर्व्यवधानयोगात् ।
प्रत्यक्त्वमात्रविषयेण तथाऽऽगमेन युक्तोऽक्षजादिविषयावगमस्य बाधः॥१२३॥

प्रत्यक्षादि प्रमाणों का उपजीव्य होनेसे भी वेदान्त प्रमाण प्रबल है (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

किं चाम्नायवचःप्रमेयबलतः सर्वं प्रमाणान्तरं
स्वार्थं साधयतीति तत्सकलमेवायत्तमस्मिन्भवेत् ।
यद् यत्रायतते विरोधसमये तेनास्य तद्बाधने
सामर्थ्यं न च विद्यते श्रुतिवचोबाधे यथा हि स्मृतेः ॥१२४॥

संसार में ज्ञानमात्र निवर्त्यत्वोपपादन (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

[6]ब्रह्माज्ञानसमुद्भवं [8]ग्रहगणं [7]सातिग्रहं [4]ब्रह्मणः
[5]स्वाकारग्रहणेन [1]वेदशिरसो [2]जाता [3]मतिर्[9]बाधते ।
[1]विद्या [2]वस्तुबलेन [3]जन्म [4]लभते [1]माया [2]तु [3]निर्वस्तुका
[1]सा [3]ता[2]मुद्भवमात्रतः [4]क्षपयति [7]ध्वान्तं [5]यथा [6]भास्करः ॥१२५॥

संसार वृक्ष को ज्ञानरूप कुठार से छेदन करना अनिवार्य है (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

[4]रागद्वेषप्रशाखं [5]विषयगुणसमुद्भासिधीवृत्तिशाखं
[6]धर्माधर्मप्रवृत्तिप्रचुरसुखसमुद्वेगभोगप्रवालम् ।
[8]छिन्द्याः [7]संसारवृक्षं [1]निशितमतिमहाशास्त्रनिक्षेपदक्षः
[2]प्रत्यक्तत्त्वस्थलीगं [3]निबिडतमतमोमूललब्धप्ररोहम् ॥१२६॥

अविद्याजन्य संसार का उच्छेद विद्या से ही सम्भव है (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

[1]प्रत्यग्वस्तुन [3]एव [2]तत्र [4]विषये [7]माया [8]तमः [9]कारणं

[10]ध्वान्तं [11]बीजम[12]बोध [13]इत्य[14]पि [15]गिरा[5]ऽविद्यै[6]व [16]संकीर्त्यते ।
[1]तस्या [3]एव [5]विलास [2]एष [6]भवता [4]गुर्वादिभेदान्वितः
[7]संक्लृप्तो [4]न [3]तु [5]विद्यते [2]पृथग[1]सौ [7]संध्ये [6]यथा [8]धामनि ॥१२७॥

बन्ध मोक्ष व्यवस्था का निरूपण(शालिनी छन्द)

[2]मुक्तामुक्तौ [3]विद्वदज्ञौ [1]त्वदन्या[4]वाकाशादि क्ष्माऽवसानं [6]च [5]विश्वम् ।
[3]स्वाविद्योत्थस्वान्तनिष्पन्दनं [1]तद् [4]विज्ञातव्यं [6]मा [7]ग्रहीर[5]न्यथै[2]तत् ॥१२८॥

एकजीववाद में बद्ध-मुक्त की व्यवस्था (शालिनी छन्द)

[2]कालो[1]ऽतीतो[3]ऽनादिरे[4]ष्य[5]न्ननन्तो [3]मुक्तामुक्तौ [1]तत्र [2]पूर्वं [4]तथो[5]र्ध्वम् ।
[1]तस्मादे[2]तद् [3]दुर्घटं [5]शङ्कसे [4]चेन् [6]मा [7]शङ्किष्ठाः [8]स्वप्नदृष्टान्तदृष्टेः॥१२९॥

दृष्टान्त का स्पष्टीकरण (शालिनी छन्द)

[1]सुप्तो [2]जन्तुः [3]स्वल्पमात्रे[5]ऽपि [4]काले [7]कोटीः [8]पश्ये[6]द्वृत्तसंवत्सराणाम् ।
[5]पश्येत्[3]कोटीरे[1]व[2]मागामिनां [4]च [3]जाग्रत्काले [4]योजये[2]त्सर्व[1]मेतत् ॥१३०॥

उक्त न्याय का जाग्रतकाल में उपपादन (शालिनी छन्द)

कालोऽनादिस्तत्र मुक्तः शुकादिः कालोऽनन्तो मोक्ष्यते तत्र चान्यः ।
इत्येवं ते बन्धमोक्षव्यवस्थासंसिद्धिः स्यादापरात्मप्रबोधात् ॥१३१॥

क्रमशः सिद्धान्त से भिन्न सात अन्य मतों का प्रदर्शन (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

अज्ञानं सकलभ्रमोद्भवनकृत् पिण्डेषु सामान्यव-
ज्जीवानां प्रतिबिम्बकल्पवपुषां बिम्बोपमे ब्रह्मणि ।
विद्वांसं पुरुषं जहाति भजते विद्याविहीनं नरं
नष्टानष्टमिवात्मपिण्डमधुना जातिस्तथैके जगुः ॥१३२॥

द्वितीय मत प्रदर्शन (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

अज्ञानानि बहून्यसंख्यवपुषो जीवान् मुमुक्षूनपि
ज्ञानाज्ञानसमाश्रयाननुयुगं तेषां च निःश्रेयसम् ।
मायामीश्वरसंश्रयामनुगमात् संसारसंवर्त्तिनीं

[5]केचिद् [6]दैववविघातविघ्नमनसः [8]स्वीचक्रुरल्प[7]श्रुताः ।।१३३।।

तृतीय मत प्रदर्शन(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

[2]आकाशो [3]विहगो[4]ऽस्ति [5]ना[6]स्ति [7]च [1]यथा [8]तद्वत् परब्रह्मणि
[9]स्वच्छे [10]चिद्वपुषि [11]स्वभावविमले[12]ऽसङ्गे [13]शिवे [14]शाश्वते ।
[15]निर्भेदे[16]ऽनुदयव्यये[17]ऽनवयवे[19]ऽविद्या [20]भवे[21]न्नो [22]भवे-
दि[1]त्ये[2]वं [5]निरवद्य[6]माहु[4]रपरे [3]पक्षव्यवस्थार्थिनः ।।१३४।।

चतुर्थ मतप्रदर्शन (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

[4]शुद्धे [5]वस्तुनि [1]य[2]द्यपि [6]प्रविशति [3]ध्वान्तं [9]मनः [11]कारणं
[12]स्वीकृ[13]त्यैव [7]तथाप्यु[10]पाधि[8]मपरं [14]ब्रह्मस्वरूपे [15]विशेत् ।
[1]त[2]च्चा[3]न्तःकरणं [4]सुसूक्ष्मवपुषा [8]तिष्ठेद् [7]बहिः [5]सर्वदा
[6]चैतन्ये [9]तमसो [10]नियामक[11]मिति स्वीचक्रु[13]रन्ये [12]पुनः ।।१३५।।

पञ्चम मतप्रदर्शन (स्त्रग्धरा छन्द)

अज्ञानि ब्रह्म बुद्धीरनुसरति ततः स्थावरं जङ्गमं च
स्वाज्ञानादेव भूत्वा क्वचिदवगतितो मुक्तमन्यत्र बद्धम् ।
तच्चाज्ञानं विनष्टं स्थितमथ च तदेवांशभेदोपपत्ते-
रेवं सर्वव्यवस्था परमपुरुषगा जाघटीतीति केचित् ॥१३६॥

षष्ठ मत प्रदर्शन (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

बाह्याध्यात्मिकवस्तुजातजननी माया हरेर्बन्धनी
शक्तिर्दाशकजालवत् प्रसरणं प्राप्नोत्यविद्यावतः ।
जीवान् संकुचतीच्छया भगवतः सत्याऽस्तु मिथ्याऽथ वा
संकोचश्च विलक्षणश्च भवतः स्वाभाविकावित्यपि ॥१३७॥

सप्तम मतप्रदर्शन (स्रग्धारा छन्द)

संस्कारभ्रमसन्ततिं प्रतिनरं भिन्नां परब्रह्मणि

स्वीचक्रुर्विषये प्रवाहवपुषाऽनादिं तमः केचन ।
तामुच्छिद्य समुच्चयेन घटते मोक्षाय कश्चिन्नरः
कश्चित्तद्विरहेण संसरति नो जीवाश्रया सेति च ॥१३८॥

२/१३२ श्लोक में कहे गये प्रथम मत का निराकरण(शालिनी छन्द)

अज्ञस्तावत् प्रत्यगात्माहमज्ञ इत्येवं नः सिध्यति स्वप्रकाशात् ।
अज्ञातं तु ब्रह्म सिध्येत् कुतो वः सम्यग् ज्ञानाद् भ्रान्तितः स्वप्रकाशात् ।१३९

प्रथमविकल्प में दोष प्रदर्शन(शालिनी छन्द)

सम्यग्ज्ञानाद् ब्रह्मणः सिद्धिपक्षे जाडयं तस्य स्याद् घटादेर्यथैव ।
सम्यग्ज्ञानाद् ब्रह्मणोऽज्ञानसिद्धौ तस्यापि स्यात् सत्यता तद्वदेव ॥१४०॥

उक्तविकल्प के द्वितीय एवं तृतीय पक्ष में भी दोष प्रदर्शन (शालिनी छन्द)

भ्रान्तिज्ञानाद् ब्रह्मणः सिद्धिपक्षे तस्यापि स्यात् कल्पितत्वं तमोवत् ।
अज्ञातं चेद् ब्रह्म नः स्वप्रकाशं मा भाषिष्ठा नानुभूतिस्तथा नः ॥१४१॥

२/१३३ श्लोक द्वारा कहे गये द्वितीय मत का निराकरण(शालिनी छन्द)

अज्ञातत्वे यानवोचाम दोषान् मायावित्वे ब्रह्मणस्तानवेहि ।
मिथ्याज्ञानात् स्वप्रकाशात् प्रमाणात् संसिद्धिः स्यात्तस्य तत् कथ्यतां नः ॥१४२

उक्त दोषों को मूलकार स्वयं दिखलाते हैं (शालिनी छन्द)

मिथ्याज्ञानाद् ब्रह्मणः सिद्धिपक्षे मायेव स्यात् कल्पितं तच्च तद्वत् ।
मानादिष्टं ब्रह्म मायावि चेद् वा मायायाः स्यात् सत्यता जाड्यमस्य ॥१४३॥

स्वप्रकाश पक्ष में भी दोष प्रदर्शन(शालिनी छन्द)

तन्मायावि ब्रह्म चेत् स्वप्रकाशं मायापि स्याद् ब्रह्मवत् स्वप्रकाशा ।
मायां पश्येद् ब्रह्म चेत् स्वप्रकाशं तत्रापि स्यात् स्वानुभूत्या विरोधः ॥१४४॥

स्वप्रकाश पक्ष में अनुभव विरोध प्रदर्शन(शालिनी छन्द)

आत्मा मूढः स्वप्रकाशो यथाऽयं नैवं मायि ब्रह्म नः स्वप्रकाशम् ।
अज्ञादन्यद् ब्रह्म चेत् स्वप्रकाशम् द्वे विस्पष्टे स्वप्रकाशे स्फुरेताम् ॥१४५॥

जीव में नानात्व का निषेध(शालिनी छन्द)

ज्ञायन्ते चेद् ब्रह्मणा जीवभेदा जाड्यं तेषां कुड्यवन्निर्विवादम् ।
न ज्ञायन्ते ब्रह्मणा चेत्तदानीं सर्वज्ञत्वव्याहतिर्दुर्निवारा ॥१४६॥

भेदविशिष्ट जीव में स्वप्रकाशत्व का निराकरण(शालिनी छन्द)

जीवा एते स्वप्रकाशस्वभावा निर्भासन्ते ब्रह्मणश्चेद् विभक्ताः ।
तेषां भेदः स्वप्रकाशो न वा स्याद् दोषं ब्रूमो दुर्निवारं द्विधाऽपि ॥१४७॥

प्रतिज्ञात दोष प्रदर्शन (शालिनी छन्द)

तेषां भेदः स्वप्रकाशो यदीष्टः सत्यत्वं स्यात्तस्य तेषां तथैव ।
वेद्योऽभीष्टस्तद्विभागो यदि स्यात् तानज्ञात्वा तद्विभागो न वेद्यः ॥१४८॥

इस कल्प में अन्य दोषापत्ति का भी प्रदर्शन (शालिनी छन्द)

जीवा सर्वे त्वां प्रति प्रस्फुरन्तःसम्यग् ज्ञानात् प्रस्फुरन्ति स्वतो वा ।
यद्वा मिथ्याज्ञानसामर्थ्यतोऽमी पक्षः कस्ते रोचते ब्रूहि तन्मे ॥१४९॥

प्रथम एवं द्वितीय विकल्प में दोष प्रदर्शन (शालिनी छन्द)

सम्यग् ज्ञानाज्जीवभेदप्रसिद्धावद्वैतत्वं ब्रह्मणो न प्रसिद्ध्येत् ।
जीवाः सर्वे मां प्रति स्वप्रकाशा इत्युक्तिस्ते स्वानुभूत्या विरुद्धा ॥१५०॥

तृतीय विकल्प में दोषप्रदर्शन(शालिनी छन्द)

मिथ्याज्ञानाज्जीवभेदप्रसिद्धौ सम्यग्ज्ञानाद् बाध एवाभ्युपेयः ।
मिथ्याज्ञानाद्रज्जुसर्पः प्रसिद्धः सम्यग्ज्ञानात्तस्य बाधोऽपि सिद्धः ॥१५१॥

२/१३४ श्लोक से उत्थापित तृतीय मत का निराकरण(शालिनी छन्द)

एकोपाधावेकवस्तुप्रसिद्धौ भावाभावौ नेक्षितौ क्वापि लोके ।
पक्ष्यादीनामस्तिता नास्तिता च व्योम्न्येकस्मिन्नप्यवच्छिन्न एव ॥१५२॥

कल्पित उपाधि के भावाभाव को माननेपर भी दोष पूर्व की भाँति बना रहता है (शालिनी)

सोऽवच्छेदोऽप्यस्ति नास्त्यम्बरे चेत् तत्रान्वेष्यः कोऽप्यवच्छिन्नभावः ।
सोऽवच्छेदोऽप्यस्ति नास्त्यम्बरे चेत् बाढं तस्मिन्सोऽप्यवच्छिन्न एव ॥१५३॥

उक्त रीति से अनवस्थादोषापत्ति (शालिनी छन्द)

नन्वेवं स्याद् दुर्निवाराऽनवस्था बाढं का नो हानिरिष्टैव सापि ।

कर्मोद्भूतं नः शरीरं शरीरात् कर्मोद्भूतिस्तत्र किं नेष्यते सा ॥१५४॥

ब्रह्म में अविद्या का भावाभाव मानने के लिए प्रमाण का अभाव (शालिनी छन्द)

किं चाज्ञानं ब्रह्मणोऽस्यास्ति नास्तीत्येतत्कस्मात्त्वं विजानासि हेतोः ।

मूढोऽस्मीति प्रत्ययादस्तिबुद्धिर्मुक्ते दाहान्मोहनास्तित्वबुद्धि : ॥१५५॥

उक्त तर्क का निराकरण (शालिनी छन्द)

मुक्तेऽज्ञानं दग्धमित्येतदेवं कस्माद्धेतोर्वेत्सि तत् कथ्यतां नः ।

मिथ्याज्ञानात् स्वप्रकाशात्प्रमाणान्मुक्तेऽज्ञानं दग्धमित्यस्य सिद्धिः ॥१५६॥

क्रमशः उक्त विकल्पोंका निराकरण(शालिनी छन्द)

सम्यग्ज्ञानान्मुक्तसिद्धिर्यदीष्टा नूनं मुक्तः कुड्यवत्ते जडः स्यात् ।

मिथ्याज्ञानान्मुक्तसिद्धिर्यदीष्टा स्त्रग्सर्पादिप्रख्य एवैष मुक्तः ॥१५७॥

तृतीय विकल्प का निराकरण (शालिनी छन्द)

मुक्तो मह्यं स्वप्रकाशश्चकास्तीत्येषा वाणी स्वानुभूत्या विरुद्धा ।
न ह्यश्रुत्वा शास्त्रमेतन्मनुष्यः कश्चिज्जानात्येष मुक्तः शुकादिः ॥१५८॥

२/१३५ वें श्लोक द्वारा कथित मत का अनुवाद कर निरास करना (शालिनी छन्द)

ताटस्थ्येनोपाधिमादाय मोहश्चैतन्येऽस्मिन् स्वप्रकाशे प्रविष्टः ।
तेनेह स्याद्बन्धमोक्षव्यवस्थेत्युक्तं यत्प्राग्दूषणं तस्य विद्धि ॥१५९॥

अग्निप्रवेश में उल्मुक दृष्टान्त की असङ्गति (शालिनी छन्द)

ताटस्थ्येनोपाधिरङ्गं यदि स्यान्मोहाविष्टे ब्रह्मणि स्वप्रकाशे ।
अग्निक्षेपस्योल्मुकं यद्वदेवं मोहस्य स्यान्न प्रदेशस्थितत्वम् ॥१६०॥

उल्मुक दृष्टान्त को स्पष्ट करते हुए दार्ष्टान्त में घटाते हैं (शालिनी छन्द)

अग्निः क्षिप्तो ह्युल्मुकेन प्रदेशमात्रव्याप्तिं वर्जयित्वा समस्तम् ।
वेश्म व्याप्नोत्येवमेवेह कृत्स्नं ब्रह्म व्याप्नोत्याधिनास्तं तमोऽपि ॥१६१॥

मतान्तर में दोषप्रदर्शनपूर्वक स्वसिद्धान्त का स्मरण (शालिनी छन्द)

तस्माद् ब्रह्माविद्यया जीवभावं प्राप्यासित्वा तावके तु स्वरूपे ।
त्वच्चित्तेन स्पन्दितं जीवजातमाकाशादि क्ष्मावसानं च पश्येत् ॥१६२॥

एकजीववाद में गुरुशिष्यादि मर्यादा एवं विद्योदयादि की व्यवस्था (शालिनी छन्द)

स्वीयाविद्याकल्पिताचार्यवेदन्यायादिभ्यो जायते तस्य विद्या ।
विद्याजन्मध्वस्तमोहस्य तस्य स्वीये रूपेऽवस्थितिः स्वप्रकाशे ॥१६३॥

जीवाश्रित अज्ञानवाद का रहस्योपपादन (स्रग्धारा छन्द)

अज्ञानि ब्रह्म जीवो भवति भवति च स्पष्टमज्ञानमस्य
प्रागस्पष्टं सदन्तःकरणनिपतितज्योतिराभासयोगात् ।
चैतन्यैकप्रतिष्ठं स्फुरति न हि तमस्तादृशं यादृशं तद्
बुद्धिस्थाभासनिष्ठं स्फुरति तदुचितं जीवमौढ्याभिधानम् ॥१६४॥

अन्तःकरण से भिन्न स्थल में अज्ञानप्रतीति का उपपादन (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

अज्ञानं जडशक्तिमात्रवपुषा जीवाद् बहिः सिध्यति
जीवारूढमहं न जान इति तु ज्ञानापनोद्यात्मना ।
संसिद्धिं प्रतिपद्यते तदुचितं जीवाज्ञताभाषितं
द्वैरूप्ये सति रूपमेकमनिशं भात्येवमन्यन्न हि ॥१६५॥

ब्रह्म में अज्ञान के जाड्यरूप का उपपादन (प्रमिताक्षरा छन्द)

जडशक्तिमात्रवपुषा गगनश्वसनादिकार्यजननी भवति ।
पुरुषोत्तमस्य वशवर्तितया प्रकृतिः परस्य जगदेकगुरोः ॥१६६॥

अज्ञान के ज्ञानविरोधित्व अंश का उपपादन (प्रमिताक्षरा छन्द)

इयमेव सर्वजननी प्रकृतिर्वशिनी शरीरिणमिमं पुरुषम् ।
अधिरुह्य जीवमहमज्ञ इति स्फुरणैकगोचरवपुः स्फुरति ॥१६७॥

ईश्वर के प्रति ज्ञानविरोधित्व रूप से प्रकृति स्फुरित नही होती (प्रमिताक्षरा छन्द)

चितिशक्तिबाधितवपुः परमं पुरुषं प्रति स्फुरति सा प्रकृतिः ।

चितिशक्तिबाधकवपुः पुरुषं पुरवर्तिनं प्रति पुनः स्फुरति ॥१६८॥

माया एवं अविद्या का अभिन्नत्व-उपपादन (वंशस्थ छन्द)

दृश्यत्वजाड्यपरतन्त्रचिदाश्रयत्वैर्मायेश्वरस्य तमआत्मतयानुमेया ।
स्वप्नप्रपञ्चरजतभ्रमलिङ्गदेहदिक्चन्द्रविभ्रममरीचिजलोपमानैः ॥१६९॥

कार्यपक्षक अनुमानान्तर का प्रदर्शन (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

एकाज्ञानविकल्पितं सकलमेवाकाशपूर्वं जगद्
बाध्यत्वादिह यद्यदीदृशमदस्तादृग् मतं स्वप्नवत् ।
बाध्यं चेदमभीप्सितं भवति वस्तस्मादिदं तादृशं
शुद्धं धूमवदेव साधनमिदं तत्पाञ्चरूप्यान्वयात् ॥१७०॥

जगत में अज्ञान उपादानकत्व पक्ष में श्रुति विरोध परिहार (प्रमिताक्षरा छन्द)

अनुमानमागमविरुद्धमिदं प्रतिवादिनो यदि मतं तदसत् ।
न तमोऽतिरिच्य जगतो जनकप्रतिपादकं वचनमस्ति यतः ॥१७१॥

ब्रह्म में अज्ञानाश्रयत्व का उपपादन(शालिनी छन्द)

विषयकरणदोषान्न भ्रमः संविदि स्यादपि तु भवति मोहात् केवलादेवमेव ।
भगवति परमात्मन्यद्वितीये समस्तद्वयमतिरियमस्तु भ्रान्तिरज्ञानहेतुः ॥१७२॥

एक अज्ञान में ही सर्वज्ञत्व-अल्पज्ञत्वादि विरुद्ध कल्पनाहेतुत्व का उपपादन(वंशस्थ छन्द)

अज्ञानिनो भवति दुःखमनेन क्लृप्तं
सर्वेश्वरस्य न खलु प्रतिभासतोऽपि ।
सर्वज्ञतादिगुणजातममुष्य नास्य
संसारिणः स्फुरति मोहसमन्वितस्य ॥१७३॥

भगवद्गीता में भी अज्ञान जीवाश्रित माना गया है (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

जीवन्मुक्तिगतो यदीह भगवान् सत्संप्रदायप्रभु-
र्जीवाज्ञानवचस्तदीदृगुचितं पूर्वापराऽऽलोचनात् ।

अन्यत्रापि तथा बहुश्रुतवचः पूर्वापरालोचना-
न्नैतव्यं परिहृत्य मण्डनवचस्तद्वचन्यथा प्रस्थितम् ॥१७४॥

जीव ईश्वर में वैलक्षण्य उपपादन (वंशस्थ छन्द)

जीवस्य कार्यकरणाधिपतेरविद्या दोषान्वितस्य तमसावृतमन्ददृष्टेः ।
ज्ञानं निरावरणमैश्वरमित्यपीदं भाष्याक्षरं कथितनीतिवशेन योज्यम् ॥१७५॥

उक्तार्थ का स्पष्टीकरण(वसन्ततिलका छन्द)

स्पष्टं तमःस्फुरणमत्र न तत्र तद्वत् सर्वेश्वरे तदिति तत्र निषिध्यते तत् ।
बिम्बे तमोनिपतिते प्रतिबिम्बके वा देहद्वयावरणवर्जितचित्स्वरूपे ॥१७६॥

जीव-इश्वर में सर्वज्ञत्व-अल्पज्ञत्व प्रतीति के कारण का उपपादन (वसन्ततिलका छन्द)

किंचिज्ज्ञताऽस्य तमसावृतनित्यदृष्टेः सर्वज्ञता पुनरमुष्य परस्य पुंसः ।
अज्ञानतज्जकरणादिविवर्जितत्वादित्येतदेवमुपपन्नतरं हि भाष्यम् ॥१७७॥

उक्तार्थ का दार्ढ्य उपपादन (वसन्ततिलका छन्द)

अज्ञोऽह मित्यवगतिर्न परस्य पुंसः सर्वज्ञतावगतिरात्मनि नास्य पुंसः ।
अत्रापि कारणमहङ्कृतिवर्जितत्वं तद्वत्तया च परमेऽल्पतरे च पुंसि ॥१७८॥

ईश्वर में अहंकाराभाव का कारणप्रदर्शन (वसन्ततिलका छन्द)

बिम्बस्य नापि तमसि प्रतिबिम्बकस्य संघट्टनं क्वचिदहङ्करणेन शक्यम् ।
वक्तुं प्रभोः सकललोकहितावतारस्वेच्छाविनिर्मितवपुर्वरमन्तरेण ॥१७९॥

ईश्वर में अज्ञानित्वाभाव का उपपादन (वसन्ततिलका छन्द)

नाहङ्कृतिं च परिहृत्य तमस्विताधीः सम्भाव्यतेऽपहतपाप्मनि नित्यमुक्ते ।
तामन्तरेण घटते न च मूढभावसम्भवानाऽपि परमेशितरि प्रसन्ने ॥१८०॥

स्वेच्छा से शरीरधारी परमेश्वर में अज्ञत्व मानना उचित नही है (वसन्ततिलका छन्द)

स्वेच्छाविनिर्मितवपुर्भजतोऽपि तस्य नाज्ञानितावगतिरस्ति वशित्वहेतोः ।
वश्यत्वहेतुकमिदं स्फुरणं नराणां नाहं विजान इति नास्ति तदीश्वरस्य ॥१८१

कहीं कहीं लिलाके लिए अज्ञत्व का प्रदर्शन (वसन्ततिलका छन्द)

सङ्कल्पपूर्वकमभूद्रघुनन्दनस्य नाहं विजान इति कंचन कालमेतत् ।
ब्रह्मोपदेशमुपलभ्य निमित्तमात्रं तच्चोत्ससर्ज स कृते सति देवकार्ये ॥१८२॥

सर्वज्ञत्वादिप्रसङ्ग का उपसंहार (वसन्ततिलका छन्द)

अज्ञानवर्जिततया परमेश्वरोऽसौ सर्वज्ञ एव यदहङ्कृतिबन्धहीनः ।
ज्ञानं निरावरणमिष्टममुष्य यस्माज्जीवस्य सावरणमेव यतोऽनभिज्ञः ॥१८३॥

जीव ईश्वर में वैलक्षण्य का प्रयोजक (वसन्ततिलका छन्द)

सर्वप्रमाणफलभूतसमस्तसंविज्जातं बिभर्ति परमः पुरुषो न जीवः ।
ज्ञानं निरावरणमैश्वरमस्तु तस्माज्जैवं च सावरणमस्य विशेषहेतोः ॥१८४॥

विशेष हेतुत्व का उपपादन (वसन्ततिलका छन्द)

अज्ञानतज्जमखिलं जगदात्मभासा नित्यं प्रकाशयति सन्निहितः सदात्मा ।
जीवस्तु नैवमिति सावरणं तदीयं ज्ञानं निरावरणमैश्वरमुच्यते हि ॥१८५॥

ईश्वर में सर्वज्ञत्व का उपपादन (उपजाति छन्द)

ज्ञानात्मकस्यामलसत्त्वराशेरपेतदोषस्य सदा स्फुटस्य ।
किं वा जगत्यत्र समस्तपुंसामज्ञातमस्यास्ति हृदि स्थितस्य ॥१८६॥

ईश्वर के स्वातन्त्र्य और जीव के पारतन्त्र्य में पुराणवाक्यों का उदाहरण (वसन्ततिलका छन्द)

मायामसौ वितनुते विभुरेवमेनां सर्वेश्वरः सततमेव वशीकरोति ।
इत्यादिवाक्यमुपपन्नतरं पुराणे त्वज्ञानमस्य हि वशे चिदधीनभावात् ॥१८७।

अज्ञाननिषेधक भाष्यादि वचनों का ईश्वर में समन्वय प्रदर्शन (वसन्ततिलका छन्द)

जीवाज्ञतावचनमेवमिदं समस्तं सर्वत्र योज्यमितरत्र च तन्निषेधः ।
तस्मात् समञ्जसमिदं मतमस्मदीयमाचार्यवाक्यमुपपन्नतरं हि तत्र ॥१८८॥

पूर्वोक्त स्वसिद्धान्त का स्मरण (वसन्ततिलका छन्द)

चैतन्यमेव च तमस्वि तदप्रबुद्धं सर्वज्ञमेतदिह विश्वमिमं विभागम् ।
जीवेश्वरौ च जगदित्यपि निर्मिमीत इत्येव वेदशिरसः प्रथितः प्रचारः ॥१८९॥

जीवगत अज्ञान एवं ईश्वरोपाधि माया में भेदभाव (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

[1]जीवेशानजगद्विभागजननी [3]शक्ति[2]र्जडा [6]वैष्णवी
[7]माये[5]शानगता [6]सती [8]भवति [4]सा [1]जीवाव[2]धिर्मोहगीः ।
[3]जीवानी[2]श्वर [1]एष [4]मोहयति [1]ते [2]जीवा [3]विमुह्यन्त्य[1]तः
[3]ईश्वद्[4]धिश्वदृगी[2]श्वरो [5]भवति [1]ते [2]जीवा [4]विमूढा [3]मुहुः ॥१९०॥

माया-अविद्या के अभेद पक्ष में जीव ईशादि व्यवस्था का उपपादन (वसन्ततिलका छन्द)

[1]अज्ञानिनो [5]भवति [4]मोहविजृम्भितं [2]तद् [3]दुःखं [2]जगज्जनकता [1]परमेश्वरस्य ।
[3]मायामयी [4]भवति [1]तेन [5]विलक्षणत्व[4]मेकान्ततः [2]श्रुतिशिरःसु [3]तयोः [6]प्रसिद्धम् ॥१९१॥

ब्रह्मनिष्ठ अज्ञान में अभिमान कर लेने के कारण जीव अज्ञ है (शालिनी छन्द)

चै[1]तन्यस्या[3]ज्ञानशक्ते[2]रनादे[6]र्जीवत्वं [5]तु [4]व्यञ्जकं [7]कल्पयन्तः ।
[1]जीवारूढं [3]व्यक्त[2]मज्ञान[4]माहु[3]र्जीवो [4]मूढः [5]कथ्यते[1]ऽतो [2]बहुज्ञैः ॥१९२॥

प्रौढीवाद के आधार पर विद्वानों का अन्यथा कथन भी दिखता है (वसन्ततिलका छन्द)

अत्रैव वस्तुनि दृढं व्यवतिष्ठमानः प्रौढिप्रदर्शनपरः पुनरन्यदन्यत् ।
भाषापदं किमपि निक्षिपति स्फुटं तदस्माभिरेवमुपपादितमञ्जसैव ॥१९३॥

सूत्रकार एवं भाष्यकार की उक्तार्थ में अभिमति (वसन्ततिलका छन्द)

विस्पष्टमात्ममतमेव हि सर्वधर्मसूत्रेण सूत्रकृदिदं दृढमाचचक्षे ।
सर्वज्ञतादिपरिपालनतत्परः सन् तत्रैव भाष्यकृदपीदमुवाच यत्नात् ॥१९४॥

जीवाश्रित अज्ञानवाद का निरसन (शालिनी छन्द)

अज्ञानित्वं ब्रह्मणो जीवता चेन्नाज्ञानित्वं तत्र जीवस्य युक्तम् ।
अज्ञानित्वे चान्यदप्यभ्युपेतमज्ञानित्वं यद्यहो कष्टपिष्टिः ॥१९५॥

शुद्ध ब्रह्माश्रित अज्ञान की सिद्धि (शालिनी छन्द)

अज्ञानित्वं ब्रह्मणश्चानभीष्टमस्मिन् पक्षे दुर्निवारं प्रसक्तम् ।
अज्ञानित्वं ब्रह्मणश्चेदभीष्टमस्मत्पक्षस्त्यज्यते कस्य हेतोः ॥१९६॥

ब्रह्माश्रित अज्ञान माननेपर भी ब्रह्म में शुद्धतास्पदत्व बना रहेगा (शालिनी छन्द)

शुद्धत्वार्थं ब्रह्मणस्त्यज्यते चेदस्मत्पक्षेऽप्यस्ति शुद्धत्वमस्य ।
अस्मत्पक्षे शुद्धता वास्तवी चेद् युष्मत्पक्षे कल्पिता शुद्धता किम् ॥१९७॥

जीवाश्रित अज्ञान-पक्ष खण्डन का उपसंहार (शालिनी छन्द)

कष्टःकष्टः कल्पितो ब्रह्मवादः श्रेयोमार्गाद् भ्रश्यतो भ्रान्तबुद्धेः ।
त्यक्तव्यस्ते सज्जनैरस्मदीयः श्रेयोमार्गः श्रेयसे चाभ्युपेयः ॥१९८॥

ब्रह्म में अज्ञानाश्रयत्व माननेपर उसमें संसारित्व प्रसक्ति की आशङ्का (शालिनी छन्द)

एकोपाधावस्तिता नास्तिता च मूढत्वस्य स्वीकृता चेत् परस्मिन् ।
व्योम्न्येकस्मिन्नस्तिता नास्तिता च पक्ष्यादीनां यद्वदिष्टा तथैव ॥१९९॥

उक्त शङ्का का समाधान (शालिनी छन्द)

नैतत् सारं सत्त्वमिष्टं यदि स्यादस्तित्वादेरिष्टहानिः प्रसक्ता ।
एकोपाधावस्तिता नास्तिता च स्यादित्येवं स्वीकृतेऽस्मिन् हि पक्षे ॥२००॥

अन्य दोष की भी प्राप्ति (शालिनी छन्द)

धूमे सत्ता स्यादसत्ता च तस्मिन् धूमस्यैवं कारणं कल्प्यते किम् ।
कादाचित्कं कारणं नान्तरेण स्यादित्येवं तस्य क्लृप्तिः कुतो वः ॥२०१॥

इस पक्ष में कार्यकारणभाव का प्रसङ्ग भी आजायेगा (शालिनी छन्द)

कादाचित्कात् कल्पनां कारणस्य प्रत्याचक्षीताविरोधं ब्रुवाणः ।
एकोपाधावस्तिनास्तित्वयोर्हि तस्मादेषा कष्टक्लृप्तिर्न कार्या ॥२०२॥

एक ही ब्रह्म में स्फुरण एवं स्फुरणाभाव की भाँति अज्ञान की सत्ता और असत्ता मानने का आग्रह (प्रमिताक्षरा छन्द)

ननु चैकरूपचितिवस्तुगतं स्फुरणं तदस्फुरणमेव च वः ।
अविरुद्धमभ्युपगतं द्वितयं तदिवास्तिनास्तियुगलं भवतु ॥२०३॥

उक्त शङ्का का समाधान(प्रमिताक्षरा छन्द)

न तदात्मनः स्फुरणमेव निजं परतोऽप्रकाशनमबोधवशात् ।
न च किंचिदन्यदनयोरुभयोरविरोधसिद्धिकृदुदाहरणम् ॥२०४॥

अन्य प्रकार से भी उक्त विरोधाभाव का उपपादन (सुन्दरी छन्द)

स्फुरणास्फुरणे च नात्मनः सदसद्भावतया मनीषिते ।
स्फुरणं चितिरात्मवस्तुनस्तदविद्याऽस्फुरणं च कथ्यते ॥२०५॥

अविद्या में चित्प्रतिबिम्बत्व को जीवत्व माना गया है (शालिनी छन्द)

अज्ञानित्वं जीवभावो न तस्माज्जीवत्वादेः कारणं युक्तमेतत् ।
प्राणोपाधेर्वाचको जीवशब्दश्चैतन्यस्य स्यात् प्रसिद्धो हि तत्र ॥२०६॥

बुद्धजनों में उक्तार्थ की प्रसिद्धि (वसन्ततिलका छन्द)

अज्ञानजन्यकरणप्रतिबिम्बवाचि जीवाभिधानमिह वृद्धजनप्रसिद्धम् ।
तत्रैव निर्वचनमस्ति च तस्य तस्माज्जीवो भवेत् करणपूगवशीकृता चित् ॥

ब्रह्म में अज्ञानाश्रयत्व की सिद्धि (स्रग्धरा छन्द)

ब्रह्मैवाज्ञानि तस्मादिह भवितुमलं नापरं वस्तु किंचित्
तस्याज्ञानात्मकत्वान्न च तमसि तमस्तन्निवृत्तेरयोगात् ।

नाज्ञानोत्थस्य विद्याजनिरिह घटते तां विना तन्न नश्ये-
न्न ह्यज्ञानं विनश्येदवगतिजनकज्ञानजन्मान्तरेण ॥२०८॥

अज्ञानात्मक जीव में भी अज्ञानाश्रयत्वानुपपत्ति (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

अज्ञानात्मकवस्तु नाश्रयतयाऽज्ञानस्य सम्भाव्यते
नाज्ञानात्मकताबहिष्कृतमिदं जीवत्वमङ्गीकृतम् ।
नाज्ञानाश्रयमध्यपाति घटते जीवत्वमेतेन वै-
श्चैतन्याश्रयमेतदस्तु घटते तत्रैव हीदं तमः ॥२०९॥

अद्वय ब्रह्म में प्रतिवादी के मतानुसार अज्ञानाश्रयत्व अनुभवविरुद्ध है (प्रमिताक्षरा छन्द)

ननु चाद्वयाश्रयतमःस्फुरणं न कथंचिदत्र न हि तत् स्फुरति ।
स्फुरदाश्रयस्य तमसः स्फुरणं घटते न चाद्वयमिह स्फुरति ॥२१०॥

उक्त शङ्का का समाधान (वसन्ततिलका छन्द)

नाज्ञानमद्वयसमाश्रयमेवमिष्टं नाद्वैतवस्तुविषयं निशितेक्षणानाम् ।

नानन्दनित्यविषयाश्रयमिष्टमेतत् प्रत्यक्त्वमात्रविषयाश्रयतानुभूतेः ॥२११॥

प्रत्यगात्मरूपसे चैतन्य ब्रह्म में अज्ञानाविषयत्व शङ्का का समाधान (वसन्ततिलका छन्द)

प्रत्यक्त्वमात्रविषयाश्रयमोहहेतोः प्रत्यक् तिरोहितमिति प्रतिपादयामः।
प्रत्यञ्चमेव खलु वेद्मि न वेद्मि चेति प्रत्यक्षमस्ति ननु वेदनमस्य पुंसः ॥२१२॥

निरवयव प्रत्यगात्मा में उभयधर्म होने के संदेह का निराकरण (वसन्ततिलका छन्द)

संवित् परिस्फुरति न स्फुरतीति तस्यां वैयात्यदूषितधियस्तु विसंवदन्ते ।
अज्ञानतस्तदपि तद्वदिहाद्वयत्वं भादप्यभादिव विमूढधियो वदन्ति ॥२१३॥

मूढ पुरुष में स्फुरण एवं अस्फुरण होना सम्भव नहीं (शालिनी छन्द)

अव्युत्पत्तिं बिभ्रती भाति संवित् तद्वद्वह्माप्यद्वितीयस्वरूपम् ।
अव्युत्पत्तिं नाशयद्भाति वेद्यं तस्मादेतच्चोद्यमस्मासु नास्ति ॥२१४॥

बन्ध मोक्ष व्यवस्थापक शास्त्र में प्रमाण्योपपादन (शालिनी छन्द)

नन्वेवं चेद् बन्धमोक्षव्यवस्थाशास्त्रं कुप्येन्नाप्रबोधात् प्रवृत्तेः ।

बद्धो मुक्तो ज्ञानवानज्ञ इत्यप्येतत् सर्वं यावदज्ञानमिष्टम् ॥२१५॥

एकजीववाद पक्ष में शास्त्र प्रामाण्य शङ्का का समाधान (शालिनी छन्द)

किंचैतत् किं बन्धमोक्षव्यवस्थाशास्त्रं यत्नात्तत्परं सत् प्रवृत्तम् ।
किं वाऽन्यस्मात् प्राप्तमेवानुभाष्य तस्या रूपं ब्रह्मतत्त्वं विदध्यात् ॥२१६॥

प्रथम विकल्प में दोष तथा द्वितीय विकल्प में अनिष्टापत्ति प्रदर्शन(शालिनी छन्द)

शास्त्रं तावत्तत्परं नेष्यते तदानर्थक्यात्तत्स्वरूपप्रतीतेः ।
ब्रह्मात्मैक्यप्रत्ययेनार्थवत्त्वं वक्तुं युक्तं तच्च नोऽभीष्टमेव ॥२१७॥

एकजीववाद में अनुभवविरोध की आशङ्का (शालिनी छन्द)

नन्वन्यो मद्बन्धमोक्षादिभागी भूतो भावी वर्त्तते वा न कश्चित् ।
इत्युक्तार्थं स्वानुभूत्या विरोधान्नाहं जातु प्रोत्सहे संग्रहीतुम् ॥२१८॥

उक्त शङ्कानिराकरण के लिए विकल्पपूर्वक समाधान (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

किं द्वैतानुभवो विरोधपदभाक् किं वा परोऽस्मीत्ययं

यद्वा कश्चिदिहापरोऽस्त्यनुभवो यस्ते विरोधावहः।
नाद्वैतानुभवः क्षतिं वितनुते तस्येति युक्तं वचो
नापि द्वैतमुपोल्लिखन्ननुभवस्तेनास्य बाधो यतः ॥२१९॥

तृतीय विकल्प में दोष प्रदर्शन (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

द्वैताद्वैतनिवेशिनोऽनुभवनाद्बाधोद्भवोऽस्येति चेत्
तादृङ् नानुभवोऽस्ति कस्यचिदपि स्थानत्रये जीवतः।
भास्वच्छार्वरगोचरं ह्यनुभवं बिभ्रज्जनो दृश्यते
नास्मिन् संसृतिमण्डले स न भवेत् कस्मादयं चेद् भवेत् ॥२२०॥

अन्ततः हमारा सिद्धान्त सर्वसामान्य है (प्रमिताक्षरा छन्द)

यत एवमत्र न विरोधलवोऽप्युपढौकते कथितनीतिवशात्।
उपगृह्यतां मतमिदं सुदृढं गुरुसंप्रदायवचनानुगतम् ॥२२१॥

ग्राह्यसिद्धान्तका प्रदर्शन (प्रमिताक्षरा छन्द)

तव गाढमूढतमसा रचितं जगदीशजीववपुषा सकलम् ।
प्रतिभाति तावददृढं दृढवत् समुदेति यावदवबोधरविः ॥२२२॥

माया में सर्वार्थसाधकता की संभावना है (प्रमिताक्षरा छन्द)

प्रभुरेष सर्वविदहं कृपणो जगदेतदद्भुतवितानमिति ।
प्रतिपत्तयस्तिमिरलुप्तदृशो यदिहोद्भवन्ति न तदद्भुतकम् ॥२२३॥

ज्ञान से अज्ञान एवं उसके कार्य की निवृत्ति का उपपादन(प्रमिताक्षरा छन्द)

अभयं सनातनमनातुरधीरवलोकयन्निजमनन्तसुखम् ।
न मुनिः प्रपश्यति किमप्यसुखं सकलं जिघत्सति जगत् स्वचिता ॥२२४॥

कल्पित वस्तु में भी तत्त्वबोधकता का उपपादन(प्रमिताक्षरा छन्द)

तव चित्तमात्मतमसा जनितं परिकल्पयत्यखिलमेव जगत् ।
तव कल्पनाविरचितः स गुरुस्तव रूपमद्वयमुदाहरति ॥२२५॥

मिथ्या वस्तु में भी कार्यजनकता का उपपादन (प्रमिताक्षरा छन्द)

न हि चित्तदृश्यमपि सत्यमिति प्रतिपन्नमस्ति भुवि किंचिदपि ।
रशनाभुजङ्गसदृशं सकलं जगदिन्द्रजालमिति सिद्धमतः ॥२२६॥

कल्पित वस्तु में कार्यक्षमता का प्रदर्शन (प्रमिताक्षरा छन्द)

परिकल्पितोऽपि सकलज्ञतया गुरुरेव पूर्णमवबोधयति ।
परिकल्पितोऽपि मरणाय भवेदुरगो यथा न तु नभो मलिनम् ॥२२७॥

सत्य पदार्थ में बोधकत्वनियम का व्यभिचार (प्रमिताक्षरा छन्द)

यदि सत्यमित्यवगतिं कुरुते घटते पटादपि हुताशनधीः ।
यदि चानृतं न जनयेत् प्रमितिं ननु चोदनापि जनयेन्न धियम् ॥२२८॥

उक्त दृष्टान्त का स्पष्टीकरण (प्रमिताक्षरा छन्द)

जनयत्यसाविह मृषावपुषा करणीयवस्तुनि मतिं सुदृढाम् ।
ध्वनिधर्मभेदघटितो हि मृषा स्वरसेन सन्नपि तु वर्णगणः ॥२२९॥

उक्त विषय में निरुक्तकार की सम्मति (उपजाति छन्द)

मन्त्रो हीनः स्वरतो वर्णतो वा मिथ्याप्रयुक्तो न तमर्थमाह ।
स वाग्वज्रो यजमानं हिनस्ति यथेन्द्रशत्रुः स्वरतोऽपराधात् ॥२३०॥

चोदना ध्वनिगत नहीं मानी जा सकती (प्रमिताक्षरा छन्द)

न च वर्णपूगमपहाय भवेदिह चोदनेत्यभिमतं विदुषाम् ।
यदि सत्यमेव गमकं भवति स्फुटमप्रमाणमियमप्युदिता ॥२३१॥

वैशेषिक मतानुसार भी मिथ्या पदार्थ सत्यार्थ का बोधक है(प्रमिताक्षरा छन्द)

श्रवणेन्द्रियं च किल कर्णगतं परिकल्पनोपचरितं नभसः ।
वलयं प्रकाशयति शब्दगणं परमार्थमित्यपि कणादमतम् ॥२३२॥

उक्त सिद्धान्त का स्पष्टीकरण (प्रमिताक्षरा छन्द)

त्वमतः स्वमोहरचितं गहनं भवसागरं तर परावगतेः ।
परिकल्पितद्वयनिबन्धनतः परमार्थसंविदुदये सति भोः ॥२३३॥

कल्पित वस्तु में परमार्थफलजनकत्व का उपपादन (वसन्ततिलका छन्द)

भ्रान्तं तथोपचरितं च यथाविभागमङ्गीकृतं कणभुगादिमुनीन्द्रमुख्यैः ।
यन्नास्ति तत्फलनिबन्धनमस्मदीये तन्त्रे तमोविरचितं न फलाय कस्मात् ॥२३४॥

अनिर्वचनीय वस्तु में भी परमार्थफलजनकत्व का उपपादन (मालिनी छन्द)

असदपि फलवत्तामश्नुते युष्मदिच्छामनुसरदथ कस्मान्मायया निर्मितं सत् ।
न भवति फलवत्ताभाजनं चित्रमेतद् वयमिह न समर्था यूयमत्यन्तशक्ताः ॥२३५॥

सिद्धान्त पक्ष में सत्य से ही सत्य की उत्पथि का उपपादन (प्रमिताक्षरा छन्द)

परमेव तत्त्वमगृहीतमभूदखिलस्य कारणमनर्थकरम् ।
परमेव तत्त्वमवबुद्धमतः परितृप्तये भवति पुष्कलतः ॥२३६॥

उक्त रीती से एक ही तत्त्व में परस्पर भिन्न बन्ध मोक्ष के कारणत्व का उपपादन (प्रमिताक्षरा छन्द)

तव रूपमेव तव दुःखकरं यदि तन्न पश्यसि बहिर्मुखधीः ।

तव रूपमेव तव तृप्तिकरं यदि तत् प्रपश्यसि निवर्त्य तमः ॥२३७॥

मुमुक्षुओं के लिए हेय उपादेय का वर्णन (प्रमिताक्षरा छन्द)

तव बोधमात्रमुपनयेमतस्तव मोहमात्रमपनेयमपि ।
तव बोधमोहजनिहानिकरं वचनं त्रयीशिरसि तत्त्वमिति ॥२३८॥

धर्मादि प्रयोग की भाँति वेदान्तवाक्यजन्य तत्त्वबोध होनेपर कर्तव्यशेष नही रहता(प्रमिताक्षरा छन्द)

तव बोधजन्मनि पुरा न पुनस्तव कश्चिदप्यतिशयो भवति ।
तम एव पूर्वमभवन्न भवत्यवबोधजन्मनि ततो न परम् ॥२३९॥

अज्ञान नाश को अतिशय मानना भ्रम है (प्रमिताक्षरा छन्द)

न तमोऽपि पूर्वमभवन्न भवत्यवबोधजन्मनि तमोऽभिभवः ।
तम एव केवलमिदं सकलं न तमो विनाऽऽत्मनि किमप्यभवत् ॥२४०॥

अज्ञान एवं उसकी निवृत्ति की समानता का उपपादन(प्रमिताक्षरा छन्द)

न तमः परिहृत्य लभ्यते तमसो हानिगता निरूपणा ।

[8]इति [9]सा [10]तम [11]इत्यु[12]दीरिता [4]न [2]निवृत्तिस्[1]तमसस्[3]तमोमयी ॥२४१॥

यावज्जीवादि श्रुतिविरोध का परिहार (प्रमिताक्षरा छन्द)

[2]विधयश्[3]च [1]कर्मविषयाः [4]स्वतमःपटलावृते [6]त्वयि [5]बहिर्मनसि ।
[3]कुत [4]एव [1]सम्यगवबोधहते [2]तमसि [5]प्रवृत्ति[6]रिह [7]सम्भवति ॥२४२॥

भोजनादि में प्रवृत्ति के समान कर्म में प्रवृत्ति नही मानी जा सकती (प्रमिताक्षरा छन्द)

[5]विदिते [4]पदे [1]भगवतः [3]परमे [2]परिपुष्कले [6]परमतृप्तिमतः ।
[10]तव [7]तृष्णया [8]विरहितस्य [13]कथं [11]विधिषु [12]प्रवृत्ति[9]रपवर्गवतः ॥२४३॥

ज्ञान के बाद विहित कर्म में प्रवृत्ति नही हो सकती(प्रमिताक्षरा छन्द)

[3]अभिचारकर्मविधयो [2]हि [1]यथा [4]फलभागबाध[5]मनु [6]बाधयुजः ।
[3]करणादिभागनिरुपाख्यतया [4]विधयस्[1]तथैव [2]परमात्ममतेः ॥२४४॥

उक्त दृष्टान्त एवं दार्ष्टान्त में समानता का प्रदर्शन (प्रमिताक्षरा छन्द)

[1]यदि [2]भाव्यभागविलये [4]न [5]भवेत् [3]फलभावना [9]कथ[6]मिहो[10]त्सहते ।

करणादिभागविलये भवितुं विधिरन्तरेण घटते न च ताम् ॥२४५॥

भावना की भाँति नियोज्यादि के अभाव में भी नियोगविधि सम्भव नही रह जाती (प्रमिताक्षरा)

अधिकारिणं च विषयं च विना न नियोगबुद्धिरुपपत्तिमती ।
न विना तमस्तदुभयं घटते विदितात्मनश्च न तमो घटते ॥२४६॥

वेद में स्वतःप्रामाण्य की सिद्धि का उपपादन (प्रमिताक्षरा छन्द)

व्यवहारगोचरमतः सकलं विधिवाक्यमित्यवगतिं मनसि ।
उपनीय वेदशिरसां विधिभिर्न विरोध इत्यपि समाकलय ॥२४७॥

वेदान्तवाक्यों के साथ प्रमाणान्तर विरोध परिहार का निगमन (स्रग्धरा छन्द)

एवं वेदान्तवाक्यैरवगतिपदवीमद्वये नीयमाने
प्रत्यक्तत्त्वे समस्तद्वयकृतितमसि क्षीयमाणे च सद्यः ।
स्वाराज्यं त्वय्यवाप्ते परमसुखभुजि स्वच्छचैतन्यमात्रे

[7]लेशो [6]मानान्तराणा[8]मपि[9] [1]दुरधिगमस्तत्र[3] [2]दूरे विरोधः ॥२४८॥

इति श्रीमच्छुरेश्वराचार्य शिष्य श्रीसर्वज्ञात्ममुनिविरचित
संक्षेपशारीरकस्य द्वितीयोऽध्यायः समाप्त ।

(प्रथमाध्यायस्थ ५६३ श्लोकैर्मिलित्वा ८११ श्लोकाः)

******
****
**
*

ॐ

अथ तृतीयोऽध्यायः

ब्रह्मविद्यासाधनोपपादन (वसन्ततिलका छन्द)

श्रुत्वाऽविरोधमुपपन्नसमन्वयोत्थब्रह्मात्मतामतिरियं पुनरप्युवाच ।
ब्रह्मात्मताफलशिरस्कमतिं प्रसूते यत् साधनं तदखिलं प्रतिपित्समानः ॥१॥

द्वितीय एवं तृतीय अध्याय की हेतु-हेतुमद् भाव सङ्गति है , उसका विस्तार अब करते हैं (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

ऐदंपर्यमखण्डवस्तुविषयं वेदान्तवाक्यस्य यत्
पूर्वं वर्णितमस्य भूदपहतिर्मा नाम मानान्तरैः ।
किं त्वस्याः परिनिष्ठितस्वविषयध्वान्तच्छिदो जन्मने
विद्याया वचनादृते किमपरं कृत्यं भवेत् साधनम् ॥२॥

तृतीय अध्याय द्वारा प्रतिपादित साधनों का क्रमशः निर्देश (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

वैरागस्य दृढत्वमेकमपरं तत्त्वंपदार्थज्ञता
वाक्ये निर्गुणनिष्ठिते च सकले न्यायादियत्तामतिः ।
सम्यग्ज्ञानसमीपदूरभवयोर्हेत्वोर्विवेकज्ञता
वाक्यार्थप्रतिपत्तिसाधनमिदं यत्नेन कृत्यं यतेः ॥३॥

वैराग्य संपादन के प्रकार एवं उपयोग का उपपादन (वसन्ततिलका छन्द)

संसारदोषमवधारयतो यथावद् वैराग्यमुद्भवति चेतसि निष्प्रकम्प्यम् ।
वैराग्यजन्मनि दृढे च सति प्रवृत्तिस्तत्त्वंपदार्थपरिशोधनकर्मणि स्यात् ॥४॥

दोषदर्शन का प्रकारनिरूपण (वसन्ततिलका छन्द)

संसाररूपमवगच्छ विविच्यमानं यस्मिन् श्रुते भवति तद्विषया जुगुप्सा ।
वेदः प्रकाशयति संसरणं यथाऽस्य जीवस्य जन्ममरणे व्रजतः क्रमेण ॥५॥

जन्ममरणादिरूप संसारके आश्रय का उपपादन (वसन्ततिलका छन्द)

शुद्धः परो न खलु वाङ्मनसव्यतीतः संसारदुःखमतिदुःखसहमश्नुवीत ।

स्वाविद्यया हि पर एव स जीवभावमागत्य संसरति लिङ्गसमागमेन ॥६॥

संसरण एवं मुक्ति में वैयधिकरण्य शङ्का का समाधन (वसन्ततिलका छन्द)

ब्रह्मैव संसरति मुच्यत एतदेव दौवारिकं भवति संसरणं तु तस्य ।
मुक्तिः पुनर्भवति चिद्वपुषैव तस्य स्वाज्ञानतः स्वमहिमप्रतिबोधतश्च ॥७॥

बन्धन-मोक्ष के उत्पादन में अन्तःकरण की भूमिका (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

स्वाज्ञानान्वयिनी चिदेव भवति स्वज्ञानमस्याः पुन-
र्नास्त्यन्तःकरणोपरागशबलीभावं विना युक्तितः ।
कूटस्थे न तमस्विता न घटते नो विक्रिया तत्र न-
स्तस्मादेष विशेष ईषदुचितः स्वीकर्त्तुमेते प्रति ॥८॥

संसार के स्वरूप का वर्णन (वसन्ततिलका छन्द)

पुर्यष्टकं भवति तस्य परस्य मोहात्तेनान्वितस्य तु नभोमलवद् व्यलीकम् ।
दुःखं त्रिधा भवति संसरणाभिधानं नान्यः परादधिकरूपभृदस्ति जीवः ॥९॥

परमात्मा से जीवात्मा के भेद का निराकरण (वसन्ततिलका छन्द)

नांशः परस्य न च तस्य विकार एष नात्यन्तमेव च विभिन्नवपुः परस्मात् ।
जीवोऽयमभ्युपगतः कुत एतदेवं ब्रह्मात्मतावचनजातविरोधहेतोः ॥१०॥

भेद पक्ष में प्रवेशश्रुति का विरोध (द्रुतविलम्बित छन्द)

अपि च विश्वमनुप्रविवेश तत् परममेव पदं परमात्मनः ।
इति वदत्सु सुहृत्स्विव तत्परश्रुतिवचःसु कथं स ततोऽधिकः ॥११॥

युक्ति से भी जीव में ब्रह्मरूपता ही सिद्ध होती है (वसन्ततिलका छन्द)

प्रच्यावि वस्तु यदिहास्ति निजस्वरूपादप्रच्युतैकरससंविदधीनमस्य ।
प्रच्यावितास्फुरणमित्यवगत्य तत्र तत् कल्पितं सकलमाकलयानुमानात् ॥१२॥

जीव ब्रह्म में अत्यन्त भेद मानने पर ब्रह्म में संसारापत्ति का समाधान (वसन्ततिलका छन्द)

चैतन्यवस्तुविषयाश्रय एव मोहो नाद्वैतवस्तुविषयाश्रयकोऽप्रतीतेः ।
बुद्ध्यादिवेष्टितचितो न तमस्वितेति ब्रह्माश्रयत्वमुदितं तमसः पुरस्तात् ॥

उक्त पक्ष का दृढता से समर्थन (वसन्ततिलका छन्द)

ब्रह्माश्रयं न हि तमोऽनुभवेन लभ्यं नाप्यागमान्न च किमप्यपरं प्रमाणम् ।
ब्रह्माश्रयत्वविषयं तमसस्ततश्च प्रत्यक्प्रकाशविषयाश्रयमेतदस्तु ॥१४॥

विशिष्ट चेतन में अज्ञानाश्रयत्व का निराकरण (वसन्ततिलका छन्द)

जीवत्वमेव तु तदाश्रयमध्यपाति नेच्छन्ति युक्तिकुशला न हि युज्यते तत् ।
अज्ञानमेव खलु तन्न तमस्तमस्वि चैतन्यवस्तु पुनरस्तु न तद्विरोधः ॥१५॥

पूर्वोक्त पुर्यष्टक का स्वरूपप्रदर्शन (वसन्ततिलका छन्द)

कर्मेन्द्रियाणि खलु पञ्च तथाऽपराणि बुद्धीन्द्रियाणि मनआदिचतुष्टयं च ।
प्राणादिपञ्चकमथो वियदादिकं च कामश्च कर्म च तमः पुनरष्टमी पूः ॥१६॥

विद्या एवं पूर्वप्रज्ञा कां कर्म में अन्तर्भाव प्रदर्शन (वसन्ततिलका छन्द)

विद्या च विश्वविषयाऽनुभवोत्थपूर्वप्रज्ञा च कर्मवचसैव तु संगृहीते ।
बन्धप्रयोजकतया सदृशत्वहेतोरेकत्र च श्रुतिवचस्युपसंग्रहेण ॥१७॥

उक्त अर्थ में श्रुतिवाक्य का प्रदर्शन (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

तं विद्येति हि वाक्यमेकमिह च स्पष्टं त्रयं कीर्त्तितं
तस्मात् कर्मवचस्तयोरपि भवेत् संग्राहकं कारणात् ।
विद्या चात्र चतुर्विधाप्यभिमतैवारम्भिका कर्मवत्
संस्कारोऽपि तथा चतुर्विध इति ज्ञेयस्तथा संभवात् ॥१८॥

लिङ्ग शब्द का मुख्यार्थ पुर्यष्टक नहीं है (वसन्ततिलका छन्द)

पुर्यष्टकं तदिदमप्यभवद्धि लिङ्गं तेनोच्यते तदपि लिङ्गगिरा क्वचित्तु ।
पुर्यष्टकं न खलु लिङ्गगिरोऽभिधेयं मुख्यं तु सप्तदशकं प्रथितं हि लिङ्गम् ।

लिङ्ग शरीर में सप्तदश तत्त्व का उपपादन (प्रमिताक्षरा छन्द)

इह तावदक्षदशकं मनसा सह बुद्धितत्त्वमथ वायुगणः ।
इति लिङ्गमेतदमुना पुरुषः खलु सङ्गतो भवति जीव इति ॥२०॥

अन्वय-व्यतिरेक के द्वारा प्रत्यगात्मा के साथ पुर्यष्टक सम्बन्ध में दुःखकारणता का

उपपादन(प्रमिताक्षरा छन्द)

न पुराष्टकेन रहितस्य तव क्वचिदस्ति संसरणदुःखयुजा ।
न पुराष्टकेन सहितस्य तथा क्वचिदस्ति दुःखविगमश्च तव ॥२१॥

पुर्यष्टक सम्बन्ध में आध्यासिकत्व का उपपादन(प्रमिताक्षरा छन्द)

तव नित्यमुक्तसुखचिद्वपुषो न कदाचिदस्ति पुरसङ्गमनम् ।
तव मायया विरचितं सकलं पुरसङ्गतिप्रभृतिकं वितथम् ॥२२॥

दृष्टान्त द्वारा उक्तार्थ का स्पष्टीकरण(प्रमिताक्षरा छन्द)

मलिनं नभो न हि कदाचिदभूद् विमलं कदाचिदभवन्न नभः ।
उभयं नभस्यभवदेवमिह त्वयि नित्यमुक्तचितिसंसरणम् ॥२३॥

उक्त सिद्धान्त की उपपत्ति(प्रमिताक्षरा छन्द)

न हि कल्पनाविरचितं वितथं परमार्थवस्त्ववितथं स्पृशति ।
परमार्थवस्तु च तथा तमसा परिकल्पितं न किमपि स्पृशति ॥२४॥

उक्तार्थ का दृष्टान्त द्वारा स्पष्टीकरण(प्रमिताक्षरा छन्द)

न हि भूमिरूषरवती मृगतृड्जलवाहिनीं सरितमुद्वहति ।
मृगवारिपूरपरिवारवती न नदी तथोषरभुवं स्पृशति ॥२५॥

उक्तार्थ में युक्ति का प्रदर्शन(प्रमिताक्षरा छन्द)

न तव क्वचिद् गमनमस्ति विभोर्न पुराष्टकस्य जडरूपभृतः ।
न च मध्यवर्त्ति जडचिद्वपुषोर्गमनक्षमं किमपि संभवति ॥२६॥

आत्मा में औपाधिक गमनागमन शङ्का का समाधान(प्रमिताक्षरा छन्द)

पुरवेष्टितं न खलु चिद्वलयं परलोकमार्गमनुसर्त्तुमलम् ।
घटवेष्टितं न हि नभोवलयं व्रजति व्रजत्यपि घटेऽवितते ॥२७॥

उक्त दृष्टान्त का समर्थन(प्रमिताक्षरा छन्द)

घट एव गच्छति नभस्त्वचलं व्रजता घटेन तु ततश्च ततः ।
परिवेष्टनेन घटखं क्रियते घटखानि तत्र सुबहूनि ततः॥२८॥

उक्त दृष्टान्त का दार्ष्टान्त में प्रदर्शन(प्रमिताक्षरा छन्द)

पुरमेव गच्छति चितिस्त्वचला व्रजता पुरेण यदि सापि चितिः ।
परिवेष्ट्यते तु सुबहूनि तदा वलयानि पूर्ववदुपाश्रयसे ॥२९॥

अनन्त नूतन जीवनिर्माण की शङ्का का परिहार(प्रमिताक्षरा छन्द)

अकृतागमश्च कृतनिष्फलता फलतः समापतति कर्त्रगतेः ।
अपरस्य भोक्तुरुदयाच्च दिवि व्यसनस्य संततिरहो विषमा ॥३०॥
चलने ह्युपाध्यभिमतस्य भवेज्जनितस्य तेन विगमः सुदृढम् ।
ननु कुण्डलापसरणे पुरुषादथ न प्रणश्यति न कुण्डलिता ॥३१॥

चेतन में उपाधिसम्बन्ध का निराकरण(प्रमिताक्षरा छन्द)

न पुरान्वयश्च तव चिद्वपुषः परमार्थतो भवति तर्कसहः ।
नभसो यथा घटसमागमनं न ततोऽपि लिङ्गघटितो व्रजसि ॥३२॥

पूर्वोक्त दृष्टान्त में सम्बन्धानुपपत्ति का निरूपण(प्रमिताक्षरा छन्द)

नभसः प्रदेशविरहान्नभसो न घटः प्रदेशपरिवेष्टनकृत् ।
न नभः समस्तमपि वेष्टयते नभसोऽवशेषविरहापतनात् ॥३३॥

उक्त दृष्टान्त को दार्ष्टान्त में घटाते हैं (प्रमिताक्षरा छन्द)

परमात्मभागपरिवेष्टनकृन्न पुरं तथाऽनवयवो हि परः ।
न च कृत्स्नमेव परमं पुरुषं पुरवस्तु वेष्टयितुमुत्सहते ॥३४॥

संपूर्ण चिदात्मा को शरीर से परिवेष्टित मानने पर दोषान्तरापत्ति भी है (प्रमिताक्षरा छन्द)

यदि कृत्स्न एव परमः पुरुषः पुरवेष्टितो भवति जीवतया ।
न तदेश्वरो भवितुमुत्सहते न च जीवजातमपरं सकलम् ॥३५॥

पूर्वपक्षी के आग्रहानुसार बद्ध-मुक्तादि व्यवस्था भी नहीं बनेगी (प्रमिताक्षरा छन्द)

गुरुशिष्यसङ्गतिरतो न भवेन्न च बन्धमोक्षनियमो घटते ।
विषयं विना सकलमापतति स्फुटमत्र वेदवचनं च वृथा ॥३६॥

तात्पर्य का वर्णन (प्रमिताक्षरा छन्द)

[5]न [3]पुरान्वयो[1]ऽत [4]उपपत्तिसहः [6]परमार्थतो[7]ऽस्ति [2]परमार्थदृशोः ।

[2]वियतो [3]घटान्वयवदे[4]व [1]ततः [6]परिकल्पितं [5]पुरसमागमनम् ॥३७॥

आत्मा में परलोकगमन भी कल्पित है (प्रमिताक्षरा छन्द)

[1]यत [2]एवमे[3]त[7]दुपप:त्तिपथं [8]न [4]तव [9]प्रयाति [6]विरहय्य [5]तमः ।

[1]परलोकमार्गगमनं [4]स्वतमः परिकल्पितं [3]चलनव[2]न्नभसः॥३८॥

शरीर और चेतन के कल्पित सम्बन्ध में उत्पन्न संशय का निराकरण(प्रमिताक्षरा छन्द)

[1]पुरधर्म[2]मात्मनि [7]विकल्प्य [3]तथा [4]स्वचिदात्मतां [5]च [6]पुरधर्मतया ।

[1]स्वपुरं [2]स्वयं [3]च दृढमे[5]कतया [6]परिकल्पयन् [8]व्रजसि [7]मूढमतिः ॥३९॥

मोक्ष के लिए महावाक्यों का उपदेश परमावश्यक है (प्रमिताक्षरा छन्द)

[1]परिपूर्णचिद्रसघनः [4]सततं [3]स्वमहिम्नि [5]तिष्ठसि [2]निरस्तमले ।

[7]न [1]तथापि [2]तत्त्वमितिवाक्यकृतां [3]मति[4]र्मन्तरेण [5]तव [6]केवलता ॥४०॥

इन्द्रियों से आत्मा में अपरोक्षत्वाभाव का उपपादन(प्रमिताक्षरा छन्द)

न तव प्रतीचि करणानि बहिर्विषयाणि येन करणानि सदा ।
सहजं च गाढमतिमूढतमं तम इत्यतः पुरमनुव्रजसि ॥४१॥

आत्मा में अविद्या मात्र से परिकल्पित संसरण को सिद्धान्त से पुष्ट करते हैं (प्रमिताक्षरा छन्द)

स समान इत्युपनिषद्वचनं प्रतिपादयत्युदितमर्थमतः ।
स्वमनीषिकेति न कदाचिदपि प्रतिपत्तिरत्र भवतो भवतु ॥४२॥

जलगत सूर्यप्रतिबिम्ब के दृष्टान्त से भी आत्मा में आरोपित चलनादि का निरूपण (प्रमि

पुरहेतुकं यदभवच्च विभोः परिकल्पितं किमपि चित्सदृशम् ।
जलपात्रहेतुकमिव द्युमणेस्तदसंततं भवति तद् व्रजति ॥४३॥

पुर्यष्टक एवं चिदाभास का प्रेरक कौन है ?(प्रमिताक्षरा छन्द)

जडशक्तिरस्ति च परस्य विभोः परमात्मनस्तम इति प्रथिता ।
पुरमष्टकं तव यथा भवति श्रुतितः प्रसिद्धमिदमप्यखिलम् ॥४४॥

जीव तथा ईश्वर शब्द के वाच्यार्थ का निरूपण(प्रमिताक्षरा छन्द)

पुरहेतुकं तव यथा च वपुर्भवतीह जीववचसो विषयः ।
जडशक्त्युपाधिकममुष्य तथा परमेश्वरत्ववपुरुद्भवति ।।४५।।

उक्त जीव ईश्वर में नियम्य नियामक भाव श्रुति सम्मत है (प्रमिताक्षरा छन्द)

पुरहेतुरूपघटितस्य दृशोर्जडशक्त्युपाधिपरमेश्वरतः ।
भयमुद्भवत्यनवबोधवशादिति च त्रयीशिरसि राजपथः ।।४६।।

मायोपाधिक परमात्मा से जीव की कर्मफलप्राप्ति का उपपादन(प्रमिताक्षरा छन्द)

परमेश्वरेण विभुना रणयन् परिबृंहितः शकटवद् व्रजसि ।
शकटं हि शाकटिकयोगवशाद् व्रजति स्वयं न परतन्त्रतया ।।४७।।

चेतन जीव में भी ईश्वर की प्रेरणा के बिना शुभाशुभ कर्मों के फल की सिद्धि असम्भव है (प्रमिताक्षरा छन्द)

पुरवेष्टितः पुरवशानुगतः पुरतन्त्रचिन्निभविभिन्नवपुः ।
दिवि यातनां भुवि च कर्मफलान्यनुभूय भूय इह सम्भवति ।।४८।।

कर्मफल की व्यवस्था का उपपादन(द्रुतविलम्बित छन्द)

सुकृतदुष्कृतकर्मवशादयं दिवमथो यमसादनमे वा ।
अनुभवेन समाप्य पुनर्महीतलमबोधवशादवरोहति ॥४९॥

मोक्ष के लिए ब्रह्म की अनिवार्यता (प्रमिताक्षरा छन्द)

यदि वा समुच्चयवशात् पुरुषः कमलासनं व्रजति कामुकधीः ।
पुनरेव मानवमिमं तु विना परिवर्त्तमाव्रजति मूढमतिः ॥५०॥

ब्रह्मलोक गये जीव को आत्मबोध हो जाने पर मोक्ष अवश्य मिलता ही है(प्रमिताक्षरा छन्द)

अथ वा स तत्र परमात्ममतिः परिमुच्यते सकलबन्धनतः ।
क्रमयोगमुक्तिरुदिता श्रुतिषु प्रतिशाखमेवमुपपन्नतरा ॥५१॥

कर्म के अनधिकारी पशु पक्षी की गति का वर्णन (प्रमिताक्षरा छन्द)

देवयानपितृयाणयोः पथोर्ज्ञानकर्मरहितत्वकारणात् ।
नैकमप्यनुसरन्ति ये पुनः क्षुद्रजन्तवः इहोद्भवन्ति ते ॥५२॥

संसारगति का उपसंहार (प्रमिताक्षरा छन्द)

[1]इति [3]कामुकस्य [2]तव [7]संसरणं [6]शतशो [8]बभूव [5]बत [4]मूढमतेः ।
[1]इह [2]विप्रजन्मनि [3]विरक्तमतिः [7]कुरु [6]साधनं [4,5]यदपवर्गकरम् ॥५३॥

मोक्ष साधनोपपादन (प्रमिताक्षरा छन्द)

[4]श्रवणादिकं [1]शमदमादिपरः [3]परमात्मनः [2]परमभागवतः ।
[5]कुरु [1]तावता [4]परम[5]मेव [6]पदं [3]परमात्मनस्[2]त्वम[7]वलोकयसि ॥५४॥

अत्मदर्शन के बिना अनर्थप्राप्ति का निरूपण (प्रमिताक्षरा छन्द)

[1]यदि [3]तन्[11]न [12]पश्यसि [2]हरेः [4]परमं [5]पदम[7]म्बु [6]शीतल[9]मि[10]वेद्धशिराः ।
[7]न [5]खलु [3]प्रदीप्तशिरसो[8]ऽस्ति [6]सुखं [4]तव [2]दुःखपावकशिखाभिरहो ॥५५॥

प्रयोजन सहित वैराग्यनिरूपण का उपसंहार (स्रग्धरा छन्द)

[1]एवं [4]विज्ञाय [3]तापत्रयम[2]तिगहनं मोहमूलं [5]परस्मि-
[6]न्नात्मन्या[7]त्मप्रकाशे [14]त्वयि [8]परमसुखे [9]निष्कले [10]निष्कलङ्के ।

सत्ये नित्यस्वभावे परिहृतसकलद्वैतकूटानुषङ्गे
सम्यग्ज्ञानानुरागं कुरु विषयगतं भिन्द्धि निर्बन्धमेनम् ॥५६॥

तत्त्वं पदार्थशोधनप्रदर्शन (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

इत्युक्त्वोपरते गुरौ पुनरयं जिज्ञासया प्रेरित-
स्तत्त्वंशब्दनिगद्यलक्ष्यविषयं शिष्यो गुरुं पृच्छति ।
वैराग्येऽतिदृढीकृते सति यतः प्राज्ञो यतिर्मन्यते
संदीप्तं शिरसीव पावकमिदं संसारदुःखं महत् ॥५७॥

तत्त्वं पदार्थ की जिज्ञासा में वैराग्य प्रधान साधन है (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

वैराग्यं विषयेषु पूर्वमपि मे जातं हरेरर्चनाद्
यज्ञादिक्रियया निरस्तफलया किं त्वद्य दार्ढ्यं गतम् ।
संसारस्य निरूपणेन धिगिदं कर्मादिजन्यं फलं

विश्वं नश्वरमम्बुबुद्बुदसमं पद्मासनान्तं जगत् ॥५८॥

विरक्त साधक के हृदय में त्वं पदार्थ की जिज्ञासा का प्रदर्शन(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

किं तु त्वंपदलक्ष्यमर्थमधुना कर्तृत्वभोक्तृत्वयो-
र्जाग्रद्भूगतयोरपोहमुखतो वाञ्छाऽवगन्तुं मम ।
कर्तृत्वादिकमस्य किं निजमभूत् स्वाभाविकं जाग्रतः
किं वा तत् परतः कुतश्चिदभवच्चैतन्यधातोरिति ॥५९॥

त्वम् पदार्थ की जिज्ञासा पर उत्पन्न आक्षेप का परिहार (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

यावत्त्वंपदलक्ष्यवस्तुविषयो बोधो न मे वर्त्तते
तावन् मे बधिरेषु गीतमिव तच्छ्रौतंवचोऽनर्थकम् ।
तस्मात्त्वंपदलक्ष्यवस्तुविषयः कर्तृत्वभोक्तृत्वयो-
र्जाग्रद्भूगतयोरपोहमुखतो बोधो ममोत्पाद्यताम् ॥६०॥

आचार्य द्वारा शिष्य के प्रश्नों का उत्तर (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

कर्त्रादेरवभासकत्वमगमः शुद्धः स्वयंभास्वर
श्चैतन्येन निजेन तेन भवतः कर्त्रादिबुद्धिर्भ्रमः ।
कूटस्थस्य चिदात्मनस्तव कुतः कर्तृत्वभोक्तृत्वयोः
शङ्का जागरितेऽपि कारकगणं कर्त्रादिकं पश्यतः ॥६१॥

पूर्वोक्त अर्थ का दृष्टान्त द्वारा उपपादन(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

व्यापारं सकलस्य भासयति यो भास्वत्करो भास्करो
नासौ कर्तृतया जनस्य विदितो भूमौ द्युलोकस्थितः ।
एवं स्वे महिमन्यवस्थितवतः संघातमुत्पश्यतः
स्वव्यापारसमन्वितं तव कुतः कर्तृत्वमुत्प्रेक्ष्यते ॥६२॥

कर्तृत्वादि धर्मों के आश्रय का उपपादन(वसन्ततिलका छन्द)

भूतानि पञ्च तव मोहसमुद्भवानि संघातरूपपरिणाममुपागतानि ।

कुर्वन्ति कर्मफलमश्नुवते च तेषां साक्षी त्वमन्तरविलुप्तचिदेकरूपः ॥६३॥

जड़ शरीर में सोदाहरण कर्तृत्वादि का उपपादन(उपजाति छन्द)

क्षीरस्य पूर्णे चषके निरस्तो मणिर्यथा मारकतो महार्हः ।
क्षीरं समस्तं क्षणमात्रतस्तत् करोति तच्छायमनूनतेजाः ॥६४॥

तथा तमःसम्भवमच्छमन्तर्बहिर्जडिम्नाऽन्वितमन्तरात्मा ।
जगच्चिदेकच्छवि चित्स्वरूपः करोति सान्निध्यवशेन विश्वम् ॥६५॥

देहभिन्न होने पर भी आत्मा के अभिन्नत्व का श्रुति द्वारा संगमन (वसन्ततिलका छन्द)

तान्येव कार्यकरणानि बहुप्रकारं भेदं च बिभ्रति भवानपि तत्र लग्नः ।
भेदेन भाति जलपात्रनिविष्टमूर्त्तिमार्त्तण्डमण्डलवदन्वयमन्तरेण ॥६६॥

आत्मा में औपाधिक भेदारोप का कारण (वसन्ततिलका छन्द)

अध्यात्ममेवमधिभूतमथाधिदैवं सूत्रं विराजमपि पश्यसि साक्षिभूतः ।
साक्षित्वकारणमशेषजगन्निदानमज्ञानमात्मचिदवज्वलितं सदैव ॥६७॥

आत्मा में एकता का उपपादन(शालिनी छन्द)

देहव्यक्तिर्विप्रतीत्यास्पदत्वं याता सर्वा तावकी तावकीव ।
देहव्यक्तिर्देहताकारणेन तस्मादात्मा सर्वभूतस्थ एकः ॥६८॥

आत्मैकत्व की सिद्धि के लिये निम्नांकित अनेक अनुमानों का प्रयोग (शालिनी छन्द)

संविद्व्यक्तिर्विप्रतीत्यास्पदत्वं याता सर्वा तावकी तावकीव ।
संविद्व्यक्तिः संविदात्मत्वहेतोस्तस्मादात्मा सर्वभूतस्य एकः ॥६९॥

उक्त अनुमान का अन्तःकरणादि पक्षों में भी उपयोग (शालिनी छन्द)

बुद्धिव्यक्तिर्विप्रतीत्यास्पदत्वं याता सर्वा तावकी तावकीव ।
बुद्धिव्यक्तिर्बुद्धिताकारणेन तस्मादात्मा सर्वभूतस्थ एकः ॥७०॥

अक्षव्यक्तिर्विप्रतीत्यास्पदत्वं याता सर्वा तावकी तावकीव ।
अक्षव्यक्तिस्त्वक्षताकारणेन तस्मादात्मा सर्वभूतस्थ एकः ॥७१॥

ज्ञानव्यक्तिर्विप्रतीत्यास्पदत्वं याता सर्वा तावकी तावकीव ।

ज्ञानव्यक्तिर्ज्ञानताकारणेन तस्मादात्मा सर्वभूतस्थ एकः ।।७२।।

रागव्यक्तिर्विप्रतीत्यास्पदत्वं याता सर्वा तावकी तावकीव ।
रागव्यक्ती रागताकारणेन तस्मादात्मा सर्वभूतस्थ एकः ।।७३।।

द्वेषव्यक्तिर्विप्रतीत्यास्पदत्वं याता सर्वा तावकी तावकीव ।
द्वेषव्यक्तिर्द्वेषताकारणेन तस्मादात्मा सर्वभूतस्थ एकः ।।७४।।

उक्त अनुमान का तात्पर्य निरूपण(वसन्ततिलका छन्द)

एवं सतीदमविवेकनिबन्धनं ते कर्तृत्वमात्मनि विभाति न वस्तुभूतम् ।
बालेन कल्पितमतीव विशुद्धरूपे व्योम्नीव भूम्नि मलिनत्वमबोधहेतोः ।।७५।।

आदित्यादि बाह्यज्योतियों के अतिरिक्त कर्तृत्वादि की प्रतीति के लिये साक्षीभूत आत्मचैतन्य को मानना आवश्यक है (वसन्ततिलका छन्द)

बाह्यैरसौ रविनिशाकरवह्निवाग्भिर्ज्योतिर्गणैरुपकृतोऽपि हि कर्मजातम् ।
निर्वर्तयन्न खलु तावकमन्तरेण चैतन्यसन्निधिबलं पुरुषः करोति ।।७६।।

व्यवहारसिद्धि के लिये बाह्यसिद्धि की भी आवश्यकता (वसन्ततिलका छन्द)

ज्योतिर्द्वयान्तरित एव हि कर्मजातं सर्वं करोति पुरुषोऽन्नमयः सदैव ।
कर्मादिकारणविनिर्मिततमस्य बाह्यं ज्योतिस्त्वनित्यमनिमित्तकमान्तरं चित् ॥७७॥

शब्दादि विषयों के प्रकाशक होने पर भी आत्मज्योति में नित्यत्व का उपपादन (वसन्ततिलका)

श्रोत्रादिजन्यमतिवृत्तिषु बाह्यशब्दाद्यर्थाकृतिर्विशति कर्मवशेन कर्तुः ।
बोधाकृतिस्तु तव सन्निधिमात्रहेतुर्धीवृत्तिषु प्रविशति स्वरसेन नित्यम् ॥७८॥

दृष्टान्त द्वारा पूर्वोक्त कथन की पुष्टि (वसन्ततिलका छन्द)

स्वाभाविकी हि वियदन्वितता घटादेः क्षीरादिवस्तुघटना पुनरन्यहेतुः ।
एवं धियामपि चिदन्वितताऽनिमित्ता शब्दादिवस्तुघटना खलु कर्महेतुः ॥७९॥

बुद्धि-वृत्तियों में चैतन्य आत्मा के प्रतिफल को बोध कहते हैं(वसन्ततिलका छन्द)

संवेदनं यदिह मानफलं प्रसिद्धं तच्च प्रमातरि विकारिणि निष्ठितं नः ।
तस्य प्रमातुरपि साक्षितयाऽन्तरात्मा सर्वस्य तिष्ठति भवानविकाररूपः ॥८०॥

आत्मा में कर्तृत्वादिप्रसक्ति के बिना निषेधानुपपत्ति (वसन्ततिलका छन्द)

[1]कर्त्रादिसंनिधिबलेन [2,3]तवापि [5]कर्तृभोक्तृप्रमातृवपुरापतति [4]भ्रमेण।
[4]तद् [2]बुद्धिसंश्रय[3]मनात्मगतं [6]प्रतीचि [5]शुद्धे[7]ऽपि [8]पश्यसि [1]तमःपटलावृताक्षः ॥८१॥

शुद्ध आत्मा में पारमार्थिक कर्तृत्वाभाव का उपपादन(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

[2]कर्तृत्वादि [3]च [1]दृश्यवर्गपतितं [6]द्रष्टुः [7]स्वभावः [8]कथं
[9]सम्भाव्येत [5]तव [4]प्रसन्नविमलस्वच्छप्रकाशात्मनः।
[2,3]यद्यद् [4]दृश्यतया [1,5]जगत्यभिमतं [14]सर्वस्य [7,8,12]तत्तद्भवेद्
[11]दूरं [10]द्रष्टु[13]रिति [15]प्रसिद्ध[9]मखिलं [6]भूभृत्समुद्रादिकम् ॥८२॥

स्वप्न दृष्टान्त द्वारा उक्तार्थ का उपपादन(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

[1]एतस्मा[2]च्च [7]न [4]जाग्रत[3]स्तव [8]भवेत् [6]स्वाभाविकी [5]कर्तृता
[1,2]यद्येषा [3]स्वत [4]एव [9]किं [10]न [11]भवति [5]स्वप्ने[7]ऽपि [8]ते [6]तिष्ठतः।
[1]यत् [3]स्वप्ने [4]परिपश्यसि [2]त्व[5]मखिलं [6]त्वन्मायया [7]निर्मितं

कर्तृत्वादि न सत्यमत्र घटते कात्स्न्यानभिव्यक्तितः ॥८३॥

उद्धृत सूत्रार्थ हेतु का विवरण (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

कात्स्न्र्यं हीष्टमबाधनं न खलु तत् स्वप्नस्य जाग्रद्धिया
बाधाद् बाधितमेव सत्यमिति चेन्नैवं विरोधान्मिथः ।
सत्यत्वे न हि बाधितत्वघटना बाधे च सत्यं कुतः
सत्यं बाधितमित्यतीव पदयोः सम्बन्धिता दुर्घटा ॥८४॥

मायिक पदार्थ में सत्यत्व का आग्रह अनुचित है (शालिनी छन्द)

मायामेनां जागरे लोकसिद्धामुक्त्वा तद्वत् स्वप्नमायां विविच्य ।
शक्तिव्याप्ती तत्र सिद्धे गृहीत्वा मायासिद्धं जागरं साधयामः ॥८५॥

प्रपञ्च में मिथ्यात्वसिद्धि का उपपादन (उपजाति छन्द)

लोके हि मायाऽधिगता न माया तमोऽतिरिक्ताऽस्ति निरूप्यमाणा ।
व्याप्तिश्च शक्तिश्च निरूप्यमाणा भविष्यतीहैव तु नेतरत्र ॥८६॥

ऐन्द्रजालिक की शक्ति में मायामयत्वानुपपत्ति(वसन्ततिलका छन्द)

मायाविनो न मणिमन्त्रमथौषधं वा मायेति शक्यमिह वर्णयितुं कुतश्चेत् ।
सत्यं हि तत् सकलमिष्टमियं त्वसत्या माया ततोऽन्यदिह किंचन वर्णनीयम् ॥

उक्तार्थ का समर्थन (वसन्ततिलका छन्द)

सामर्थ्यमस्य मणिमन्त्रनिमित्तमस्ति माया भविष्यति जनभ्रमहेतुरेषा ।
इत्युच्यते यदि तदप्यतिफल्गु कस्मात् सामर्थ्यमप्यवितथं हि तदिष्टमस्य ॥८८॥

नट की किसी अन्य शक्ति में भी मायत्वानुपपत्ति (प्रमिताक्षरा छन्द)

न च शक्तिरस्य सहजा यदि वा जनिताऽस्ति केनचिदिति ब्रुवतः ।
परिपुष्कलं स्वमतनिर्वहणं भवितुं क्षमं तदनिरूपणतः ॥८९॥

पूर्वोक्त विकल्प में से प्रथम विकल्प का निराकरण(प्रमिताक्षरा छन्द)

न च शुक्रशोणितसमागमने न च गर्भशायिन इयं विदिता ।
न च मातृयोनिविवरादुदरादपसर्पतो बहिरियं घटते ॥९०॥

नैमित्तिक पक्ष का निराकरण (प्रमिताक्षरा छन्द)

मणिमन्त्रमौषधमितीदृशकं विरहय्य नापरमिहार्पयति ।
पुरुषोऽपि कश्चिदत एवमियं परतोऽपि नास्य घटनामटति ॥९१॥

मायावी की जनमोहित करने वाली शक्ति को भी माया कहना ठीक नहीं (वसन्ततिलका छन्द)

अन्यस्य विभ्रमकरी पुरुषस्य शक्तिराकारमन्यमनपेक्ष्य मनीषिता चेत् ।
वाच्येह लौकिकजनव्यवहारभूमौ मायागिरस्तदपि दुर्घटमिष्टहानेः ॥९२॥

प्रतिवादी के वचन में भाष्यविरोध से विरोधापत्ति (वसन्ततिलका छन्द)

मायामयत्ववचनादखिलं मृषेति यद् भाष्यकारवचनं तदसङ्गतं स्यात् ।
प्रत्यक्षमुत्सृजसि कारणमन्यदन्यद् यत्किञ्चिदानयसि कष्टमतः किमन्यत् ॥

परमेश्वराश्रित माया एवं अज्ञान में समानार्थत्व का उपपादन(वसन्ततिलका छन्द)

अज्ञानमेव च भविष्यति शक्तिरेषा सर्वप्रपञ्चजननी परमेश्वरस्य ।
मायाश्रुतिस्मृतिवचोभिरुदीर्यमाणा शक्तिग्रहो हि परविभ्रमहेतुशक्तौ ॥९४॥

अलौकिक अर्थ में सन्निधिमात्र से शक्तिग्रह पक्ष का भी निराकरण (उपेन्द्रवज्रा छन्द)

न च प्रसिद्धार्थपदान्तराणां प्रयोगसान्निध्यवशेन शक्तिः ।
ग्रहीष्यतेऽस्येति समञ्जसं स्यादलौकिके शब्द इदं हि युक्तम् ॥९५॥

अयं तु मायेति न शब्द एवमलौकिको लौकिक एव तस्मात् ।
यदर्थवाची जगति प्रसिद्धस्तमेव वेदेऽपि स वक्ष्यतीह ॥९६॥

उद्भिदादि शब्द के समान माया शब्द को नहीं कह सकते(उपेन्द्रवज्रा छन्द)

ननूद्भिदादेर्यदि नाम लोके प्रसिद्धमर्थान्तरवाचकत्वम् ।
तथापि भावार्थनिपीडितस्य विजानते कर्मणि शक्तिमस्य ॥९७॥

उक्त शङ्का का समाधान(उपजाति छन्द)

सत्यं न गत्यन्तरमस्ति तत्र ततस्तथा निश्चितमत्र नैवम् ।
मायागिरोऽज्ञाननिवेदनेऽपि न काचिदत्रानुपपत्तिरस्ति ॥९८॥

परमेश्वरीय शक्ति माया को अज्ञानरूप मानने पर अल्पज्ञत्वापत्ति का निराकरण (शार्दूलविक्रीडित)

अज्ञानं जडशक्तिमात्रवपुषा सर्वेश्वरस्येष्यते
सर्वज्ञत्वविरोधि तन्न च भवेदुक्तप्रकारेण नः ।
सर्वज्ञेश्वरसंश्रया भवति सैवाज्ञानमाया श्रुतौ
तस्माद्बुद्धिदिवेति वर्णनमिदं वैषम्यदुष्टं तव ॥९९॥

माया एवं अज्ञान में तुल्यार्थता का उपपादन(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

मायाऽनिर्वचनीयमेव तु तमो मायाविनो गीयते
द्रष्टणां भ्रमकारणं विषयता मायाविता तस्य तु ।
तं हस्त्यादिविकल्पनाघटितवन्मूढाशया जन्तवो
रज्जुं सर्पतयेव तद्विरहितं जानन्त्यबुद्धत्वतः ॥१००॥

तत्त्वसाक्षात्कार से माया एवं अज्ञान दोनों में बाधितत्वोपपादन (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

सम्यग्ज्ञानबलेन तं विरहितं हस्त्यादिभिर्यत्क्षणे

जानीयुस्तदनन्तरं न स भवेद्धस्त्यादियुक्तः पुमान् ।
तेनास्मत्तम एव तत्र विषये मायाऽस्तु मायाविनः
सोऽज्ञातो वयमज्ञकोटिपतिता मायी स तेनोच्यते ॥१०१॥

उक्त विधान में शङ्कोत्थापन (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

नन्वेवं सति रज्जुखण्डलकमप्यज्ञातमज्ञानिभि-
र्मायावीति गिरोच्यतां न तु तथा लोके प्रसिद्धिः क्वचित् ।
तेनाज्ञातविलक्षणत्वमुचितं मायाविनो लौकिका
मायावीति पुमांसमेव निपुणं येनाहुरत्यादरात् ॥१०२॥

उक्त शङ्का का परिहार (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

नैवं भ्रान्तिनिमित्तकारणमयं संगृह्य पूर्वक्षणे
मन्त्रादिप्रचुरं प्रयत्नजनितं तज्जीवनो वर्त्तते ।

तेनात्रैव तु लोकरूढिरभवन्मायावितागोचरा
यद्वद्ब्राह्मणताप्रसिद्धिरभवन्मुक्त्वा परिव्राजकान् ॥१०३॥

शास्त्रीय शब्दों का शक्तिग्रह लौकिक प्रसिद्धि के आधार पर होता है(शालिनी छन्द)

एवं तावल्लोकसिद्धा न माया मिथ्याज्ञानाद्भिद्यतेऽतश्च तत्र ।
शक्तिव्याप्तिप्रत्ययौ वर्णयित्वा वेदाल्लिङ्गाच्चान्यमायात्वसिद्धिः ॥१०४॥

जाग्रत् प्रपञ्च के दृष्टान्त द्वारा भी आकाशादि में मिथ्यात्व की सिद्धि (शालिनी छन्द)

जाग्रद्भूमौ या प्रसिद्धेह माया सा निर्णीता तावदज्ञानमेव ।
तस्यां शक्तिव्याप्तिविज्ञानसिद्धेर्विज्ञातव्या सैव वेदानुमानात् ॥१०५॥

स्वाप्निक-माया एवं अज्ञान में समानता का प्रदर्शन (शालिनी छन्द)

स्वप्नेऽप्येवं स्वप्नदृङ्मोहमात्रादन्या काचिन्न प्रसिद्धाऽस्ति माया ।
तत्रैवायं सूत्रकारस्य तस्मान् मायाशब्दो वर्त्तते नापरत्र ॥१०६॥

मायाशब्द का प्रयोग अज्ञान अर्थ में सूत्रकार ने कैसे किया ?(शालिनी छन्द)

शक्तिव्याप्तिप्रत्ययौ कारयिष्यन् स्वप्ने स्थित्वा प्रत्यगज्ञानमात्रे ।
मायावाचा लोकवत्सूत्रकारो वेदं लिङ्गं चोपनेतुं प्रवृत्तः ॥१०७॥

भगवद्गीतोक्त वाक्य से भी अज्ञान एवं माया शब्द में पर्यायत्व की सिद्धि (वसन्ततिलका छन्द)

अज्ञानमावरणमावरणं च माया सर्वेश्वरेण हरिणा दृढमभ्यधायि ।
चैतन्यवस्तुन इति प्रतिपद्यमानास्तत्त्वं तदेकमिति निश्चयतः प्रतीमः ॥१०८॥

दोनों में समान लक्षण का प्रदर्शन (वसन्ततिलका छन्द)

ज्ञानं निवर्त्तकमपि द्वितयस्य तस्य गीतागतः करुणया भगवानुवाच ।
तेनापि तत्त्वमिदमेकमिति प्रतीतिरानीयते कथितलक्षणतुल्यभावात् ॥१०९॥

गीतोक्त वाक्य का अर्थतः उद्धरण(वसन्ततिलका छन्द)

नाहं प्रकाश इति तावदनेन मायाऽज्ञानेन चावृतमितीतरदप्यभाणि ।
मामेव ये तु परमं पुरुषं प्रपन्ना ज्ञानेन तु प्रभृतिना च धिया निवृत्तिः ॥११०॥

अज्ञान में ज्ञानप्रागभावत्व का निराकरण (स्रग्धरा छन्द)

ज्ञानस्य प्रागभावादपरमभिहितं प्रत्यगज्ञानमेत-
त्संसारव्याधिबीजं कथितनयवशादेव बुध्यस्व बुद्ध्या ।
ज्ञानेनाज्ञाननाशङ् कथयति भगवानेष गीतागतः स-
न्न ज्ञानात् प्रागभावक्षय इति घटते तत्क्षये तत्प्रसूतेः ॥१११॥

स्वप्नमिथ्यात्वनिरूपण का उपसंहार (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

मायामात्रमतः समस्तमभवत् स्वप्ने प्रसिद्धं दृशः
कर्तृत्वादि तमोमयं वितथमेवाज्ञानमात्रं यतः ।
तस्माज्जागरितेऽपि नैतदभवत् स्वाभाविकं यत् पुन-
स्तादृक्षं तव सर्वदैव तु भवेत् स्वप्नेऽपि चैतन्यवत् ॥११२॥

व्यभिचारी धर्म वस्तु के स्वरूप नहीं होते (वसन्ततिलका छन्द)

सत्यप्यलुप्तचिति यत्त्वयि नास्ति कर्तृभोक्तृप्रमातृमुखमन्यदपीह किंचित् ।

जाग्रद्दशाऽवगतमप्यखिलं न तत्ते स्वाभाविकं भवितुमुत्सहते विरोधात् ॥११३

स्वाभाविक धर्मका व्यभिचाराभाव (वसन्ततिलका छन्द)

स्वाभाविकी हुतभुजः खलु नोष्णता तं जातु प्रमुञ्चति न तामपि जातवेदाः ।
एवं भवन्तमपि जागरितोपलब्धं स्वप्ने भवानपि च जागरितं न मुञ्चेत् ॥११४॥

जाग्रत् एवं स्वप्न के कर्तृत्व में भेद प्रदर्शन (वसन्ततिलका छन्द)

स्वप्ने न जागरितमस्ति मृषात्वहेतोः स्वप्नस्य सत्यमिति जागरितं वदन्ति ।
स्वप्नस्य बाधनबलादनृतत्वमुक्तं तस्माच्चिदेव तव रूपमतोऽन्यदार्त्तम् ॥११५॥

मिथ्या गुरु-शास्त्रादि में भी ब्रह्मज्ञान की साधनता (वसन्ततिलका छन्द)

स्वप्नोपलब्धमखिलं वितथं तथापि तत्सूचयत्यवितथं परमार्थवस्तु ।
जाग्रद्दशावगतमप्यनृतं तथापि तद्वत्तदप्यवगतिक्षममेव भूम्नः ॥११६॥

स्वप्न एवं जाग्रत् में विषमता का उपपादन (वसन्ततिलका छन्द)

स्वप्नभ्रमोऽपि सुकृतादिनिबन्धनत्वात्तावत् परिस्फुरति यावददृष्टमस्ति ।

क्षीणे तु तत्र लयमेति जगन्निदाने गाढे तमस्यनुभवावगते प्रतीचः ॥११७॥

स्वप्न एवं जाग्रत् के दृश्य में पुनः वैषम्य का प्रदर्शन(वसन्ततिलका छन्द)

निष्पादिता सकलकारकवर्गसाध्या सर्वेण कारकगणेन सहैव तावत् ।
तिष्ठेत् क्रिया परमसूक्ष्मतयेक्ष्यमाणा सर्वेश्वरेण पुरुषः फलमेति यावत् ॥११८॥

स्वप्न में प्रातिभासिकत्व और जाग्रत् में व्यावहारिकत्व का उपपादन(वसन्ततिलका छन्द)

स्वप्नश्च जागरितमप्युभयं तवैव मोहप्रसूतमपि कर्मफलं विभाति ।
कर्मक्षये तदखिलं परमात्ममायामाश्रित्य सूक्ष्ममवतिष्ठत एव लीनम् ॥११९॥

जाग्रत्-स्वप्न प्रपञ्च का अज्ञान में लीन होना प्रमाणसिद्ध है(वसन्ततिलका छन्द)

उत्थानलिङ्गकृतकल्पनयैतदेवं विज्ञायते न तु तथावगतं तदानीम् ।
अज्ञानलीनमखिलं जगदस्ति सूक्ष्मं तत्रेति नानुभवनादवगम्यते हि ॥१२०॥

सुषुप्ति में अज्ञान की सिद्धि (वसन्ततिलका छन्द)

अज्ञानमेव तु तदावगतं त्वदीयं येनोत्थितो वदसि नावगतं मयाऽद्य ।

सुप्तेन किंचिदपि गाढतमस्य्यभूवं क्षिप्तः समस्तविषयावगमासमर्थः ॥१२१॥

विपक्षबाधक तर्क प्रदर्शन(वसन्ततिलका छन्द)

अज्ञानमत्र यदि नानुभवात् प्रसिद्धं नाज्ञासिषं त्विति कुतस्तव निश्चयोऽभूत् ।
अज्ञानमस्त्यवगतं च सुषुप्तिकाले तेनेति निश्चिनु तवानुभवप्रमाणात् ॥१२२॥

सुषुप्ति में अज्ञान का अनुभव मानने पर उत्थित शङ्का का समाधान(वसन्ततिलका छन्द)

स्पष्टानुभूतिविषयो न तमस्तदानीमासीदहंकरणहीनतयाऽधुना तु ।
निष्पाद्य कार्यमिदमंशमहं न जाने मूढोऽस्मि चेत्यवगतेर्विषयत्वमागात् ॥१२३॥

सुषुप्ति में जाग्रत् की भाँति अज्ञान के सुस्पष्ट न भासने में तर्क प्रदर्शन (वसन्ततिलका छन्द)

एतावता तव तमोऽपि सुषुप्तिकाले नास्तीति बुद्धिरुदितं गुरुभिश्च कैश्चित् ।
स्थाने क्वचित् क्वचिदतो द्वयमुच्यमानं ग्राह्यं विविच्य भवता विषयं विभज्य ।

पूर्वोक्त दोनों वचनों का प्रदर्शन (वसन्ततिलका छन्द)

नाज्ञानमस्ति च सुषुप्तिगतस्य पुंसो गाढे तमस्य्ययमभूत् पुरुषः सुषुप्तः ।

इत्युच्यमानमविरुद्धतया विविच्य ग्राह्यं त्वयाऽनुभवयुक्तिनिरूपणेन ॥१२५॥

अज्ञानाभावबोधक वचनों की भी व्यवस्था (वसन्ततिलका छन्द)

एवं तमोऽपि न बभूव सुषुप्तिकाले भाषान्तरेण पुरुषः पर एव जीवः।
निर्बीजतामुपगतः स निरन्वयेन न स्पष्टमत्र तमसोऽनुभवोऽस्ति यस्मात् ॥

सता सौम्य तदा सम्पन्नो भवति इत्यादि श्रुतिवाक्यों का तात्पर्यावधारण (वसन्ततिलका छन्द)

अज्ञानतज्जमतिहीनतया सुषुप्ते शुद्धः परोऽसि भगवानसि नित्यमुक्तः।
कामश्च कर्म सकलं च तदा कुतस्त्यं चित्सागरेऽनवकरे त्वयि तायमाने ॥१२७।

सुषुप्तावस्था में अज्ञान के न रहने पर भी आत्मशुद्धत्व का उपपादन (वसन्ततिलका छन्द)

आसीदहंकरणमात्मतमोनिमित्तं तज्जाग्रतश्च भवतः स्वपतश्च दुःखम्।
आनीय दर्शयति तन्न सुषुप्तिकाले बीजक्षयादिति भवानतिनिर्मलोऽभूत् ॥१२८।

अहंकार के निमित्तभूत अज्ञान में भावरूपत्व का उपपादन (वसन्ततिलका छन्द)

सद्रूपमावरणतानुभवादभीष्टमज्ञानमात्मचिति नैशतमोवदेतत्।

ज्ञानं दिवाकरवदस्य जडप्रकाशरूपं निवर्तकमिति प्रवदन्ति धीराः ॥१२९॥

प्रतिवादियों को भी अज्ञान में भावरूपत्व स्वीकार करना चाहिये (वसन्ततिलका छन्द)

प्रावादुकैरपि तथैव तदेषितव्यं संवेदनेऽस्फुरणमभ्युपयद्भिरग्रे ।
संवेदनं न खलु संविदभावरूपमज्ञानमभ्युपगतं न च बुद्ध्यभावः ॥१३०॥

सुषुप्ति में संसाराभाव का कारण-उपपादन (वसन्ततिलका छन्द)

तस्मादशेषजगदेकनिदानभूतमज्ञानमात्मविषयं न विरुद्धमूचुः ।
वेदावसानवचनानि मुनीश्वराश्च स्थानेषु भूरिषु ततोऽवकरो न कश्चित् ॥१३१॥

सुषुप्ति में अज्ञान का बोध साक्षीमात्र से होता है(वसन्ततिलका छन्द)

साक्षित्वमात्मतमसा मतिकञ्चुकेन मातृत्वमेतदपि नेह सुषुप्तिकाले ।
यद्धेतुकं भवति यन्न हि तद्विना तत् सम्भाव्यते न च तदत्र सुषुप्तिकाले ॥१३२॥

सुषुप्ति एवं मुक्ति में भेद का उपपादन (वसन्ततिलका छन्द)

अज्ञानमस्ति सकलं च सुषुप्तिकाले तत्र प्रलीनमिति यद्यपि नास्ति पुंसः ।

स्पष्टानुभूतिरपवर्गविलक्षणत्वादेष्टव्यमेव तु सुषुप्तिभुवस्तथात्वम् ॥१३३॥

सुषुप्तावस्था में अज्ञान से सर्वथा पृथक् आत्मा के अनुभव का दृष्टान्त द्वारा समर्थन (वसन्त०)

एवं सतीह तमसो न विविच्य वस्तु साक्षान्निवेदयितुमस्ति निदर्शनं चेत् ।
नैतत् परागवगतेर्विषयो विभाति गाढं तमो न तु तथाऽवगतिः प्रतीचि ॥१३४॥

जाग्रदादि अवस्थाओं में विविक्त आत्मा की स्पष्टानुभूति (वसन्ततिलका छन्द)

प्रत्यक्परान्विषयवस्तुविवेचनाय क्लेशो न सम्भवति कस्यचिदत्र जन्तोः ।
दृश्यं तमो घटपटादिवदेष तस्य द्रष्टा सुषुप्तिभुवि चिद्घनविग्रहोऽभूत् ॥१३५॥

उक्त दृष्टान्त द्वारा जाग्रदादि अवस्थाओं से आत्मा का विवेकोपादान (वसन्ततिलका छन्द)

तिस्त्रोऽपि चिद्घनतनोस्तव दृश्यभूता दूरे चकासति मतेर्बहिरेव तावत् ।
आविस्तिरोभवनधर्मतया ह्यवस्थाः कः सङ्करो विमलचिद्वपुषस्तवाभिः ॥१३६॥

उक्त अवस्थात्रय का आश्रय साभास अन्तःकरण है (वसन्ततिलका छन्द)

त्वय्येव कल्पितमहंकरणं बिभर्ति तिस्त्रोऽपि ताः सहितमेव तु तच्च ताभिः ।

त्वच्चित्प्रकाशविषयत्वमुपेत्य भाति स्वाज्ञानवत्तव न रूपमतश्चतुष्कम् ॥१३७॥

उक्त चारों पदार्थ का आत्मा में कल्पितत्व का उपपादन(वसन्ततिलका छन्द)

नान्वेति तत्तव चिता व्यतिरेकिता च दूरे न संभवति तस्य चतुष्टयस्य ।
नाभावरूपभजनाय समर्थमेतदेवं चिदेव तु चतुष्टयमेतदासीत् ॥१३८॥

अन्वय-व्यतिरेक द्वारा आत्मा के सत्यत्व एवं अनात्मा के कल्पितत्व का उपपादन (शार्दूल०)

जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तिमूर्छिततनूनिष्क्रान्त्यवस्थासु य-
च्चैतन्यं व्यभिचारिवस्त्वनुगतं तत्सत्यमेवात्मनः ।
यत्किंचिद्व्यभिचारि तन्ननु मृषा स्रक्सर्पदण्डादिव-
न्नानुस्यूतचिदात्मवस्तु वदितुं शक्यं मृषा रज्जुवत् ॥१३९॥

अज्ञान एवं उसकें समस्त कार्य आत्मा से सर्वथा भिन्न एवं कल्पित हैं (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तिधर्मकमिदं चित्तं त्वदज्ञानतः
प्रादुर्भूतमतस्त्वमेव सततं त्वत्तो न तद्भिद्यते ।

स्वाज्ञानं च तवानुभूतिबलतः सिद्धं मृषा तत्त्वतो
नासीदस्ति भविष्यतीति भवतः पूर्णा चितिः शिष्यते ॥१४०॥

उक्त सिद्धान्त के समर्थन में प्रमाणप्रदर्शन(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

ज्योतिर्ब्राह्मणवाक्यमानबलतः संपूर्णरूपा चिति-
र्जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तिधर्मरहिता मोक्षाय निश्चीयते ।
तस्मादस्मदुदीरितं स्वकवपुः श्रद्धत्स्व मानं विना
नास्माभिः प्रतिपादिता चितिरियं वाक्यार्थसंबन्धिनी ॥१४१॥

त्वम्-पदार्थशोधनप्रसङ्ग का उपसंहार (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

एतत्त्वंपदलक्ष्यवस्तु भवता यत् पृष्टमासीत् पुरा
तन्निर्णीतमतोऽन्यदस्ति यदि ते चित्तस्थितं पृच्छ तत् ।
बुद्धिस्थं कुरु पूर्वमुक्तमखिलं यद्वक्ष्यमाणं च तद्

बोद्धुं, धारय ते मनः स्थिरतरं श्रद्धाधनाद्याश्रयः ॥१४२॥

तत्-पदलक्ष्यार्थ की जिज्ञासा (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

इत्युक्ते गुरुणा स पृच्छति पुनस्त्वंशब्दलक्ष्यं मम
ज्ञातं न्यायबलेन पूर्वमुदितावस्थात्रयापोहनात् ।
तच्छब्देन तु लक्ष्यमर्थमधुना बोद्धुं मनो मामकं
धावत्याशु तमप्यपोह्य सकलद्वैतप्रपञ्चं वद ॥१४३॥

जिज्ञासा का विभागपुरस्सर वर्णन(वसन्ततिलका छन्द)

किं सप्रपञ्चमिदमस्त्वथ वा समस्तद्वैतप्रपञ्चरहितं परिपूर्णरूपम् ।
यद्वोभयात्मकमिदं परमार्थतोऽस्तु विष्णोः परं पदमितीह विचारणीयं ॥१४४॥

संशय के कारणों का वर्णन (वसन्ततिलका छन्द)

वेदान्तवाक्यगतिरत्र बहुप्रकारा काचित्कथञ्चिदिति संशय उत्थितो मे ।
तत्त्वं प्रकाशय निवर्तय मोहमूलं मत्संशयं मम हिताय भव प्रसीद ॥१४५॥

तत्-पदलक्ष्यार्थ का निर्णय (उपजाति छन्द)

न स्थानतोऽप्यस्ति परस्य कश्चिद् विशेषयोगः परमार्थरूपः ।
स्वतः पुनर्दूरनिरस्त एव परस्य तत्त्वस्य विशेषयोगः ॥१४६॥

सप्रपञ्च ब्रह्मबोधक श्रुतियों की व्यवस्था (उपेन्द्रवज्रा छन्द)

स्वभावतश्चिद्घनविग्रहस्य मृषा ह्युपाधिप्रभवा विशेषाः ।
यथा जपापुष्पनिबन्धनः स्यान् मृषा मणेर्लौहितिमा तथैव ॥१४७॥

ब्रह्म में ईश्वरत्व और प्रत्यगात्मा में जीवत्व भी आध्यासिक ही है (शालिनी छन्द)

मायोपाधेरद्वयस्येश्वरत्वं कार्योपाधेर्जीवता च प्रतीचः ।
मिथ्यैव स्याद् बन्धुजीवप्रसूनसंपर्कोत्था रक्ततेवाभ्रकादेः ॥१४८॥

उक्त व्याप्ति में उत्थापित व्यभिचार का वर्णन (वसन्ततिलका छन्द)

भल्लातकादिरसयोगनिबन्धनं च वस्त्रे कलङ्कितमनेन यथा निरस्तम् ।
तस्यापि पक्षपतितत्वमभीष्टमेव तस्मादसौ न भवति व्यभिचारभूमिः ॥१४९॥

कर्तृत्वादि की औपाधिकता श्रुति एवं दृष्टान्त से सिद्ध है (शालिनी छन्द)

यथा ह्ययं ज्योतिरात्मा विवस्वानपो भिन्ना बहुधैकोऽनुगच्छन् ।
उपाधिना क्रियते भेदरूपो देवः क्षेत्रेष्वेवमजोऽयमात्मा ॥१५०॥

अग्रिम छः श्लोकों द्वारा मतान्तर-उपदर्शनपूर्वक ब्रह्म में मायोपाधिक ऐश्वर्य का निरूपण (वसन्त)

ऐश्वर्यमस्य परमात्मन उक्तमन्यैः साक्षात् स्वरूपमवबोधसुखादितुल्यम् ।
तेनेशते किल यथायथमीशितव्यान् भृत्यान् प्रतीश्वरतया जगतीभृतोऽपि ॥१५१॥

उक्त दृष्टान्त का स्पष्टीकरण (वसन्ततिलका छन्द)

नित्यं प्रियादिषु सुखं प्रतिबिम्बितं सल्लोके वदन्ति विषयेन्द्रियसंप्रयोगात् ।
उत्पन्नमन्यदिति तद्वदिहेश्वरत्वं मायातदुत्थमतिषु प्रतिबिम्बितं सत् ॥१५२॥

ऐश्वर्य में निरतिशयत्व एवं सातिशयत्व का उपपादन (वसन्ततिलका छन्द)

मायानिविष्टवपुरीश्वरबोध एष सर्वेश्वरो भवति सर्वमपेक्षमाणः ।
बुद्धिप्रविष्टवपुरेष तथेश्वरः स्यादात्मीयभृत्यजनवर्गमपेक्षमाणः ॥१५३॥

श्रुति द्वारा भी परमात्मा में स्वतः ऐश्वर्य का उपपादन (शालिनी छन्द)

सम्यग्ज्ञानध्वस्तसर्वप्रपञ्चः स्वीये रूपे निर्गुणे निर्विशेषे ।
पूर्णैश्वर्ये स्वप्रकाशस्वभावे स्वाराज्येऽस्मिन् स स्वराडेव तिष्ठेत् ॥१५४॥

उक्तार्थ में श्वेताश्वतर श्रुति भी प्रमाण है(शालिनी छन्द)

ज्ञात्वा देवं सर्वपाशापहानिः क्षीणैः क्लेशैर्जन्ममृत्युप्रहाणिः ।
तस्याभिध्यानात्तृतीयं देहभेदे विश्वैश्वर्यं केवल आप्तकामः ॥१५५॥

उक्तार्थ में छान्दोग्य श्रुति भी प्रमाण है (रथोद्धता छन्द)

स स्वराडिति च विद्यते श्रुतिर्वर्णितेश्वरवपुःप्रकाशिनी ।
तेन सत्यसुखबोधवद् भवेदीश्वरत्वमिति केचिदूचिरे ॥१५६॥

पूर्वोक्त मत का खण्डन (रथोद्धता छन्द)

तन्न भाति चतुरस्रमुच्चकैस्तत्प्रमाणविरहादिह श्रुतौ ।
सत्यबोधसुखवन्न तत्परा सत्युवाच यत ईश्वरश्रुतिः ॥१५७॥

माण्डूक्यादि श्रुतियों का तात्पर्य अन्य ही है (रथोद्धता छन्द)

तत्परश्रुतिवचःप्रमाणकं सत्यबोधसुखविग्रहं परम् ।
ब्रह्म तद्वदिह नेश्वरत्वभाक् तत्परश्रुतिवचःप्रमाणकम् ॥१५८॥

महावाक्यार्थ-बोध करानें में श्रुतिवाक्यों का तात्पर्योपपादन (रथोद्धता छन्द)

या फलश्रुतिरिहोपवर्णिता सा न तत्परतयाऽवगम्यते ।
तत्त्वमादिवचनं हि तत्परं तत्परा न तु फलश्रुतिः क्वचित् ॥१५९॥

फलश्रुति को यथार्थ मानने पर अतिप्रसङ्गापत्ति (रथोद्धता छन्द)

सामगानमपि तत्स्वरूपतां जक्षणं च जगतश्च सर्जनम् ।
अश्नुवीत फलवाक्यतः श्रुतं तत्स्वरूपमिति यद्युपेयते ॥१६०॥

श्रुत्यन्तराविरुद्ध अर्थवादवाक्यों का ही केवल स्वार्थ में तात्पर्य माना गया है (रथोद्धता छन्द)

अर्थवादगतमभ्युपेयते न प्रमान्तरविरोधि यन्मतम् ।
सामगानमथ जक्षणादि वा तत्परश्रुतिविरुद्धमिष्यते ॥१६१॥

श्रुत्यन्तर से ऐश्वर्यसत्ता का निषेध (रथोद्धता छन्द)

ईश्वरत्वमपि तत्परश्रुतिर्नेतिर्नेति परिदुःखिता सती।
वारयत्यवशिनष्टि केवलं चित्स्वरूपमनवद्यविग्रहम् ॥१६२॥

निरुपाधिक ऐश्वर्याभाव का उपपादन (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

सोपाधीश्वरतानिषेधनपरा सा नेतिनेति श्रुतिः
साक्षाद् भागवतं निरस्तनिखिलोपाधिस्वरूपं पुनः।
विश्वैश्वर्यमिहोच्यमानमधुना मोक्षे ततस्तत्परै-
र्वाक्यैरस्य विरुद्धतानवसरो मुख्यं ततो गृह्यताम् ॥१६३॥

उक्त शङ्का का निराकरण(रथोद्धता छन्द)

सामगानमथ जक्षणं जगत्सर्जनं च निरुपाधि गृह्यताम्।
नेतिनेति वचसा निषिध्यते जक्षणादिकमुपाधिसंश्रयम् ॥१६४॥

ऐश्वर्य में द्वैविध्याभाव का उपपादन (रथोद्धता छन्द)

सामगानमथ जक्षणं जगत्सर्जनं च न खलु द्विधेष्यते ।
तत्प्रमाणविरहादिहेति चेदीश्वरत्वमपि न द्विधा भवेत् ॥१६५॥

ज्ञानादि में ब्रह्मरूपता की सिद्धि (रथोद्धता छन्द)

ज्ञानमस्ति खलु बाह्यगोचरं निर्विशेषमविनाशि च द्विधा ।
बाह्यगोचरमपोह्य केवला स्वापमोक्षसमये चितिः स्थिता ॥१६६॥

ज्ञान के द्वैविध्य में श्रुतिप्रमाण (वसन्ततिलका छन्द)

पश्यन्नपश्यतिगिरा कथयांबभूव साक्षादनश्वरविनश्वरचिद्विभागम् ।
तात्पर्यतः श्रुतिवचः स्फुटमेव नैवमैश्वर्यवस्तुनि विभागवचःश्रुतिर्नः ॥१६७॥

सुख का द्वैविध्य भी श्रुतिसिद्ध है (वसन्ततिलका छन्द)

एवं न वा अर इति श्रुतमेव तावत् पुत्राद्युपाधि पुरुषस्य सुखं विनाशि ।
नित्यं निरन्तरमनन्तमपारमुक्तं ब्राह्मं सुखं वचनकोटिशतैश्च यत्नात् ॥१६८॥

ऐश्वर्य का द्वैविध्य श्रुतिसिद्ध नहीं है(वसन्ततिलका छन्द)

ऐश्वर्यवर्णनमिह द्विविधं न वेदे नित्यं क्वचित् क्वचिदनित्यमिति प्रतीमः ।
ऐश्वर्यमात्रकथनं पुनरस्ति मोक्षादर्वाक्षु मोक्षसमये च न तत्परं तत् ॥१६९॥

उक्तार्थ का उपपादन (द्रुतविलम्बित छन्द)

प्रियशिरस्त्वकथा खलु यादृशी भवति तादृशमेव तदीरणम् ।
तदनु नेति च नेतिवचःश्रुतेर्यदपि मोक्षगतं स्तुतये हि तत् ॥१७०॥

ब्रह्मार्थ के लिये ईश्वर शब्द का प्रयोग गौण है(वसन्ततिलका छन्द)

स्वातन्त्र्यमीश्वरगिरा गुणमार्गवृत्तिमाश्रित्य पूर्वगुरवः प्रतिपादयन्ति ।
सिंहस्य शौर्यगुणवत् परमेश्वरस्य स्वातन्त्र्यलक्षणगुणोऽव्यभिचारिरूपः ॥१७१॥

निर्गुण ब्रह्म में स्वातन्त्र्यरूप गुण का रहस्योपपादन (वसन्ततिलका छन्द)

ऐश्वर्यवस्तु परिगृह्य तदत्यजन्तः सामर्थ्यसिद्धिमुपपादयितुं क्वचिच्च ।
सर्वेश्वरश्रुतिवचः समुदाहरन्ति स्वातन्त्र्यलक्षणगुणस्य तमस्विातायाम् ॥१७२॥

निर्गुण में अज्ञानावस्था के गुणों का रहस्योपपादन (वसन्ततिलका छन्द)

सिंहश्रुतिर्न घटते यदि शूरताऽस्य न स्यात्तथैव परमेश्वरताश्रुतिश्च ।
नैश्वर्यलक्षणगुणः परमात्मनश्चेदित्यर्थलब्धिममभिसंदधते महान्तः ॥१७३॥

अर्थापत्ति प्रमाण से प्राप्त स्वातन्त्र्य गुण में भी वैदिकत्व का उपपादन(वसन्ततिलका छन्द)

श्रौतार्थवृत्तिबललभ्यमपीह वस्तु श्रौतं वदन्ति निकटत्वमनुस्मरन्तः ।
आसन्नवृष्टिमपि देवमुदीरयन्ति वर्षन्तमेव हि जना भुवि तादृगेतत् ॥१७४॥

सूत्रकार के मतानुसार स्वाभाविक ऐश्वर्य का रहस्योद्घाटन (उपजाति छन्द)

ऐश्वर्यमज्ञानतिरोहितं सद् ध्यानादभिव्यज्यत इत्यवोचत् ।
शरीरिणः सूत्रकृदस्य यत्तु तदभ्युपेत्योदितमुक्तहेतोः ॥१७५॥

ब्रह्म में स्वाभाविक ऐश्वर्यबोधक प्रमाण का अभाव (सुन्दरी छन्द)

अथ वा चितिवत् प्रतीयतां पुरुषस्येश्वरतापि वास्तवी ।
यदि किंचन कारणं भवेन्न विना सा तदिहाभ्युपेयते ॥१७६॥

सूत्रकारोक्ति अभ्युपगमवाद पर आश्रित है(वसन्ततिलका छन्द)

कामादि तत्र च भवेदितरत्र चेति यत् सूत्रकारवचनं तदुदीक्षमाणाः।
कामादिकेन दहरस्थगुणेन तुल्यं सर्वेश्वरादिगुणजातमिति प्रतीमः ॥१७७॥

सगुण विद्या के सत्यकामत्वादि गुणों का निर्गुण विद्या में स्तावकरूप से उपसंहार किया गया है (सुन्दरी छन्द)

दहरस्थगुणोपसंहृतेः स्तुतिमात्रं विरहय्य नापरम्।
फलमस्ति परात्मनिष्ठिते वचने वाजिभिरादृते महत् ॥१७८॥

सत्यकामत्वादि गुणों के समान अन्य श्रौत पदार्थ को भी परमात्मस्वरूप नहीं मान सकते (सुन्दरी)

दहरादुपसंहृतैर्गुणैः सदृशाश्चेद् वशितादिलक्षणाः।
न तदा परमात्मरूपतां प्रतिपत्तुं कलयाऽपि शक्नुयुः ॥१७९॥

वैसा ही यहाँ पर भी दिखलाते हैं (सुन्दरी छन्द)

परमेश्वरतागुणोऽप्यतः स्तुतये तस्य परस्य वस्तुनः।
परिकीर्तित इत्युपेयतामविशेषाद् वशितादिलक्षणैः ॥१८०॥

पूर्ववादी के कथनानुसार कारणत्वादि में भी परमात्मस्वरूपापत्ति माननी पड़ेगी (रथोद्धता छन्द)

कारणत्वमपि चित्सुखादिवत्तत्स्वरूपमिति किं न गृह्यते ।
ईश्वरत्वविषये विपश्चितां पक्षपातकरणे न कारणम् ॥१८१॥

वादी के कथनानुसार साक्षित्व को भी परमात्मस्वरूप मानना पडेगा (रथोद्धता छन्द)

साक्षिताऽपि परमात्मनो भवेदीश्वरत्ववदियं न संशयः ।
नित्यसिद्धनिजबोधरूपवद्रूपमेव निरुपाधिकं विभोः ॥१८२॥

ऐश्वर्य एवं साक्षित्व में श्रुति द्वारा आत्मधर्म का उपपादन(शालिनी छन्द)

एको देवः सर्वभूतेषु गूढः सर्वव्यापी सर्वभूतान्तरात्मा ।
कर्माध्यक्षः सर्वभूताधिवासः साक्षी चेता केवलो निर्गुणश्च ॥१८३॥

सापेक्ष कारणत्वादि धर्मस्वरूप नहीं हो सकते(उपजाति छन्द)

न तस्य कार्यं कारणं च विद्यते न तत्समश्चाभ्यधिकश्च दृश्यते ।
परास्य शक्तिर्विविधैव श्रूयते स्वाभाविकी ज्ञानबलक्रिया च ॥१८४॥

श्रुत्यन्तर से उक्त कारणत्वादि का प्रतिपादन (उपेन्द्रवज्रा छन्द)

न तस्य कश्चित् पतिरस्ति लोके न चेशिता नैव च तस्य लिङ्गम् ।
स कारणं वै करणाधिपाधिपो न चास्य कश्चिज्जनिता न चाधिपः ॥१८५॥

उद्धृत श्रुतियों का तात्पर्यप्रदर्शन(उपजाति छन्द)

इति श्रुतिः कारणसाक्षिभावमैश्वर्यवद् वक्ति परस्य पुंसः ।
अतत्परत्वान्न तदिष्यते चेद् द्वयं तृतीयं न तथैषितव्यम् ॥१८६॥

उक्त कारणत्वादि तीनों धर्मों की प्रतिपादक श्रुतियाँ एक जैसी हैं (उपेन्द्रवज्रा छन्द)

अतत्परत्वं श्रवणस्य तुल्यं त्रिषु त्रयं तेन विवर्जनीयम् ।
अथेष्टमेकं त्रयमेषितव्यं विशेषहेतोरनिरूपणेन ॥१८७॥

ऐश्वर्य के मिथ्या होने में सापेक्षत्व हेतु (रथोद्धता छन्द)

ईशितव्यमनपेक्ष्य नेश्वरो नेशितव्यमपि तद्वदीश्वरम् ।
अन्तरेण घटते ततो मृषा मोहमात्रपरिकल्पितं द्वयम् ॥१८८॥

कारणत्व भी ऐसा ही है (रथोद्धता छन्द)

कार्यवस्तु विरहय्य कारणं न क्वचिद् घटयितुं क्षमेमहि ।
नापि कारणमपोह्य केवलं कार्यवस्तु परिकल्पयेमहि ॥१८९॥

साक्षित्व भी सापेक्ष है (रथोद्धता छन्द)

साक्ष्यवस्तु परिहृत्य साक्षिता साक्षिणं च परिहृत्य साक्ष्यता ।
नेष्यते न घटते च तेन तत् सव्यपेक्षमुभयं परस्परम् ॥१९०॥

उक्त न्यायानुरूप प्रमातृत्वादि भी हैं (रथोद्धता छन्द)

न प्रमेयमपहाय मातृता नापि मातृविरहे प्रमेयता ।
मातृमेयरहिता न च प्रमा न प्रमाणरहितं प्रमाफलं ॥१९१॥

कर्तृत्व भी सापेक्ष ही है (रथोद्धता छन्द)

कर्तृ कर्म परिहृत्य नेष्यते कर्म कर्तृरहितं न च क्वचित् ।
कर्तृकर्मरहिता न च क्रिया न क्रियाविरहितं क्रियाफलम् ॥१९२॥

सामान्य विशेषस्वरूप प्रपञ्च में भी सापेक्षत्व है (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

सामान्यं न विशेषवस्तुविरहे तस्माद् विना तन्न च
स्वातन्त्र्येण घटामुपाञ्चति ततः सापेक्षमेतद् द्वयम् ।
यत् सापेक्षमिहेक्षितं भवति तन्मायामयं स्वप्नव-
त्तस्मादीश्वरतादि कल्पितवपुः स्वीकुर्महे न्यायतः ॥१९३॥

ब्रह्म में सप्रपञ्चत्व का निराकरण निष्प्रपञ्चत्व सिद्ध किया गया , अब उभयरूपत्व का निराकरण करते हैं (उपेन्द्रवज्रा छन्द)

अभिन्नता भिन्नतया विरुद्धा विभिन्नताऽभिन्नतया तथैव ।
उपाधिभेदे परिकल्पितेऽपि विना पुनस्तं किमुदीरणीयम् ॥१९४॥

भेदरहित आकाशादि में औपाधिक भेद परमार्थतः सिद्ध नहीं होता (उपेन्द्रवज्रा छन्द)

स्वभावतो यन् मिथुनं विरुद्धं न तन्निमित्तान्तरतः कदाचिद् ।
उपैति सख्यं परमार्थवृत्त्या भ्रमादलभ्यं न च किंचिदस्ति ॥१९५॥

उक्तार्थ में दृष्टान्तप्रदर्शन(द्रुतविलम्बित छन्द)

न रविशार्वरसख्यकृदीक्ष्यते जगति कश्चिदुपाधिरमोहतः।
यदि भवेत् स भवेद् भवतो मतः स न भवेद् यदि सोऽपि न सम्भवेत् ॥१९६॥

भ्रम से सब कुछ सम्भव है, इसका स्पष्टीकरण (द्रुतविलम्बित छन्द)

खमपि खादति खण्डितमीक्षते निजशिरो नयनेन करार्पितम्।
किमपि दुर्घटमस्य न विद्यते यदि विमूढमतिर्भवति स्वयम् ॥१९७॥

आरम्भणाधिकरण में कहे गये न्याय से भी ब्रह्म निर्विशेष ही सिद्ध होता है (उपेन्द्रवज्रा छन्द)

इतश्च निर्भेदकमात्मतत्त्वं निरूपणे कारणकार्यतादेः।
अनादिमायैकनिबन्धनत्वादसम्भवादस्य तु वस्तुवृत्त्या ॥१९८॥

कार्यकारणभाव की असम्भावना का प्रदर्शन (उपजाति छन्द)

असन्न कार्यं गगनप्रसूनवन्ध्यासुतादेः करणाप्रसिद्धेः।
न प्रागसत् कार्यमिति प्रवादः प्रशस्यते तस्य विरोधहेतोः ॥१९९॥

युक्तिविरोध का प्रदर्शन (उपजाति छन्द)

विशेषणानामसति प्रवृत्तिर्न दृश्यते क्वापि न युज्यते च ।
युधिष्ठिरात् प्रागभवन्नरेन्द्रो वन्ध्यासुतः शूर इतीह यद्वत् ॥२००॥

असत् की उत्पत्ति का कथन असम्भव है (उपजाति छन्द)

उत्पत्तिरप्यस्य निरूप्यमाणा न काचिदागच्छति युक्तिमार्गम् ।
स्वसत्तया स्वैः समवायिकारणैरपीह या स्यात् समवायिताऽस्य ॥२०१॥
असज्जनिः सैत्युपवर्ण्यमानं सुदुर्घटं न ह्यसतो युजैभिः ।
सदेव सद्भिः सह सर्ववस्तु सङ्गच्छते न त्वसदेव सद्भिः ॥२०२॥

सर्वत्र सत्पदार्थों का सम्बन्ध प्रदर्शन (उपजाति छन्द)

सती हि सत्ताऽस्य पटस्य दृष्टा तथैव सन्तः पटतन्तवोऽपि ।
तथा च तैश्चास्य कथं पटस्य सम्बन्धिता स्यादसतो वदैतत् ॥२०३॥

वैशेषिकों के उक्त पक्ष में क्षति का प्रदर्शन (उपेन्द्रवज्रा छन्द)

स्वकारणैस्तन्तुभिरेवमस्य स्वसत्तया चान्वय एव जन्म।
तवेष्टमेवं सति जन्म तस्य न शक्यते वर्णयितुं पटस्य ॥२०४॥

उत्पत्ति से पूर्व पट असत् और उत्पत्ति के पश्चात् पट सत् ,ऐसा कथन भी अनादरणीय है(उपजाति

तदन्वयात् प्रागसतः कथं स्यात्तदन्वयो न ह्यसदन्वयाय।
सता समर्थं न हि वन्ध्यया तत्पुत्रः समन्वेति कदाचिदत्र ॥२०५॥

जन्म का अन्य भी कोई निर्वचन सम्भव नहीं है (प्रमिताक्षरा छन्द)

न च किंचिदन्यदसतो वदितुं पटवस्तुनोऽत्र शकनीयमितः।
जनिशब्दवाच्यमनवद्यतया तदयुक्तमेवमसदुद्भवनम् ॥२०६॥

जन्म का लक्षण कुछ और करने पर अपसिद्धान्तापत्ति (प्रमिताक्षरा छन्द)

न च वर्णितादपरमत्र भवाननुमन्यते जनिवचोऽर्थमितः।
यदि वर्ण्यते किमपि तत्र भवेत् स्वमतप्रहाणमलिनीकरणम् ॥२०७॥

सूत्रकार महर्षि कणाद ने भी इससे भिन्न जन्म शब्द का अर्थ नहीं किया है(प्रमिताक्षरा छन्द)

समवायिकारणगणेन तथा सह सत्तया च पटवस्त्विह यत् ।
समवैति तत् कणभुगिच्छति तज्जनिशब्दवाच्यमिति नान्यदितः ॥२०८॥

पूर्वोक्त पक्ष का निर्वहन असम्भव है (प्रमिताक्षरा छन्द)

न तदत्र संभवति युक्तिवशादुपवर्णितं तदतिविस्तरतः ।
न च किंचिदन्यदुचितं भवतो वदितुं स्वपक्षमपरित्यजतः ॥२०९॥

असत्कार्यवाद निराकरण का उपसंहार (उपजाति छन्द)

निरूपणायां न यतोऽस्ति कश्चिदुत्पत्तिशब्दार्थ इह त्वदीये ।
पक्षे ततो दुर्घटताप्रसिद्धिरसज्जनेरुक्तनयेन तावत् ॥२१०॥

सत्कार्यवाद का भी निराकरण (उपेन्द्रवज्रा छन्द)

सतोऽपि कार्यत्वमयुक्तमेव निरूपणे कारणकृत्यहानेः ।
न कारणव्यापृतिरत्र शक्या सतः स्वरूपे वदितुं फलाय ॥२११॥

सत्कार्यवाद में गुणाधान पक्ष भी असङ्गत है (उपेन्द्रवज्रा छन्द)

गुणं क्षिपत् कारणमर्थवत्त्वं लभेत चेन्नात्र गुणस्य भावात् ।
न चेद् गुणोऽसत्करणं प्रसक्तं निरर्थकं कारणकर्म तस्मात् ॥२१२॥

अभिव्यक्ति पक्ष का निराकरण (उपेन्द्रवज्रा छन्द)

मलं निरस्यार्थवदिष्यते चेन् मलोऽपि सन्नैव निरस्य ईष्टः ।
सतोऽविनाशादसतोऽजनेश्च वृथा ततः कारणमत्र पक्षे ॥२१३॥

उक्त तृतीय पक्ष-निराकरण का स्पष्टीकरण (उपजाति छन्द)

तस्मादभिव्यक्तिकरी न हेतुप्रवृत्तिरत्रार्थवती घटेत ।
न चानभिव्यक्तिनिराससृत्या तस्मान्न सत्कार्यवचः प्रशस्तम् ॥२१४॥

सत्कार्यवाद में दोषान्तरापत्ति (वसन्ततिलका छन्द)

नित्या च कारकगणस्य सती प्रवृत्तिर्नित्यं व्यनक्ति सकलं फलमित्यवश्यम् ।
वक्तव्यमत्र न लयो न सुषुप्तिमूर्च्छे नो चेन्न सृष्टिरिति कष्टमुपस्थितं वः ॥

वेदान्त मत में उक्त आपत्ति का अभाव (वसन्ततिलका छन्द)

वेदान्तवादिसमयेऽपि समानमेतच्चोद्यं परैर्न खलु वाच्यमिहाप्रसक्तेः ।
अस्मन्मते न खलु संव्यवहारमात्रे मायामये किमपि दूषणमस्ति यस्मात् ॥२१६॥

वेदान्त मत में सत्कार्यवादपक्षीय दोषाभावप्रदर्शन(वसन्ततिलका छन्द)

आत्रेयवाक्यमपि संव्यवहारमात्रं कार्यं समस्तमिति नः कथयाम्बभूव ।
सत्कार्यवादविषयो न हि दोषराशिर्मायामये भवितुमुत्सहते विरोधात् ॥२१७॥

वेदान्त मत में असत्कार्यवादपक्षीय दोष की भी अप्राप्ति (वसन्ततिलका छन्द)

काणाददर्शनसमाश्रयदोषराशिर्दूरान्निरस्त इह संव्यवहारमात्रे ।
वेदान्तभूमिकुशलो मुनिरत्रिवंश्यस्तेनाह कार्यमिह संव्यवहारमात्रम् ॥२१८॥

दृष्टान्त द्वारा सांव्यावहारिक पक्ष का समर्थन (वसन्ततिलका छन्द)

षष्ठप्रपाठकनिबद्धमुदीरितं यत्तत् सत्यमेव खलु सत्यसमाश्रयत्वात् ।
तत्रैव यत् पुनरुवाच समुद्रफेनदृष्टान्तपूर्वकमदो व्यवहारदृष्ट्या ॥२१९॥

वहाँ पर परिणामवाद तात्पर्यतः विवर्तवाद को ही बतलाता है (वसन्ततिलका छन्द)

पूर्वं विकारमुपवर्ण्य शनैःशनैस्तद्दृष्टिं विसृज्य निकटं परिगृह्य तस्मात् ।
सर्वं विकारमथ संव्यवहारमात्रमद्वैतमेव परिरक्षति वाक्यकारः ॥२२०॥

भाष्यकार के वचनों से भी ऐसा ही निश्चित होता है (वसन्ततिलका छन्द)

अर्न्तगुणा भगवती परदेवतेति प्रत्यग्गुणेति भगवानपि भाष्यकारः ।
आह स्म यत्तदिह निर्गुणवस्तुवादे सङ्गच्छते न तु पुनः सगुणप्रवादे ॥२२१॥

मायावाद के दाढर्य में अन्य तर्क भी है (द्रुतविलम्बित छन्द)

न खलु कारणकार्यसमन्वयो भवति जातु चिदत्र विभिन्नयोः ।
किमिह सागरसह्यसमाश्रयो भवति कारणकार्यसमन्वयः ॥२२२॥

सर्वथा अभिन्न पदार्थों का भी कार्य-कारण भाव नहीं घटता (द्रुतविलम्बित छन्द)

न च तथायमभिन्नसमाश्रयो भवितुमुत्सहतेऽनभिवीक्षणात् ।
न हि घटो विदधाति घटं क्वचिन्न च पटः पटमित्थमनीक्षणात् ॥२२३॥

सव्यापार में कार्यजनकत्व का निराकरण (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

कुर्वत्कारणपक्षमाश्रितवतः कुर्वच्च कुर्वत्कृतं
तत्कुर्वच्च तथाविधान्यकृतमित्येषाऽनवस्था भवेत् ।
कुर्वद्रूपमकार्यमिष्टमिति चेन्नित्यं जगज्जायतां
नित्यं मा जनि वा विशेषविरहादेतत् समस्तं जगत् ॥२२४॥

कुर्वद्रूप को कार्य न मनाने पर भी दोष आता ही है (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

सर्वं सर्वसमुद्भवाय घटते कुर्वन्न चेत् कारणं
न ह्यस्मिन् क्वचिदस्ति कस्यचिदपि व्यापारवत्ता यतः ।
तस्मात् कारणकार्यतादि सकलं मायामयं तत्त्वतो
नासीदस्ति भविष्यतीति सकलं चैतन्यशेषं महत् ॥२२५॥

कारण एवं कार्य की व्यवस्था में शक्तिकल्पना भी निरर्थक ही है (द्रुतविलम्बित छन्द)

सकलशक्तिविकल्पनयान्वये सकलशक्यविकल्पनयान्वयः ।

सकलशक्यविकल्पनयान्वये सकलशक्तिविकल्पनयोन्वयः ॥२२६॥

इति परस्परसंश्रयता यदा वद कथं जगतः परमार्थता ।
यदि पुनर्जगतोऽपरमार्थता परममस्ति पदं परमात्मनः ॥२२७॥

पूर्वोक्त जगत में मायामयता की सिद्धि (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

चिच्छक्तिः परमेश्वरस्य विमला चैतन्यमेवोच्यते
सत्यैवास्य जडा परा भगवतः शक्तिस्त्वविद्योच्यते ।
संसर्गाच्च मिथस्तयोर्भगवतः शक्त्योर्जगज्जायते-
ऽसच्छक्त्या सविकारया भगवतश्चिच्छक्तिरुद्रिच्यते ॥२२८॥

उक्त सिद्धान्त में विद्वानों का ऐकमत्य नहीं है (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

इत्येवं कथयन्ति केचिदपरे श्रद्धालवस्तत् पुनः
कस्यांचिद् भुवि संमतं च विदुषां नेष्टं तु भूम्यन्तरे ।

[1]कर्मोपास्तिविधानभूमिषु [2]तथा [3]सत् [4]संमतं [1]निर्गुणे
[2]तत्त्वे [6]तत् [3]परवेदवाक्यविषये [4]त्वा[5]लोचिते [7]ने[8]ष्यते ॥२२९॥

वेदान्त समीक्षा का प्रकारदर्शन (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

[1]मूर्त्तामूर्त्ततदुत्थलिङ्गपुरुषव्यामिश्रभूता [2]चिति-
[3]र्वीप्सापूर्वकनेतिनेतिवचनप्रध्वस्तसर्वद्वया ।
[4]संपूर्णे [5]परमे [6]सुखे [7]परिहृताशेषे [9]शिवे [8]शाश्वते
[10]नित्ये [11]शुद्धमहिम्नि [12]तायिनि [13]परे [14]भू[15]म्न्यक्षरे [16]तिष्ठति ॥२३०॥

जगत् की मायामयता में कुछ अन्य युक्तियों का प्रदर्शन (उपेन्द्रवज्रा छन्द)

[1]जगन्महिम्ना [3]न [2]जगत्प्रसिद्धिर्[1]न [2]चिन्महिम्ना[3]ऽपि [4]जगत्प्रसिद्धिः ।
[1]न [2]च [3]प्रमाणा[4]ज्जगतः [5]प्रसिद्धिस्[1]त[2]तोऽस्य [3]मायामयताप्रसिद्धिः ॥२३१॥

उक्त तीनों में जगत के अप्रकाशकत्व के कारण का प्रदर्शन (उपेन्द्रवज्रा छन्द)

[1]जडत्वहेतो[3]र्न [2]जगन्महिम्ना [1]न [2]चिन्महिम्ना [3]तदसंङ्गभावात् ।

न च प्रमाणात्तदकारत्वात् कृतस्य जाडयादजडाऽजनेश्च ॥२३२॥

चेतन की असङ्गता का स्पस्टीकरण (वंशस्थ छन्द)

न सङ्करो नापि च संयुतिस्तयोर्न चास्ति तद्वत् समवायसम्भवः।
ततो न चिच्चेत्यसमन्वयं प्रति प्रतीयते काचन मूलसङ्गतिः ॥२३३॥

योग्यता पक्ष में भी दोषप्रसक्ति (वंशस्थ छन्द)

न योग्यतामात्रनिबन्धनो भवेज्जडात्मनोरत्र विवक्षितोऽन्वयः।
तदा हि तस्या अनपायिरूपतः सदाऽऽत्मनः स्यादनपायिसंसृतिः ॥२३४॥

परिशेष न्याय से वेदान्तमत में आध्यासिक सम्बन्ध की सिद्धि (वंशस्थ छन्द)

ततो वियन्मुख्यमदो जगज्जडं चिदात्मनोऽस्यैव विवर्त्त इष्यताम्।
अनाद्यविद्यापटसंवृतात्मनस्तदोपलभ्यत्वममुष्य कल्प्यते ॥२३५॥

वेदान्त सिद्धान्त में उत्थापित आक्षेप का समाधान (वसन्ततिलका छन्द)

संवित्तिभेदतदभावतदीयजन्मनाशादयो न खलु मानबलेन लभ्याः।

2Pb

न ह्यस्ति मानमिह किंचन तद् यदस्या धर्मस्वरूपविषयीकरणे समर्थम् ॥२३६।

कूटस्थ संवित् में परमार्थतः प्रमाणजन्यत्वाभाव का प्रदर्शन (वसन्ततिलका छन्द)

तस्मान्न मानफलता निरुपाधिकस्य संवेदनस्य घटतेऽविषयत्वहेतोः ।
एवं च मानफलसिद्धिसमन्वयेन सिद्धिर्जडस्य जगतो न कदाचिदस्ति ॥२३७॥

आध्यासिक संबन्ध ही संवित् एवं जगत् का साधक है (प्रमिताक्षरा छन्द)

इतरेतराध्यसनमस्त्वनयोरुभयोरतो दृगदृशोरनिशम् ।
अपरस्परव्यतिकरानुभवादिह शुक्तिकारजतविभ्रमवत् ॥२३८॥

अन्योन्याध्यास पक्ष में शून्यत्वाक्षेप का परिहार (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

संसिद्धा सविलासमोहविषये वस्तुन्यधिष्ठानगी-
र्नाधारेऽध्यसनस्य वस्तुनि ततोऽस्थाने महान् संभ्रमः ।
केषांचिन् महतामनूनतमसां पाण्डित्यगर्वादय-
मन्योन्याध्यसने निरास्पदमिदं शून्यं जगत् स्यादिति ॥२३९॥

शून्यवादप्रसक्ति का निवारण निम्नांकित प्रकार से करते हैं (द्रुतविलम्बित छन्द)

[1]कृपणमध्यमपक्वधियां [2]नृणां [3]मतिविलासविधात्रितयं [4]क्रमात् ।
[5]परिणति[6]र्बहुजीवतमस्विता [7]परमपुंसि [8]तमःपरिकल्पना ॥२४०॥

पूर्वोक्त क्रम को प्रमाणित किया जाता है (द्रुतविलम्बित छन्द)

[1]श्रुतिवचांसि [2]मुनिस्मरणानि [3]च [4]द्वयविशारदगी[5]रपि [6]सर्वशः ।
[7]त्रयमपेक्ष्य [8]विधात्रितयं [9]विना [12]न [13]हि [11]घटा[14]मुपयान्ति [10]कदाचन ॥२४१॥

पूर्वोक्त दृष्टियाँ एक पुरुष में भी घट सकती हैं (द्रुतविलम्बित छन्द)

[2]पुरुष[1]मेक[3]मपेक्ष्य [4]च [8]भूमिकात्रितय[9]मस्ति [6]पुरोदित[7]मेव [5]तत् ।
[1]तदनुसारवशा[2]दखिलश्रुतिस्मृतिवचांसि [3]वयं [4]घटयामहे ॥२४२॥

सूत्रकार के मतसे भी ऐसा ही निश्चित होता है (द्रुतविलम्बित छन्द)

[8]परिणतिं [10]च [9]विवर्तदशाद्वयं [7]स्थित[10]मनुक्रमतः [6]श्रुतिशासने ।
[11]अनुशशास [5]मुनिप्रवरः [4]सुधीः [2]पुरुषबुद्धि[3]मपेक्ष्य [1]यथाक्रमम् ॥२४३॥

परिणामवाद एवं चिचर्तवाद में वेदगत पौरुषेयत्वापत्ति का आक्षेप (मालिनी छन्द)

यदि परिणतिरेषा चिद्विवर्तोऽथ वा स्याद् भवति ननु तदानीं वेदशास्त्रे विरोधः
न हि खलु कृतकत्वेऽपौरुषेयत्वहेतुर्भवितुमलमियं नो मानता स्वप्रयुक्ता ॥२४४।

वेद पौरुषेयत्व पक्ष में दो ही मार्ग दीखते हैं (मालिनी छन्द)

कणभुगभिमतिर्वा कल्पनीया तदानीं
सुरगुरुमतमेवोपास्यमाहोस्विदुच्चैः ।
इति निपतति चोद्यं ब्रह्मणो विश्वसृष्टि-
र्यदि भवति न चेद् वो नित्यमायाति विश्वम् ॥२४५॥

वेद में पौरुषेयत्व आक्षेप का निराकरण (मालिनी छन्द)

ननु सदृशमिदं वश्चोद्यमस्मासु कस्माद् विनिहितमुभयेषां पूर्वमीमांसकानाम् ।
अवगतिकृतमेतद् वाचकत्वं पदानामवगतिरियमिष्टा नश्वरी तत्क्षणेन ॥२४६॥

आनुपूर्वी की अनित्यता से भी वेद में अनित्यत्वापत्ति (शालिनी छन्द)

अवगतिगतमेवापेक्ष्य पूर्वापरत्वप्रतिनियममियं वो वेदता वेदराशेः ।
क्षणिकमभवदित्थं वेदशास्त्रं समस्तं कथमिव तदिदानीं वेदशास्त्रं प्रमाणम् ॥

वाक्यार्थ में पुरुषबुद्धिप्रवेशाभाव के कारण से भी वेद में स्वतःप्रमाणत्वाभाव (मालिनी छन्द)

पुरुषमतिनिवेशो नास्ति वेदप्रमेये विषय इति यदीष्टा मानता स्वप्रयुक्ता ।
सदृशमिदमिदानीं कारणं मानतायां परमपुरुषसृष्टे वेदशास्त्रेऽप्यभीष्टम् ॥२४८

उक्त समाधान का तुल्यत्व-उपपादन (मालिनी छन्द)

न हि खलु मतिपूर्वा ब्रह्मणःसृष्टिरिष्टा निगदितुरिव सृष्टिर्वेदविद्यासु नित्यम् ।
भवति तु पुनरेषा तस्य निश्श्वासकल्पा श्रुतिवचनमपीदं वस्तु वक्ति स्फुटं नः ॥

पुरुषरचितत्व ही अप्रमाण्य का प्रयोजक नही , अपितु अन्य कारण भी है (मालिनी छन्द)

अपि च पुरुषकर्मोद्भूतिकानीन्द्रियाणि स्फुटमवगमयन्ति स्वंस्वमन्यानपेक्षम् ।
विषयमिति हि दृष्टं तद्वदिष्टं च तस्मादिह किमपि न चोद्यं वाच्यमेतद् भवद्भिः ॥

ईक्षणपूर्वक जगत्सृष्टि के अन्तःपाती वेद में बुद्धिपूर्वकत्व आ जाने से अप्रमाण्यापत्ति का वारण

(मालिनी छन्द)

श्रुतिवचनमनेकं वक्ति तस्येक्षितृत्वं
मतिमदिति ततस्तन्नेष्यते कस्य हेतोः।
इति यदि मनुषे तन्मैवं मंस्थाः कुतश्चेत्
सकलकरणहीनं ब्रह्म नः शास्ति शास्त्रम् ॥२५१॥

श्रूयमाण ईक्षण की व्यवस्था (मालिनी छन्द)

चितिगतजडशक्तेराद्य ईष्टो विवर्तश्चितिनिकटनिवेशाल्लब्धदीप्तिर्जडोऽपि।
श्रुतिशिरसि निषण्णैरीक्षणं कथ्यते तन्न तु परमपदस्यापीक्षणं बुद्धिवृत्तिः ॥२५२।

प्रकारान्त से बुद्धिपूर्वकत्वाशङ्का का वारण वैशेषिक करते हैं (द्रुतविलम्बित छन्द)

ननु च डित्थडवित्थपदादिवत् सकलमेव तु सामयिकं पदम्।
अनुमिमीमहि पूर्वनिदर्शनादनुमितिर्भवतीति किमद्भुतम् ॥ २५३॥

उक्तानुमान में वेदान्तियों द्वारा बाधदोषप्रदर्शन (द्रुतविलम्बित छन्द)

अनादिवृद्धव्यवहारलक्षणे कथं प्रमाणे परिपन्थिनि स्थिते ।
गवादिशब्दे समयोऽनुमास्यते ऽवितथशब्दादिवदेतदुच्यताम् ॥२५४॥

वैदिक शब्दों में प्रथमसंकेतकर्ता पुरुष की सत्ता सिद्ध नही होती है (वंशस्थ छन्द)

सतः प्रमाणाभिमतेषु पञ्चसु प्रमाणमक्षादिषु किंचिदीक्ष्यते ।
न हीह संबन्धकृरि तेन तस्य वः खपुष्पकल्पत्वमभावमानतः ॥२५५॥

शब्द में अर्थबोधनसंकेतकर्ता पुरुष का अभावप्रदर्शन (वंशस्थ छन्द)

पुरोपलब्धो विषयो न दृश्यते यदा प्रमाणैरिह भावगोचरैः ।
तदा तु तत्रानुपलब्धिकारणं किमप्यभावादपरं हि मृग्यते ॥२५६॥

उक्तार्थ का स्पष्टीकरण (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

अत्यन्तानुपलब्धवस्तुनि पुनर्यः पञ्चकानुद्भव-
स्तस्याभावनिमित्तकः स न पुनस्तत्रापरं कारणम् ।
अन्विच्छन्ति मनीषिणो न हि शशेऽदृष्ट्वा विषाणास्तितां

तत्रादर्शनकारणान्तरपरा हेत्वन्तरान्वेषिणः ॥२५७॥

वैदिक शब्दों के अर्थ में संकेतकर्ता की सिद्धि नही हो पाती क्योंकि सम्बन्ध करना शक्य नही है (द्रुतविलम्बित छन्द)

विषमदुर्गमदेशसहस्रगः कथमिवैष नरः समयक्रियाम् ।
सकलशब्दतदर्थनिवेशिनीं वद विधातुमलं स्वयमेकलः ॥२५८॥

संकेत के निमित्त साधनों का भी अभाव (द्रुतविलम्बित छन्द)

अपि च किंचिदपि प्रतिपादकं न हि यदा पदमस्ति जगन्मुखे ।
अनभिधाय पदेन तदा कथं समयमेष करिष्यति शङ्करः ॥२५९॥

अभिनय द्वारा भी संकेत करना दुष्कर ही है (द्रुतविलम्बित छन्द)

अभिनयेन करिष्यति चेदयं समयमेतदतीव हि दुर्घटम् ।
न हि पदार्थसहस्रविमिश्रिते गवि तदाऽभिनयात् समयो भवेत् ॥२६०॥

अज्ञात अर्थों में भी शक्तिग्रह का होना असंभव ही है (द्रुतविलम्बित छन्द)

अपि च लौकिकमानबलाश्रयादधिगते विषये समयो भवेत् ।
अनुपलब्धसतत्त्वकदेवताप्रभृतिकार्थगतः समयः कुतः ॥२६१॥

संकेतकर्ता के स्मरणाभाव दशा में भी शब्दार्थ-सम्बन्ध ग्रहण अशक्य ही है (द्रुतविलम्बित छन्द)

अपि च कर्तुरनुस्मरणं भवेद् यदि चकार पुमान् समयं गिराम् ।
न खलु कर्तृगबुद्धिबलं विना व्यवहृतिर्भवति व्यवहर्तरि ॥२६२॥

उक्तार्थ का दृष्टान्त द्वारा स्पष्टीकरण (द्रुतविलम्बित छन्द)

न खलु पाणिनिपिङ्गलसंज्ञया व्यवहरन्ति तयोः स्मरणं विना ।
पदपदार्थपरस्परसङ्गतिं निरमिमीत ततो न जगद्गुरुः ॥२६३॥

कणादाभिमत ईश्वरानुमान की शङ्का (द्रुतविलम्बित छन्द)

मतिमतां प्रवरो वृषभध्वजः कणभुगादिमुनिप्रवरप्रभुः ।
ननु धरादिजगद्रचनाबलादनुमितोऽनवखण्डितशक्तिकः ॥२६४॥

उक्तानुमान में इष्टापत्ति (द्रुतविलम्बित छन्द)

अपि तु वैदिकवाङ्मनसातिगानुदितलुप्तचिदेकरसात् प्रभोः ।
अभवदानकदुन्दुभिनन्दनादमतिपूर्वमिदं सकलं जगत् ॥२६५॥

वेद में वाक्यत्व लिङ्ग द्वारा पौरुषेयत्वानुमान का सन्देह ।

ननु लौकिकवचसां नरमतिपूर्वकरचना परिदृश्यत इति वैदिकवचसामनुमिनुमः ।
वचनं श्रुतिशिरसामपि नरधीकृतरचनं वचनत्वत इव लौकिकजननिर्मितवचनम् ॥

उक्त रीति से विवक्षित ईश्वर-सिद्धि का अनुवादकर निराकरण ।

न च मादृशजनधीकृतरचनं श्रुतिवचनं
भवितुं क्षममिति वैदिकरचनाबलमिषतः ।
अनुमीयत इह शूलभृदिति चेदिदमशुभं
न हि वैदिकवचसामभिभवनास्पदमनुमा ॥२६७॥

अनुमान में बाध्यत्व एवं वैदिक वाक्य में बाधकत्व का उपपादन (वसन्ततिलका छन्द)

ब्रह्म स्वयंभु परमात्मपदस्य वेदो निःश्वासकल्प इति चापरमामनन्ति ।

वाक्यं तदस्य मतिपूर्वकताऽनुमानं सद्यो निरस्यति न चेदपबाधितं स्यात् ॥२६८॥

वेद की भाँति जगद्रचना भी अबुद्धिपूर्वक ही है (द्रुतविलम्बित छन्द)

सृजति रक्षति संहरति प्रभुः सकलमेव निविश्य नियच्छति ।
अमतिपूर्वमिति श्रुतिशासने वद कथं मतिपूर्वकताऽनुमा ॥२६९॥

वेदगत प्रामाण्य का प्रयोजक आप्तरचितत्व भी नहीं है (शालिनी छन्द)

आप्तोक्तत्वप्रत्यये मानभावो वेदस्यास्य ज्ञायते मानभावे ।
विज्ञाते सत्याप्तपूर्वत्वसिद्धिरित्यन्योन्यापाश्रयत्वप्रसङ्गः ॥२७०॥

वेद में स्वतःप्रामाण्य का निश्चय (शालिनी छन्द)

तस्मादेषा स्वयुक्तप्रमाणभावज्ञाना वेदविद्याभ्युपेया ।
प्रामाण्यं स्यात् स्वप्रयुक्तं च तस्या वस्तुस्थित्या ज्ञप्तिवन्नान्यतस्तत् ॥२७१॥

प्रवृत्तिरूप व्यवहार में भी स्वतस्त्व का उपपादन (शालिनी छन्द)

ज्ञप्त्युत्पत्त्योर्यद्वदेव प्रवृत्तावस्या युक्ता मानता स्वप्रयुक्ता ।

वेदोत्थाया बुद्धिवृत्तेर्न हीयमुत्पद्यान्यत् संविदे काङ्क्षतीति ॥२७२॥

वेदरचना में बुद्धिपूर्वकत्वानुमान निराकरणप्रसङ्ग का उपसंहार (शालिनी छन्द)

विश्वं विष्णोरुत्थितं नामरूपं निःश्वासादिप्रख्यमित्याह वेदः ।
यत्तत्तथ्यं वर्त्मना वर्णितेन तस्मान्मिथ्या पौरुषेयानुमानम् ॥२७३॥

वेद में स्वतःप्रामाण्यविरोध का निराकरण (सुन्दरी छन्द)

परिणामविवर्त्तयोरतः परिक्लृप्तावपि वेदगोचरः ।
न च चोद्यलवोऽपि विद्यते कथितेनैव पथाऽनपेक्षतः ॥२७४॥

प्रासङ्गिक आक्षेप का परिहार हो जाने के बाद पुनः तत्त्वम्. पदार्थ में हेय तथा उपादेय के विवेक का विभाग आवश्यक जान पड़ता है (उपजाति छन्द)

उपाधिमौपाधिकमान्तरं चिदाभासनं चित्प्रतिबिम्बकं च ।
चिद्बिम्बमेव चतुरःपदार्थान् विविच्य जानीहि तदर्थभाजः ॥२७५॥

त्वम् पदार्थबोध के लिए भी पूर्वोक्त चारों पदार्थों का विभाग ज्ञान आवश्यक है (उपजाति छन्द)

तथा त्वमर्थेऽपि चतुष्टयन्तद् विवेचनीयं निपुणेन भूत्वा ।
मतिश्चिदाभासनमेवमस्यां बिम्बन्तदीयं प्रतिबिम्बकं च ॥२७६॥

तत् पदार्थगत विभागोपन्यास (उपजाति छन्द)

उपाधिरज्ञानमनादिसिद्धमस्मिंश्चिदाभासनमीश्वरत्वम् ।
तदन्विता चित् प्रतिबिम्बकं स्यादुदीर्यते शुद्धचिदेव बिम्बम् ॥२७७॥

त्वम् पदार्थ में विवेचनीय चतुष्टय वस्तु का उपन्यास (उपजाति छन्द)

उपाधिरन्तःकरणं त्वमर्थे जीवत्वमाभासनमत्र तद्वत् ।
तदन्विता चित् प्रतिबिम्बमेवमनन्वितां तामिह बिम्बमाहुः ॥२७८॥

पूर्वोक्त विभागों में ग्राह्य एवं त्याज्य का वर्णन (उपजाति छन्द)

उपाधिना सार्द्धमुपाधिजन्यमौपाधिकं सर्वमवेहि मिथ्या ।
भागं मृषा चित्प्रतिबिम्बकेऽपि बिम्बं पुनः सत्यमशेषमेव ॥२७९॥

उक्त चारों विभागों का लौकिक दृष्टान्त से उपपादन (उपजाति छन्द)

अप्पात्रमप्पात्रगतत्वमेवमप्पात्रगोऽप्पात्रगताद् बहिश्च ।
दिवाकरो दिव्यवतिष्ठमानो न शक्यतेऽपोहितुमिद्धतेजाः ॥२८०॥

दार्ष्टान्त में उक्तार्थ का संघटन (उपेन्द्रवज्रा छन्द)

पुरं पुरस्थत्वमथो पुरस्थं पुराद् बहिः शुद्धमवस्थितञ्च ।
तथा परं ब्रह्म सुसूक्ष्मयाऽपि धिया निराकर्त्तुमशक्यमेव ॥२८१॥

ब्रह्म के निर्विशेषत्वप्रसङ्ग का उपसंहार (उपजाति छन्द)

न स्थानतोऽप्यस्ति परस्य तस्माद् विशेषयोगः परमार्थरूपः ।
स्वतः पुनर्दूरनिरस्तमेव परस्य तत्त्वस्य विशेषवत्त्वम् ॥२८२॥

युक्तयन्तर से ब्रह्म में निर्विशेषत्व का उपपादन(उपजाति छन्द)

श्रुतेश्च तात्पर्यमखण्डरूपे परे पुरस्तादुपवर्णितं च ।
ततोऽपि तस्याद्वयरूपतोऽन्यद्रूपान्तरं कल्पयितुं न शक्यम् ॥२८३॥

भेदवादी श्रुतियों का तात्पर्य स्वार्थबोध में नही है (उपजाति छन्द)

भेदश्रुतिस्त्वन्यपरा समस्ता समस्तवेदेषु न तत्पराऽसौ ।
अतत्परा तत्परवेदवाक्यैर्विरुद्ध्यमाना गुणवाद एव ॥२८४॥

अभेदबोधक वाक्यों का बाध भेदबोधक वाक्य नही कर सकते हैं (इन्द्रवज्रा छन्द)

न ह्यर्थवादा विधिभिर्विरुद्धा विध्यर्थसङ्कोचकरा भवन्ति ।
किंतु प्रधानानुगुणं यदेषामालंबनं तत् खलु कल्पनीयम् ॥२८५॥

उक्तार्थ में पूर्वमीमांसा का दृष्टान्त (उपजाति छन्द)

यथा ह्यजक्षीरविधेः समीपे यज्जर्तिलादेः परिकीर्तनं तत् ।
प्रधानसङ्कोचभयादपास्य स्वमर्थमासीद् गुणवाद एव ॥२८६॥

दार्ष्टान्त में उक्त दृष्टान्त की योजना (उपजाति छन्द)

एवं सतीहापि विरुध्यमानं वचो यदद्वैतपरैर्वचोभिः ।
तदस्तु गौणं यदि वा परस्य मायाप्रसूतद्वयवादि मुख्यम् ॥२८७॥

भेदश्रुति में वास्तविक भेद की अविषयता (उपजाति छन्द)

भेदश्रुतिः कल्पितमेव भेदमालम्ब्य मुख्यार्थवती भवित्री।
अतत्परा तत्परवाक्यभङ्गस्त्वितोऽन्यथा याति विना निमित्तम् ॥२८८॥

उपासनाविधायक श्रुति से अवगत सविशेष तत्त्व में मिथ्यात्व का उपपादन (द्रुतविलम्बित छन्द)

यदपि किंचिदुपासननिष्ठिताद् वचनतः प्रतिभाति परात्मनः।
सकलगन्धरसादिमयं वपुस्तदपि कल्पितभेदसमाश्रयम् ॥२८९॥

उक्तार्थ की विरुद्धकल्पना असङ्गत होगी (द्रुतविलम्बित छन्द)

न खलु निर्गुणवस्तुपरं वचः सगुणवाक्यविरोधनिमित्ततः।
स्वविषयादपसारयितुं बलादतिबलिष्ठपदान्वयमिष्यते ॥२९०॥

तत् पदार्थशोधन का उपसंहार (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

तस्मात्तत्परवेदवाक्यगतिभिर्न्यायेन चात्मप्रभं
सर्वद्वैतविवर्जितं विगलितध्वान्तं शिवं शाश्वतम्।
प्रत्यग्रूपमरूपगन्धरसकं तच्छब्दवाच्यं स्थितं

वाक्यार्थान्वयि लक्षितं भगवतो विष्णोः पदं गृह्यताम् ॥२९१॥

शोधित तत्पदलक्ष्यार्थ में प्रमाण (वंशस्थ छन्द)

अशब्दमस्पर्शमरूपमव्ययं तथाऽरसं नित्यमगन्धवच्च यत् ।
अनाद्यनन्तं महतः परं ध्रुवं निचायनीयं पदमीदृशं हरेः ॥२९२॥

अन्य मन्त्र भी उक्त लक्ष्यार्थबोध में प्रमाण है (शालिनी छन्द)

भोक्ता भोज्यं प्रेरितारं च मत्वा सर्वं प्रोक्तं त्रिविधं ब्रह्म मे तत् ।
जीवेशानौ सृज्यमानं जगच्च शुद्धं ब्रह्मेत्याह वेदान्तवाक्यम् ॥२९३॥

वाक्यार्थबोध की आवश्यकता (वंशस्थ छन्द)

पदार्थबोधेन कृतार्थता न ते मतिः परोक्षा हि पदार्थगोचरा ।
अतो महावाक्यनिबन्धनैव धीरबोधविच्छेदकरी भविष्यति ॥२९४॥

महावाक्य में अपरोक्षावबोध की प्रक्रिया (वसन्ततिलका छन्द)

स्वाध्यायधर्मपठितं निजवेदशाखावेदान्तभूमिगतमादरपालितं च ।

संन्यासिना परदृशा गुरुणोपदिष्टं साक्षान्महावचनमेव विमुक्तिहेतुः ॥२९५॥

महावाक्य द्वारा मोक्षप्रद अपरोक्षज्ञान की उत्पत्ति में प्रमाण (वसन्ततिलका छन्द)

नावेदविद्धि मनुते पुरुषं बृहन्तमित्याह वेदवचनं कथमन्यथैतत् ।
वाक्यान्तरं च कथमाह पुमांसमेनं साटोपमौपनिषदत्वविशेषणेन ॥२९६॥

पूर्वोक्त श्रुति में वेद एवं उपनिषद् शब्द से महावाक्य को ही ग्रहण करना चाहिए (पुष्पिताग्रा छन्द)

उपनिषदिति वेद इत्यपीदं समभिवदन्ति महावचो महान्तः ।
फलवदवगतिः स्यादन्तरेणैतदेकं वचनमिति न शक्यं वक्तुमित्यादरोऽस्मिन् ॥

यहाँ पर उपनिषद् एवं वेद शब्द की ही प्रधानता है (मालिनी छन्द)

उपनिषदिति शब्दो वेदशब्दश्च तस्माच्छ्रुतिशिरसि निविष्टो योज्यतामत्र वाक्ये ।
अपरमखिलमस्यैवाङ्गभूतत्वहेतोरिह समभिनिविष्टं तत्परो वाच्यमासीत् ॥

महावाक्य की साक्षात् तत्त्वबोधकता में ज्ञापक प्रमाण (शादूलविक्रीडित छन्द)

पित्रा तत्त्वमसीतिबोधनमनु स्पष्टं विजज्ञाविति

च्छान्दोग्ये यदवोचदेतदिह नो लिङ्गं भवेज् ज्ञापकम् ।
सर्वत्रैव महागिरामुपनिषच्छब्दो भवेद् ग्राहको
वेदश्चायमतोऽन्यदस्य निकटं तेनात्र वेदादिगीः ॥२९९॥

उपनिषद् शब्द की महावाक्य में प्रवृत्तिविधि का प्रदर्शन (द्रुतविलम्बित छन्द)

उपनिषद्वचसा परमात्मधीः सहजशक्तिवशेन निगद्यते ।
तदुपचर्य्य महागिरि वर्त्तते निकटभावमपेक्ष्य तु मुख्यगीः ॥३००॥

उक्तार्थ का स्पष्टीकरण (द्रुतविलम्बित छन्द)

उपनिषद्वचनाभिहितात्मधीनिकटवर्त्ति महागिरि मुख्यवत् ।
उपनिषद्वचनं तदवान्तरे वचसि गौणवदत्र विवक्ष्यते ॥३०१॥

पूर्वोक्त लिङ्ग का स्मारक प्रदर्शन (उपेन्द्रवज्रा छन्द)

यतो महावाक्यत एव पुत्रो विजज्ञिवानस्य पितुः सकाशात् ।
इति श्रुतं तेन स एव वेदस्तथा च सैवोपनिषच्च सिद्धा ॥३०२॥

व्यतिरेक मुख से भी उक्तार्थ का दाढर्च(उपेन्द्रवज्रा छन्द)

विना महावाक्यमतो न कश्चित् पुमांसमद्वैतमवैति जन्तुः ।
ततः पदार्थावगमान्न मुक्तिर्घटिष्यते तस्य परोक्षभावात् ॥३०३॥

पदार्थशोधनका उद्‌देश्य (उपेन्द्रवज्रा छन्द)

पदार्थबोधं परिहृत्य वाक्यं न शक्तमात्मानुभवावसानाम् ।
धियं समानेतुमपेक्षितत्वादतः स यत्नेन निरूपितोऽभूत् ॥३०४॥

वाक्यार्थ ज्ञान में अपेक्षित पदार्थ का प्रदर्शन (प्रहर्षिणी छन्द)

तच्छब्दादवगतमद्वितीयमासीत् प्रत्यक्त्वं समधिगतं त्वमित्यनेन ।
प्रत्यक्त्वं न खलु विनाऽद्वितीयमेवं नाद्वैतं भवितुमलं विना प्रतीचा ॥३०५॥

तर्क के समय प्रतीत होने वाले पदार्थों का अभेद महावाक्य द्वारा स्पष्ट होता है (वसन्ततिलका)

तर्कप्रतीतिसमयेऽपि तदद्वितीयं प्रत्यक् परिस्फुरति तत्प्रतिबिम्बितं सत् ।
वेदान्तवाक्यजनिताद्वयबुद्धिभूमिनिष्ठं पुनः स्फुटतरं भवतीति भेदः ॥३०६॥

तर्कजन्य एवं वाक्यजन्य बुद्धियों में वैलक्षण्यप्रदर्शन (द्रुतविलम्बित छन्द)

अधममध्यमशुद्धिनि दर्पणे परमशुद्धिनि चाननमात्मनः ।
तरतमक्रमतः प्रतिभासते तदिव तत्त्वमिह प्रतिपत्तिषु ॥३०७॥

बुद्धिगत तारतम्य में कारण प्रदर्शन (रथोद्धता छन्द)

एकदेशमुपलभ्य धर्मिणश्चैकदेशमपरं विजानते ।
धर्मिधीव्यवधिकारणादतो नानुमा ह्यनुभवाय वस्तुनः ॥३०८॥

गुरु की प्रेरणा से उक्तार्थ से भिन्न वस्तु की जिज्ञासा शिष्य के हृदय में होती है(शालिनी छन्द)

एवं तावत्तत्त्वमर्थौ विशुद्धौ बोद्धव्यं चेदन्यदप्यस्ति पृच्छ ।
यद्यद् बुद्धं तत्तदादाय तिष्ठेर्यच्चाबुद्धं तत्र चाधत्स्व चेतः ॥३०९॥

ग्रन्थकार शिष्य की प्रवृत्ति का प्रकार बतलाते हैं (स्रग्धरा छन्द)

बुद्ध्वा तत्त्वंपदार्थावनुभवविषयं कर्त्तुकामस्तदैक्यं
वाक्याद्वाक्यार्थनिष्ठाच्छ्रुतिशिरसिगतादञ्जसा तत्त्वमादेः ।

तच्छेषापन्नमस्मिञ्छ्रुतिशिरसि वचोजातमन्यद्यदस्ति
तस्येयत्ताबुभुत्साकुलितनिजमतिः पृच्छति स्मैष भूयः ॥३१०॥

शिष्य का प्रश्न (वसन्ततिलका छन्द)

अद्याप्यवान्तरवचः परिमाणबोधवैकल्यमस्ति मम तेन महावचोऽपि ।
वाक्यार्थबुद्धिमनुभूतिफलावसानां नोत्पादयत्यहरहः श्रुतमप्यशक्तेः ॥३११॥

उक्त प्रश्न का स्पष्टीकरण (द्रुतविलम्बित छन्द)

विधिमुखेन परस्य निवेदकं वचनजातमवान्तरसंज्ञितम् ।
यदपि भेदनिषेधमुखेन तत्परिमितिं प्रतिपादय मे प्रभो ॥३१२॥

गुरु द्वारा अवान्तर वाक्य की इयत्ता का निरूपण (द्रुतविलम्बित छन्द)

सकलवेदशिरःसु परात्मधीपरवचःसु परापरबोधतः ।
अपुनरुक्तपदान्युपसंहरन् परिमितिं स्वयमेव तु वेत्स्यसि ॥३१३॥

उक्तार्थबोध के लिए उपसंहार की आवश्यकता (द्रुतविलम्बित छन्द)

अपुनरुक्तपदानि विना यतो न परिपुष्कलबुद्धिसमुद्भवः ।
अपुनरुक्तपदानि ततस्ततस्त्वमुपसंहर तत्त्वबुभुत्सया ॥३१४॥

उक्त उपसंहार कार्य में प्रमाद हानिकारक होगा (द्रुतविलम्बित छन्द)

कुरु परापरवाक्यविवेचनं तदनु शब्दसमाहरणं कुरु ।
प्रियशिरःप्रभृतीनि च यत्नवानुपचितापचितानि परित्यज ॥३१५॥

उक्त विशेषणों के परित्याग में कारण का प्रदर्शन (द्रुतविलम्बित छन्द)

उपचितापचितानि न निर्गुणे प्रियशिरःप्रभृतीनि कदाचन ।
निपुणधीरपि कश्चन योजयेदपि तु कोशगुणाः कथिता ह्यमी ॥३१६॥

विधिवाक्यों के बाद निषेधवाक्यों की भी इयत्ता का प्रदर्शन (द्रुतविलम्बित छन्द)

इति वचःपरिमाणमुदीरितं विधिवचःसु निषेधगिरां शृणु ।
बहु निषेध्यममूष्वपि तेन तास्वपि समाहर पूर्ववदेव तत् ॥३१७॥

अनुपसंहार पक्ष में दोषापत्ति (द्रुतविलम्बित छन्द)

अपुनरुक्तनिषेध्यनिषेधकृद्बहुपदाहरणं कुरु तास्वपि ।
यदि पुनर्न समाहरणं भवेत् परिमितप्रतिषेधनमापतेत् ॥३१८॥

विधि-निषेध के उपसंहार में वैलक्षण्यप्रदर्शन (द्रुतविलम्बित छन्द)

विधिवचस्स्युभयं तु पदेपदे भवति संग्रहवर्जनरूपकम् ।
स्वकवपुःपरिकल्पितरूपयोर्न तु निषेधवचःसु तथा मतम् ॥३१९॥

उक्तार्थका प्रदर्शन (द्रुतविलम्बित छन्द)

यदिह किंचिदबोधसमुद्भवं तदखिलं प्रतिषेधति केवलम् ।
न तु क्रिमप्युपगृह्य परे पदे भगवतो निविशेत निषेधगीः ॥३२०॥

विधि-निषेध के वैलक्षण्यप्रसङ्ग का उपसंहार (द्रुतविलम्बित छन्द)

इति विशेष इह प्रतिपादितो विधिनिषेधगिरोरुभयोरपि ।
अपुनरुक्तपदाहरणं पुनर्विधिनिषेधवचःस्वविशेषतः ॥३२१॥

विधि-निषेध वाक्यों में कुछ अन्य वैलक्षण्य का प्रदर्शन (द्रुतविलम्बित छन्द)

श्रुतपदैरुपसंहृतिशालिभिर्यदवशिष्टनिषेध्यनिषेधनम् ।
तदपि पूर्यमिहाभिमतं श्रुतेः श्रुतपदान्युपलक्षणमेव हि ॥३२२॥

विधि-निषेध वाक्यों में कुछ अन्य वैलक्षण्य का प्रदर्शन (द्रुतविलम्बित छन्द)

समुपसंहृतशब्दसमन्वितैः श्रुतपदैर्विधिवाक्यगतैः पुनः ।
समुपलक्ष्यतया न परात्मनः किमपि रूपमिहाभ्यधिकं मतम् ॥३२३॥

विधि-वाक्यनिष्ठ पद अश्रुत के उपलक्षणत्वाभाव का कारण(द्रुतविलम्बित छन्द)

न खलु संश्रुतसंहृतशब्दयोरविषयः परमात्मन इष्यते ।
किमपि रूपममुत्र हि नास्ति नः किमपि मानमतो न तदस्ति नः ॥३२४॥

उपसंहार पक्ष में युक्ति का प्रदर्शन(द्रुतविलम्बित छन्द)

गुणतया हि पदानि परात्मनो विधिनिषेधवचः स्ववतस्थिरे ।
गुणगणो गुणितन्त्रतया गुणी भवति यत्र हि तत्र भवत्यसौ ॥३२५॥

पदों के उपसंहार-प्रसङ्ग का समापन (द्रुतविलम्बित छन्द)

विधिनिषेधवचः परिमाणतस्तव मया कथितं नयवर्त्मना ।
यदपरं तव वस्तु बुभुत्सितं तदिह नः पुरतः प्रकटीकुरु ॥३२६॥

अन्तरङ्ग-बहिरङ्ग साधनों के सम्बन्ध में शिष्य का प्रश्न (रथोद्धता छन्द)

अन्तरङ्गबहिरङ्गसाधने भेदतः कथय तद् बुभुत्सितम् ।
ज्ञानजन्मन इदं जिघृक्षितं हेयमेतदिति चोपपत्तिभिः ॥३२७॥

उक्त साधनों की उपयोगिता का स्थलप्रदर्शन (रथोद्धता छन्द)

अन्तरङ्गमपवर्गकाङ्क्षिभिः कार्यमेव यतिभिः प्रयत्नतः ।
त्याज्यमेव बहिरङ्गसाधनं यत्नतः पतनभीरुभिर्भवेत् ॥३२८॥

उक्त संदर्भ में आचार्य का उत्तर (रथोद्धता छन्द)

उच्यते शृणु विविच्य साधनं ज्ञानजन्मनि यदूचिवान् गुरुः ।
अन्तरङ्गबहिरङ्गभेदतः शब्दशक्तिमनुसृत्य वैदिकीम् ॥३२९॥

बहिरङ्ग- अन्तरङ्ग की परिभाषा (रथोद्धता छन्द)

यच्छ्रुतं विविदिषोदयाय तत् सर्वमेव बहिरङ्गसाधनम् ।
अन्तरङ्गमवगच्छ तत् पुनर्यत् परावगतिसाधनं श्रुतम् ॥३३०॥

बहिरङ्ग- अन्तरङ्ग की अन्य परिभाषा (रथोद्धता छन्द)

यद्धि कारकतयाऽवगम्यते दूरतस्तदिह साधनं धियः ।
अन्तरङ्गमखिलं तु तत् पुनर्व्यञ्जकं भवति यत् परात्मनः ॥३३१॥

उक्त साधनों में से संन्यासी साधक के लिये हेय-उपादेय का वर्णन (रथोद्धता छन्द)

कारकस्य करणेन तत्क्षणाद् भिक्षुरेष पतितो भवेद् यथा ।
व्यञ्जकस्य परिवर्जनात्तथा सद्य एव पतितो भवेदसौ ॥३३२॥

विविदिषन्ति यज्ञेन इत्यादि श्रुतियों का पाणिनी की दृष्टि से हेय-उपादेय सादनों का निरूपण (रथोद्धता छन्द)

प्रत्ययार्थविषयं हि कर्मणामुच्यते विविदिषेयुरित्यतः ।
न प्रकृत्यभिहितार्थवेदने वेदवाचि विनियोगशासनम् ॥३३३॥

विविदिषन्ति. इस श्रुति में धात्वर्थ वेदन की अप्रधानता का निम्न दो श्लोकों द्वारा उपपादन(रथोद्धता छन्द)

न[6] प्र[2]धानम[3]पहाय वे[4]दनेना[5]न्वयं व्र[7]जति क[1]र्मसाधनम् ।
स[3]ङ्गतिर्भ[4]वति वे[2]दनेच्छया वे[7]दनेन न[5] तु क[1]र्मणां क्व[6]चित् ॥३३४॥

न[1] प्र[4]धानमि[2]ह वे[3]दनं भ[5]वेत् प्र[5]त्ययार्थविषयां प्र[6]धानताम् ।
उ[8]त्ससर्ज भ[3]गवान्नि[7]रङ्कुशं ये[1]न पा[4]णिनिर[2]लङ्घ्यशासनः ॥३३५॥

बाधक रहने पर ही प्रकृत्यर्थ की प्रधानता का उपपादन(रथोद्धता छन्द)

प्र[4]त्यये स[3]ति न[5] चा[8]पवादकं [6]किंचिद[7]प्यु[9]दितवान[1]सौ मु[2]निः ।
ये[1]न त[2]त्र गु[5]णभावमु[7]द्वहेत् प्र[3]त्ययाभिहितम[4]र्थवस्तु न[6]ः ॥३३६॥

प्रत्ययार्थ में प्राधान्य का उपपादन (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

धा[5]तोः क[6]र्मण इ[7]त्यु[8]वाच भ[3]गवान् य[1]त् पा[4]णिनिस्तत् पु[2]न-
र्धा[3]त्वर्थस्य नि[5]वेदयत्य[3]भिमतं प्रा[4]धान्यमा[1]युष्मतः ।

किन्त्वार्थं न तु शब्दगम्यमवदत्तेनापि तद् योक्ष्यते
नोत्सर्गस्य विना निमित्तमपरं संकोचनं युज्यते ॥३३७॥

उक्तार्थ का स्पष्टीकरण(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

धातो कर्मण इत्युदीरणमिदं साधारणं दृश्यते
शाब्दार्थत्वविशेषसूचकतया न ह्यत्र सूत्रे पदम् ।
धात्वर्थस्य तु कर्मतावचनमत्रोच्चारितं केवलं
तत्त्वार्थेऽप्युपपद्यमानमधुना नोत्सर्गपीडाकरम् ॥३३८॥

पाणिनि की दृष्टि से शब्दतः इच्छा में ही प्राधान्य हैं(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

इच्छयामिति सूत्रकारवचनं प्रधान्यपक्षे भवे-
दिच्छार्थस्य समञ्जसं न खलु तत् सन्प्रत्ययार्थे गुणे ।
धात्वर्थे ननु सन् भवेदिति वदेदिच्छा गुणश्चेद् भवे-

दिच्छायामिति वक्ति तेन वदति प्राधान्यमिच्छागतम् ॥३३९॥

यागादि में बहिरङ्गत्व का निगमन (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

तस्मात् कर्म समस्तमेव तु भवेदिच्छाजनेः साधनं
शास्त्रेणोक्तमतः समस्तमपि तद् यत्नेन हेयं यतेः ।
द्रष्टव्यत्वमनूद्य साधनतया यत्तत् प्रतीचः श्रुतं
वेदान्तश्रवणादिकं भवति तत्कर्त्तव्यमावश्यकम् ॥३४०॥

सभी साधनों की उपयोगिता का उपपादन (वसन्ततिलका छन्द)

वेदान्तवाक्यमिह कारणमात्मबोधे हेत्वन्तराणि परिपन्थिनिबर्हणानि ।
यज्ञादिकानि दुरितं क्षपयन्ति बुद्धेस्तत्त्वंपदार्थविषयं तम उत्तराणि ॥३४१॥

तत्त्वार्थविषयक अज्ञान का विशेषोपपादन (वसन्ततिलका छन्द)

तत्त्वंपदार्थविषयं तम इत्यपीदमर्वागवस्थजनदृष्टिमपेक्ष्य गीतम् ।
अज्ञानमुत्तमदृशां पुनरेकमेव संसारमूलमपवर्गफला च विद्या ॥३४२॥

श्रवणादि साधनों की उपयोगिता का उपपादन(वसन्ततिलका छन्द)

[4]अज्ञानसंशयविपयर्यरूपकाणि [5]ब्रह्मात्मबुद्धिजननप्रतिबन्धकानि ।
[3]तत्त्वंपदार्थविषयाणि [6]निवर्त्तयन्ति [1]ह्यावृत्तिमन्ति [2]मननश्रवणादिकानि ॥३४३॥

श्रवण एवं मनन के स्वरूप का प्रदर्शन (रथोद्धता छन्द)

[2]शब्दशक्तिविषयं [3]निरूपणं [1]युक्तितः [5]श्रवण[6]मुच्यते [4]बुधैः ।
[2]वस्तुवृत्तविषयं [3]निरूपणं [1]युक्तितो [4]मनन[5]मि[6]त्युदीर्यते ॥३४४॥

निदिध्यासन के स्वरूपका निरूपण (रथोद्धता छन्द)

[1]चेतसस्तु [2]चितिमात्रशेषता [3]ध्यान[4]मि[6]त्यभिवदन्ति [5]वैदिकाः ।
[3]अन्तरङ्ग[2]मिद[1]मित्थ[4]मीरितं [1]तत् [3]कुरुष्व [2]परमात्मबुद्धये ॥३४५॥

वार्तिककार की दृष्टि से निदिध्यासन का स्वरूपोपपादन (मालिनी छन्द)

[1]श्रवणमननबुद्ध्योर्जा[2]तयोर्य[3]त् [4]फलं [5]तन्नि[6]पुणमतिभि[8]रुच्चै[9]रुच्यते [7]दर्शनाय ।
[6]अनुभवनविहीना [1][2]यै[3]व[4]मे[5]वेति [7]बुद्धिः [1]श्रुतिमननसमाप्तौ [8]तन्नि[9]दिध्यासनं हि ॥३४६॥

श्रवणादि अन्तरङ्ग साधनों का फलितार्थप्रदर्शन(वसन्ततिलका छन्द)

पूर्वाण्यदृष्टपरिपन्थिनिबर्हणानि दृष्टं हरन्ति च विरोधिनमुत्तराणि ।
वाक्यं निरस्तसकलप्रतिबन्धकं सदात्मानमद्वयमखण्डमबुद्धमाह ॥३४७॥

ज्ञान ऐहिक और जन्मान्तरीय भी देखा जाता है (प्रहर्षिणी छन्द)

यज्ञादिक्षपितसमस्तकल्मषाणां पुत्रादित्रयगतसङ्गवर्जितानाम् ।
संशुद्धे पदयुगलार्थतत्त्वमार्गे प्रायेणोद्भवति हि जन्मनीह विद्या ॥३४८॥

प्रायशः कथन का स्पष्टीकरण (वसन्ततिलका छन्द)

अत्रैव जन्मनि भवेदपवर्गदायि वाक्यप्रसूतमनुभूतिफलावसानम् ।
ज्ञानं निवारकनिमित्तवशादमुष्मिन् जन्मन्यपीति वचनादवगम्यते हि ॥३४९॥

प्रतिज्ञात वचन का प्रदर्शन (शालिनी छन्द)

ज्ञानोत्पत्तिं वामदेवस्य गर्भे श्रुत्वा विद्वः साधनं प्राच्यमस्य ।
योगभ्रष्टस्मृत्यवष्टम्भतोऽपि ज्ञातव्यं तत् साधनं प्राच्यमस्य ॥३५०॥

चित्रादि याग की भाँति श्रवणादि का फल बतलाते हैं (वसन्ततिलका छन्द)

चित्रादिवद् भवति साधनजातमस्य ज्ञानप्रसूतिकरमित्यवगच्छ सर्वम् ।
अभ्यग्रशुष्यदखिलौषधिकस्य पुंसो वृष्टिप्रदेष्टिरधिकारवशादिहैव ॥३५१॥

अन्तरङ्ग- बहिरङ्ग साधनों का कुछ अन्य वैशिष्ट्यप्रदर्शन (प्रमिताक्षरा छन्द)

बहिरङ्गसाधनमशेषगुरोः परमेश्वरस्य चरणाम्बुजयोः ।
नियमात् समर्पितमशेषमघं विनिहन्ति बुद्धिनिलयं सुमहत् ॥३५२॥
न तथान्तरङ्गमुपलब्धिजनेरुपकारकं शमदमप्रभृति ।
तदनुष्ठितं परमहंसजनैः परमात्मतत्त्वमुपलम्भयति ॥३५३॥

भगवद्गीता के द्वारा पूर्वोक्त भेद को प्रमाणित किया जाता है(प्रमिताक्षरा छन्द)

भगवाननादिनिधनः कृपया हरिरेतदाह जगदेकहितः ।
सकलं समर्प्य मयि युक्तमनाः कुरु कर्म शुद्धिकरमित्यसकृत् ॥३५४॥
न तथान्तरङ्गफलसंन्यसनं क्वचिदूचिवानत इदं विदितम् ।

अनपेक्ष्य तत्फलपरित्यजनं परमात्मनिश्चयफलं तदिति ॥३५५॥

उक्तार्थ की युक्ति से भी सिद्धि (द्रुतविलम्बित छन्द)

अपि च बन्धनहेतुतया श्रुतं सकलमीक्षणकौशलशालिनः।
भवति शुद्धिकरं न च बन्धकृद् भवति कर्म तथा घटते हि तत् ॥३५६॥
यदिह साधनमात्मधियः श्रुतं न च फलान्तरहेतुतया श्रुतम्।
शमदमादिकमत्र तु कौशलं किमपि काङ्क्षितमस्ति न सिद्धये ॥३५७॥

साधन निरूपण का उपसंहार (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

उक्तं साधनजातमत्र सकलं विद्यासमुत्पत्तये
यस्मिन् कर्मणि वैदिकेन विधिना नुन्नः परिव्राजकः।
कर्तृत्वाद्युपमर्दनेन भवता विद्यानुकूलात्मना
कर्त्तव्यं तदशेषतस्तदनु ते विद्या विपाकं व्रजेत् ॥३५८॥

श्रवणादि साधन में अधिकार का वर्णन(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

वानप्रस्थगृहस्थनैष्ठिकजनैरन्यैश्च वर्णाश्रमैः
कर्मव्यध्वनिषेवितं भवति वै जन्मान्तरे पाचकम् ।
विद्यायाः श्रवणादिलक्षणमिदं नह्येतदेषां क्वचित्
शास्त्रेण प्रतिषिद्धमीक्षितमिदं शूद्रस्य दृष्टं यथा ॥३५९॥

संन्यासी प्रायशः इसी जन्म में मुक्त हो जाता है (वसन्ततिलका छन्द)

सर्वश्रुतिस्मृतिवचोभिरयं परिव्राड् मुण्डः शुचिः परमहंस इति प्रसिद्धः ।
ज्ञानाय साधनधनेषु नियुज्यमानः प्रायेण बुद्धिपरिपाकमवाप्स्यतीह ॥३६०॥

अन्य आश्रमियों के लिए ज्ञानोत्पत्ति का प्रकारवर्णन (वसन्ततिलका छन्द)

जन्मान्तरेषु यदि साधनजातमासीत् संन्यासपूर्वकमिदं श्रवणादिरूपं ।
विद्यामवाप्स्यति जनः सकलोऽपि यत्र तत्राश्रमादिषु वसन्न निवारयामः ॥३६१॥

ज्ञान के साधनों के अनुष्ठान में संन्यास का नियम श्रुतिसम्मत है (उपजाति छन्द)

वेदान्तविज्ञानसुनिश्चितार्थाः संन्यासयोगाद्यतयः शुद्धसत्त्वाः ।
ते ब्रह्मलोकेषु परान्तकाले परामृताः परिमुच्यन्ति सर्वे ॥३६२॥

उक्तार्थ में इतिहास प्रमाण (उपजाति छन्द)

नैतादृशं ब्राह्मणस्यास्ति वित्तं यथैकता समता सत्यता च ।
शीलं स्थितिर्दण्डनिधानमार्जवं ततस्ततश्चोपरमः क्रियाभ्यः ॥३६३॥

उपरति का फल प्रदर्शन (अनुष्टुप छन्द)

यतोयतो निवर्त्तते ततस्ततो विमुच्यते ।
निवर्त्तनाद्धि सर्वतो न वेत्ति दुःखमण्वपि ॥३६४॥

वैराग्यजनक वचन का उदाहरण (उपजाति छन्द)

किं ते धनेन किमु बन्धुभिरेव वा ते किं ते दारैर्ब्राह्मण यो मरिष्यसि ।
आत्मानमन्विच्छ गुहां प्रविष्टं पितामहास्ते क्व गताः पिता च ॥३६५॥

चतुर्विध पुरुषार्थ का असाधारण कारण (इन्द्रवज्रा छन्द)

[1]अर्थस्य [2]मूलं [3]निकृतिः[4]क्षमा [5]च [1]कामस्य [2]रूपं [3]च [4]वयो [5]वपु[6]श्च ।
[1]धर्मस्य [2]यागादि [3]दया [4]दम[5]श्च [1]मोक्षस्य [2]सर्वोपरमः [3]क्रियाभ्यः ॥३६६॥

इति श्रीमच्छुरेश्वराचार्य शिष्य श्री सर्वज्ञात्ममुनिविरचित
संक्षेपशारीरकस्य तृतीयोऽध्यायः समाप्तः ।

(पूर्वाध्यायस्थ ८११ श्लोकैर्मिलित्वा ११७७ श्लोकाः)

******

****

**

*

ॐ अथ चतुर्थोऽध्यायः

शिष्य के मन में ब्रह्मविद्या की फलविषयक जिज्ञासा (रथोद्धता छन्द)

[1]उक्तसाधनसमुद्भवा [2]सती [5]किं [7]प्रयच्छति [6]फलं [4]मुमुक्षवे ।
[3]प्रत्यगात्ममति[1]रत्र [3]मे [4]मन[5]स्यर्थिता [6]समुपजायते[2]ऽधुना ॥१॥

ब्रह्मज्ञान को अपना फल देने में सहकारी कारण के विषय में जिज्ञासा (रथोद्धता छन्द)

[1]किं [2]निरस्तसहकारिकारणा [3]केवलै[4]व [6]फलम[7]र्पयेन् [5]मतिः ।
[2]बाह्यसाधनसहायसम्पदा [1]वा[3]ऽन्विता [4]फलविधायिनी [5]भवेत् ॥२॥

उक्त शङ्काओं के समाधान के लिए शिष्य का नम्र निवेदन (रथोद्धता छन्द)

[2]एत[3]द[1]प्यह[4]मवैतु[5]मुत्सहे [2]निर्णयं [3]कुरु [1]कृपाविधेयधीः ।
[1]एतदे[2]व [3]हि [4]दयालुलक्षणं [5]य[6]द्विनेयजनबुद्धिवर्द्धनम् ॥३॥

शिष्य के प्रथम प्रश्नका उत्तर (रथोद्धता छन्द)

[1]उच्यते [9]न [2]तमसो [3]निवृत्तितः [5]किंचि[10]दस्ति [8]परमात्मधीफलम् ।

अन्यदल्पमपि साधनान्तरं न व्यपेक्ष्य फलदायिनी च धीः ॥४॥

शिष्य के द्वितीय प्रश्न का उत्तर (रथोद्धता छन्द)

शुक्तिकाविषयबुद्धिजन्मनः शुक्तिकागततमोनिवृत्तितः ।
नापरं किमपि दृश्यते फलं नापरं च सहकारि कारणम् ॥५॥

उक्तार्थ का लौकिक दृष्टान्त द्वारा समर्थन(रथोद्धता छन्द)

एवमात्मनि तमोनिवृत्तितो नान्यदस्ति परमात्मधीफलम् ।
नाप्यपेक्ष्य सहकारिकारणं किंचिदात्ममतिरर्पयेत् फलम् ॥६॥

प्राणादि विद्या की अपेक्षा ब्रह्मविद्या में वैलक्षण्यप्रदर्शन(स्रग्धरा छन्द)

ब्रह्मज्ञानं प्रमाणं भवति दृढमिदं नात्र कश्चिद्विवादो
ब्रह्मात्मा चैकरूपो न च बहुरसकस्तत्परत्वाच्छ्रुतीनाम् ।
एवं सत्यद्वयात्मप्रमितिफलमिह द्वैतमूलापनुत्ति-
र्ब्रह्मज्ञानापनुत्तेरधिकमपि फलं किंचिदस्ति प्रमाणात् ॥७॥

ब्रह्मज्ञान में सापेक्षता का निराकरण (द्रुतविलम्बित छन्द)

निरभिसंधि समर्पितमच्युते विहितमिष्टफलादपि निर्गतम् ।
यदपि कर्म तदप्यवधीरितं यदि धिया न तया परमर्थ्यते ॥८॥

समुच्चयवाद का निराकरण (पुष्पिताग्रा छन्द)

समविषमसमुच्चयो न युक्तो न हि जगदस्ति धियः प्रसूतिकाले ।
क्व नु बत विहितः क्रियासमूहः कथमिव तत्र समुच्चयोपपत्तिः ॥९॥

ज्ञान एवं कर्म में वैयधिकरण्य प्रदर्शन(मालिनी छन्द)

अपि च परमहंसस्त्यक्तसर्वैषणः सन्ननुभवफलविद्यां साधनैर्यद्यवाप ।
कथमिव पुनरत्र प्राप्तिरस्ति क्रियाया भवतु तदपवर्गो विद्ययैवैकयाऽस्य ॥१०॥

ज्ञान को कर्माङ्ग मानने में प्रमाण का अभाव(वसन्ततिलका छन्द)

यस्य प्रयोगविधिरस्ति परिग्रहीता द्वारैदमर्थ्यविनिवेदकमस्य सर्वम् ।
श्रुत्यादिमानमिह नास्ति तदात्मबुद्धौ तस्मादियं भवतु नः पुरुषार्थभूता ॥११॥

अविद्यानिवृत्ति का स्वरूपवर्णन(सुन्दरी छन्द)

[3]सदसत्सदसद्विकल्पितप्रतिपक्षैकवपु[2]र्निवर्त्तनम् ।
[1]तमसो[5]ऽभ्युपगम्यते[4]ऽन्यथानुपपत्त्यापतनैकहेतुतः॥१२॥

पञ्चम प्रकार पक्ष में दोषाभाव का वर्णन (सुन्दरी छन्द)

[3]सदसत्सदसद्विकल्पितप्रतिबद्धा [5]न [6]भवन्ति [1]वर्णिते ।
[2]परमात्मतमोनिवर्त्तने[4]ऽनुपपत्तिप्रतिभासवृत्तयः ॥१३॥

उक्त पक्ष में इष्टसिद्धिकार की सम्मति(सुन्दरी छन्द)

[1]चितिभे[2]दमभेदमे[3]व [4]वा [5]द्वयरूपत्व[6]मथो [7]मृषात्मताम् ।
[8]परिहृत्य [9]तमोनिवर्त्तनं [10]प्रथयन्ते खलु [11]मुक्तिकोविदाः ॥१४॥

उक्तार्थ में सिद्धान्त पक्ष का उपपादन(सुन्दरी छन्द)

[1]अथ [2]वा [4]चितिरे[5]व [3]केवला [6]वचनोत्पादितबुद्धिवर्त्मना ।
[8]परमात्मतमोनिवृत्तिगीर्विषयत्वं [9]समुपै[7]त्युपाधिना ॥१५॥

उक्तार्थ की पुष्टि के लिए लौकिक दृष्टान्त(सुन्दरी छन्द)

शुक्तिकाविषयबुद्धिजन्मना प्रत्यगात्मचितिरेव केवला।
शुक्तिकागततमोनिवृत्तिरित्युच्यते दृतिहरिः पशुर्यथा ॥१६॥

दृतिहरि दृष्टान्त का स्पष्टीकरण(रथोद्धता छन्द)

वाचको हरणकर्त्तुरिष्यते शब्द एष हि दृतेर्मनीषिभिः।
केवलं तु पशुता निमित्ततां बाह्यतः स्थितवती व्रजेदियम् ॥१७॥

दृष्टान्त में उक्तार्थ का समीकरण(रथोद्धता छन्द)

एवमेव तु तमोनिवृत्तिगीः शुक्तिकाविषयबुद्धिजन्मना।
बाह्यतः स्थितवतैव हेतुना प्रत्यगात्मचिति वर्त्ततेऽञ्जसा ॥१८॥

उक्तार्थ को दृष्टान्त में घटाते हैं (वसन्ततिलका छन्द)

उत्पन्नशुक्तिमतिरात्मचितिर्यथैव शुक्तेस्तमोहतिरिति प्रतिपन्नमेवम्।
आत्मापि जातनिजबुद्धिरबोधहानिरुच्येत केवलचिदेकरसो न पूर्वम् ॥१९॥

दृतिहरि शब्दप्रयोग में पशुत्व उपाधिमात्र ही है(मालिनी छन्द)

दृतिहरणकरत्वं पुंसि चान्यत्र चेदं
दृतिहरिरिति लोके नोच्यते वर्त्तमानम् ।
अनधिकविकलं सत् कथ्यते तत् पशुस्थं
दृतिहरिरिति शिष्टैर्बाह्यहेतोः पशुत्वात् ॥२०॥

वर्तमान संदर्भ में पूर्वोक्त युक्ति का प्रदर्शन(मालिनी छन्द)

अयमपि परमात्मा प्रत्यगात्मस्वभावो
वचनजनितबुद्धेः प्राक् स्वरूपे स्थितोऽपि ।
न खलु विषयभावं ध्वान्तविच्छेदवाचो
व्रजति हि तदुपाधेर्बुद्धिवृत्तेरभावात् ॥२१॥

अज्ञानदाह शब्द में चैतन्यार्थप्रतिपादकत्व की उपपत्ति(वसन्ततिलका छन्द)

अज्ञानदाह इति नैकपदं समासात् पूर्वोत्तरे खलु पदे पदतामुपेतः।
ज्ञानोदयं तटगतं समुपाददानस्तस्मात्तमोहतिरवोऽत्र चिति प्रवृत्तः ॥२२॥

समास के कारण ही दृतिहरि शब्द में विशिष्टार्थ बोधकता है (वसन्ततिलका छन्द)

अत्राप्यसौ दृतिहरिः पशुरित्यखण्डः शब्दो न खल्वभिमतोऽवयवार्थयोगात् ।
धातुश्च वाचकतया हरतिः प्रसिद्धो हीन्प्रत्ययश्च हरतेः परतः प्रसिद्धः ॥२३॥

आज्ञाननिवृत्तिकालनिर्णय (वसन्ततिलका छन्द)

उद्यन्निरस्यति तमश्च तदुद्भवं च वेदावसानवचनादथ चोदितः सन् ।
ऐकात्म्यवस्तुविषयोऽनुभवोऽत एव कंचित् सहायमनपेक्ष्य निवर्त्तकोऽसौ ॥२४॥

दीपस्तमस्तिरयतीह भवन्नुत स्विद् भूत्वा क्षणव्यवधिमात्रमपेक्ष्य नात्र ।
कश्चिद् विवादपदवीमुपयाति वादी तद्वत् प्रतीच्यवगतौ तमसोऽपहन्त्याम् ॥२५॥

मुख्य सिद्धान्त का कथन(वसन्ततिलका छन्द)

उत्पत्तिरेव हि धिया स्वफलं प्रदातुमाकाङ्क्षिता न च ततोऽपरमर्थनीयम् ।

यत् कारकं तदिह काङ्क्षति जन्ममात्रादन्यन्न धीः किमपि काङ्क्षति जन्म लब्ध्वा ॥२६॥

उक्तार्थ में महर्षि जैमिनि की सम्मति (वसन्ततिलका छन्द)

प्रत्यक्षसूत्र इदमेव निवेदयिष्यन्न्यायेन जैमिनिरुवाच विदग्धबुद्धिः।
सत्संप्रयोग इति तत्र हि बुद्धिजन्मशब्दस्य नान्यदिह किंचन कृत्यमस्ति ॥२७॥

अज्ञान के निर्वतक ज्ञान की निवृत्ति का कारणप्रदर्शन(वसन्ततिलका छन्द)

वेदान्तवाक्यजनिता मतिवृत्तिरेवमुत्पत्तितः सकलमेव भवार्णवाम्बु ।
पीत्वा स्वयं च खलु शाम्यति दग्धलोहपीतं यथाम्बु चितिमेव तु शोषयित्वा ॥

मोक्ष में कूटस्थनित्यत्व का उपपादन(उपजाति छन्द)

कूटस्थनित्यैव तु मुक्तिरेषा विद्याफलत्वादिह यद्यदेवम् ।
तत्तत्तथा दृष्टमशेषमेव यथा हि शुक्त्यादिपदार्थसंवित् ॥२९॥

दृष्टान्त में साध्यवैकल्यशङ्का का निराकरण (उपजाति छन्द)

जन्मादिषड्भावविकारहीना शुक्त्यादिवस्तूपनिविष्टसंवित् ।

न प्रागभावाद्यनुभूतिरस्याः स्वतः प्रमाणादपि युज्यते हि ॥३०॥

उक्तार्थ का स्पष्टीकरण (उपजाति छन्द)

अबुद्ध्यमानो न हि संविदं तत्संबन्धि किंचित् प्रतिपत्तुमीशः ।
न बुद्ध्यमानोऽपि तथा तदा हि न संविदेषा विषयत्वहेतोः ॥३१॥

व्यतिरेकव्याप्ति द्वारा भी मोक्ष में कूटस्थत्व की सिद्धि (इन्द्रवज्रा छन्द)

जन्या न मुक्तिर्घटते कुतश्चिद् विद्याफलत्वादिति पूर्वहेतोः ।
यद्यद्धि जन्यं जगति प्रसिद्धं तत्तन्न विद्याफलमम्बरादि ॥३२॥

मोक्ष के स्वरूप में कर्म का उपयोगाभाव (उपजाति छन्द)

मोक्षस्वरूपो विफलक्रियोऽसौ विद्याफलत्वादिह यद्यदेवम् ।
तत्तत्तथा दृष्टमशेषमेव यथैव रज्ज्वादितमोनिवृत्तिः ॥३३॥

कर्मसापेक्ष सायुज्यादि में मोक्षत्वाभाव का प्रदर्शन(गाथा)

सायुज्यादि विवादगोचरपदं निःश्रेयसं नो भवेत्

कार्यत्वादिह यद्यदीदृशमदो निःश्रेयसं नेक्षितम् ।
यद्वत् कुड्यघटादि तादृशमिदं तस्मादिदं तादृशं
युक्तं कल्पयितुं न तद्विसदृशं तादृङ् न दृष्टं यतः ॥३४॥

प्रकारान्तर से भी मोक्ष में कूटस्थनित्यत्व की सिद्धि (द्रुतविलम्बित छन्द)

सदसदुद्भवनं न विमुक्तता सदसदुद्भवनानुपपत्तितः ।
सदसतोर्निशनं न विमुक्तता सदसतोर्निशनानुपपत्तितः ॥३५॥

कल्पित सालोक्यादि के जन्म में भी मोक्षत्व का अभाव (द्रुतविलम्बित छन्द)

न च तमोमयजन्म विमुक्तता न हि तदिष्टमनिष्टतरं हि तत् ।
न खलु कल्पितजन्मविमुक्तता समुपगच्छति तद्वितथं यतः ॥३६॥

तमोमय प्रपञ्च के विलय में भी मोक्ष व्यवहार की सिद्धि (द्रुतविलम्बित छन्द)

अथ तमोमयविश्वविकल्पनाविलयनात्मकमभ्युपगम्यते ।

सकलदूषणजातविवर्जितं तदिह मोक्षपदं न निवार्यते ॥३७॥

ज्ञान से निःशेष अज्ञान का नाश (शार्दूलविक्रीडित छन्द)

सम्यग्ज्ञानविभावसुः सकलमेवाज्ञानतत्सम्भवं
सद्यो वस्तुबलप्रवर्त्तनमरुद्व्यापारसन्दीपितः ।
निर्लेपेन हि दन्दहीति न मनागप्यस्य रूपान्तरं
संसारस्य शिनष्टि तेन विदुषःसद्यो विमुक्तिर्ध्रुवा ॥३८॥

जीवन मुक्तिबोधक श्रुति की व्यवस्था (शालिनी छन्द)

जीवनमुक्तिप्रत्ययं शास्त्रजातं जीवनमुक्ते कल्पिते योजनीयम् ।
तावन्मात्रेणार्थवत्त्वोपपत्तेः सद्यो मुक्तिः सम्यगेतस्य हेतोः ॥३९॥

जीवन मुक्ति का समर्थन(शालिनी छन्द)

यद्वा विद्व ेचरं योजनीयं तस्याविद्यालेशवत्त्वोपपत्तेः ।
तस्याभीष्टा निर्निमित्ता निवृत्तिर्यद्वा विद्यासंततिर्हेतुलेशम् ॥४०॥

अविद्यालेश का स्वरूपोपवर्णन (शालिनी छन्द)

जीवनमुक्तिव्यापृतेः प्रापको यस्तस्याविद्यालेशगन्धादिभाषाः ।
नाविद्याया नापि भागस्य तस्यास्तस्मिन् पक्षे दुर्घटत्वाद् विमुक्तेः ॥४१॥

जीवनमुक्त के व्यवहार का साधक अविद्यालेश है(शालिनी छन्द)

गन्धच्छायालेशसंस्कारभाषा विज्ञातव्या भाष्यकारीयतन्त्रे ।
स्वाविद्याया बाधितायाः प्रतीतिः पौर्वापर्येणार्थमालोच्य बुद्ध्या ॥४२॥

अविद्या की बाधितानुवृत्ति में अनुभव प्रमाण (शालिनी छन्द)

जीवनमुक्तिस्तावदस्ति प्रतीतेर्द्वैतच्छाया तत्र चास्ति प्रतीतेः ।
द्वैतच्छायारक्षणायास्ति लेशस्तस्मिन्नर्थे स्वानुभूतिः प्रमाणम् ॥४३॥

बद्धावस्था एवं मुक्तावस्था में वैलक्षण्य प्रदर्शन (शालिनी छन्द)

ब्रह्मात्मत्वं सान्तरायं पुरस्ताद् बोधोत्पत्तौ ध्वस्तमोहान्तरायम् ।
यद्यप्येवं द्वैतलेशानुवृत्तेः प्रत्यक्षत्वान्मोहलेशोऽभ्युपेयः ॥४४॥

प्रारब्ध के नष्ट होते ही जीवनमुक्त पुरुष विदेह कैवल्य को प्राप्त करता है(शालिनी छन्द)

तस्माज्जीवन्मुक्तरूपेण विद्वानारब्धानां कर्मणां भोगसिद्धयै ।
स्थित्वा भोगं ध्वान्तगन्धप्रसूतं भुक्त्वाऽत्यन्तं याति कैवल्यमन्ते ॥४५॥

उक्तार्थ में श्रुति प्रमाण का प्रदर्शन(उपजाति छन्द)

क्षरं प्रधानममृताक्षरं हरः क्षरात्मानावीशते देव एकः ।
तस्याभिध्यानाद्योजनात्तत्त्वभावाद् भूयश्चान्ते विश्वमायानिवृत्तिः ॥४६॥

निर्गुण ब्रह्मवित् पुरुष का लोकान्तर में गमन नहीं होता (शालिनी छन्द)

ब्रह्मादीनामस्ति मुक्तिः श्रुतिभ्यस्तेषामेषा नार्चिराद्या गतिर्वः ।
तस्मादस्या निर्गुणब्रह्मविद्यासम्बन्धित्वं नैषितव्यं भवद्भिः ॥४७॥

ज्ञानी का लोकान्तर में गमन नहीं होता (शालिनी छन्द)

प्राणोत्क्रान्तिर्नास्ति मूर्द्धन्ययैषां नाडया तस्माद् यत्र यत्रैव विद्या ।
तत्रैव स्यान् मुक्तिरित्यभ्युपेयं गत्युत्क्रान्ती तेन विद्यान्तरेषु ॥४८॥

कर्म ज्ञान का अन्तरङ्ग साधन नहीं है (शालिनी छन्द)

देवादीनां नास्ति कर्माधिकारो विद्या तेषां केवला मुक्तिहेतुः ।
पारंपर्यात् कर्मणामुक्तहेतोर्विद्याङ्गत्वं सर्ववर्णाश्रमाणाम् ॥४९॥

पूर्वोक्त अर्थ में प्रमाण का प्रदर्शन(शालिनी छन्द)

पारंपर्यं शुद्धिहेतुत्वहेतोर्यज्ञादीनां श्रूयते स्मर्यते च ।
साक्षादेषां मोक्षहेतुत्वमेवमन्विच्छन्तोऽप्यागमान्न प्रतीमः ॥५०॥

सकल शास्त्रार्थ का उपसंहार (द्रुतविलम्बित छन्द)

इति बहुश्रुतभाषितमुच्चकैः श्रुतिशिरोवचनानुगतं महत् ।
समुपदिष्टमिदं कृपया मया प्रियमतीव हितं च मुमुक्षवे ॥५१॥

शिष्य का कृतकृत्यता का प्रदर्शन (वसन्ततिलका छन्द)

एवं समन्वयविरोधनिरासविद्या निष्पत्तिसाधनफलानि गुरोः क्रमेण ।
विज्ञाय वेदफलमात्मनि सर्वमेव पश्यन्नुवाच कृतकृत्यमतिः स शिष्यः ॥५२॥

शिष्य की अनुभवोक्ति(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

विद्याविग्रहमग्रहेण पिहितं प्रत्यञ्चमुच्चैस्तरा-
मुत्कृष्योत्तमपूरुषं मुनिधिया मुञ्जादिषीकामिव ।
कोशात् कारणकार्यरूपविकृतात् पश्यामि निःसंशयं
क्वासीदस्ति भविष्यति क्व नु गतः संसारदुःखोदधिः ॥५३॥

शिष्य का जीवनमुक्ति के अनुभव का उद्गार (वसन्ततिलका छन्द)

पश्यामि चित्रमिव सर्वमिदं द्वितीयं तिष्ठामि निष्कलचिदेकवपुष्यनन्ते ।
आत्मानमद्वयमनन्तसुखैकरूपं पश्यामि दग्धरशनामिव च प्रपञ्चम् ॥५४॥

अद्वैत की अनुभूति प्रत्यक्षरूप में मुझे हो रही है(वसन्ततिलका छन्द)

अद्वैतमप्यनुभवामि करस्थबिल्वतुल्यं शरीरमहिनिर्ल्वयनीव वीक्षे ।
एवं च जीवनमिव प्रतिभासमानं निःश्रेयसोऽधिगमनं च मम प्रसिद्धम् ॥५५॥

ब्रह्मविद्या का प्रभाव प्रदर्शन(वसन्ततिलका छन्द)

अद्वैतबाधकमभून् मम यद् द्वितीयमद्वैतमस्य बत बाधकमेव जातम् ।
मोहाद् द्वितीयमपबाधकमस्य विद्यासामर्थ्यतो द्वयनिबर्हणमद्वितीयम् ॥५६॥

वर्तमान एवं अतीत पर ज्ञानी का आश्चर्य प्रकट करना (वसन्ततिलका छन्द)

आश्चर्यमद्य मम भाति कथं द्वितीयं नित्ये निरस्तनिखिलाशिवचित्प्रकाशे ।
आसीत् पुरेति किमिमाः श्रुतयो न पूर्वं येन द्वितीयमभवत्तिमिरप्रसूतम् ॥५७॥

शिष्य द्वारा गुरु का महत्व प्रदर्शन(वसन्ततिलका छन्द)

त्वत्पादपंकजसमाश्रयणं विना मे सन्नप्यसन्निव परः पुरुषः पुरासीत् ।
त्वत्पादपद्मयुगलाश्रयणादिदानीं नासीन्न चास्ति न भविष्यति भेदबुद्धिः ॥५८॥

अचार्य के इस महान उपकार का प्रत्युपकार सम्भव नहीं है (वसन्ततिलका छन्द)

यस्मात् कृपापरवशो मम दुश्चिकित्सं संसाररोगमपनेतुमसि प्रवृत्तः।
त्वत्पादपङ्कजरजः शिरसा दधानस्त्वामाशरीरपतनादहमप्युपासे ॥५९॥

ग्रन्थ-निर्माण का प्रयोजनकथन (उपजाति छन्द)

[7]संक्षेपशारीरकमेवमे[6]तत् [4]कृतं [5]परिव्राजकमुक्तिहेतुः ।
[1]गुरुप्रसादात् [3]परिलभ्य [2]तत्त्वं [4]त्रयीशिरस्तत्त्वनिवेदनाय ॥६०॥

ग्रन्थकार द्वारा स्वरचित कृति का ईश्वरचरणों में समर्पण (मालिनी छन्द)

[2]अविरलपदपङ्क्तिः [6]पद्मनाभस्य [4]पुण्या
[7]चरणकमलधूलिग्राहिणी [5]भारती[3]यम् ।
[9]घनतर[10]मुपघातं [8]श्रेयसः [11]श्रोतृसंघात्
[12]सुरसरिदि[13]व [14]सद्यो [15]मार्ष्टु [1]माङ्गल्यहेतुः ॥६१॥

विनम्रभाव से गुरु का स्मरण एवं ग्रन्थरचना का कालनिर्देश(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

[1]श्रीदेवेश्वरपादपङ्कजरजः [2]संपर्कपूताशयः
[3]सर्वज्ञात्मगिरा[4]ङ्कितो [5]मुनिवरः [8]संक्षेपशारीरकम् ।
[15]चक्रे [6]सज्जनबुद्धिवर्द्धनमि[7]दं [12]राजन्यवंशे नृपे

[10]श्रीमत्य[11]क्षतशासने [9]मनुकुलादित्ये [13]भुवं [14]शासति ॥६२॥

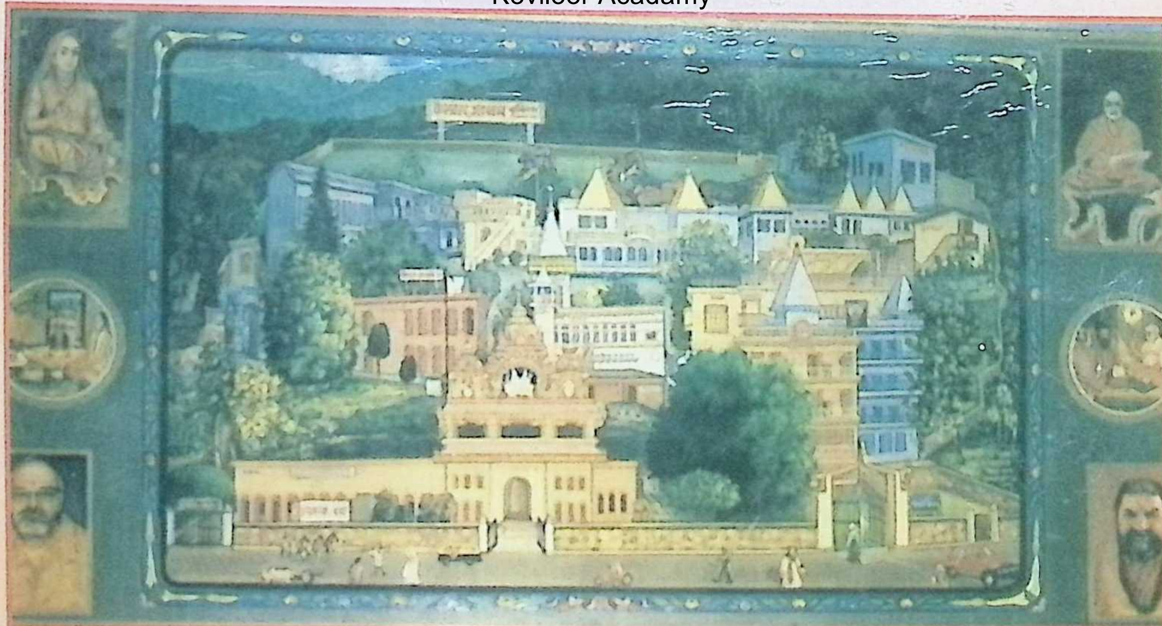
अन्त में परमेश्वर को नमस्काररूप मङ्गलाचरण (प्रमाणिका वृत्त छन्द)

[1]भुजङ्गमाङ्गशायिने [2]विहङ्गमाङ्गगामिने ।
[3]तुरङ्गमाङ्गभेदिने [5]नमो [4]रथाङ्गधारिणे ॥६३॥

इति श्रीमच्छुरेश्वराचार्य शिष्य श्रीसर्वज्ञात्ममुनिविरचित
संक्षेपशारीरकस्य चतुर्थोऽध्यायः समाप्त ।

(पूर्वाध्यायस्थ ११७७ श्लोकैर्मिलित्वा १२४०श्लोकाः)

******
****
**
*



नूतन संस्कृत कैलास आश्रम, ऋषीकेश